मक़सूद इब्राहीमबेकोव

भाई आख़िर भाई होता है

मक़सूद इब्राहीमबेकोव

भाई आख़िर भाई होता है

तीन लघु उपन्यास

राडुगा प्रकाशन · मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.
चमेलीवाला मार्केट, एम. आई. रोड, जयपुर-302001

अनुवादक : सुधीर कुमार माथुर
चित्रकार : लरीसा दावात्स

Максуд Ибрагимбеков

И НЕ БЫЛО ЛУЧШЕ БРАТА

Повести

На языке хинди

Maksood Ibrahimbekov

THERE WAS NEVER A BETTER BROTHER

Stories

In Hindi

सोवियत संघ में प्रकाशित

ISBN 5-05-000973-1

विषय सूची

भाई आख़िर भाई होता है
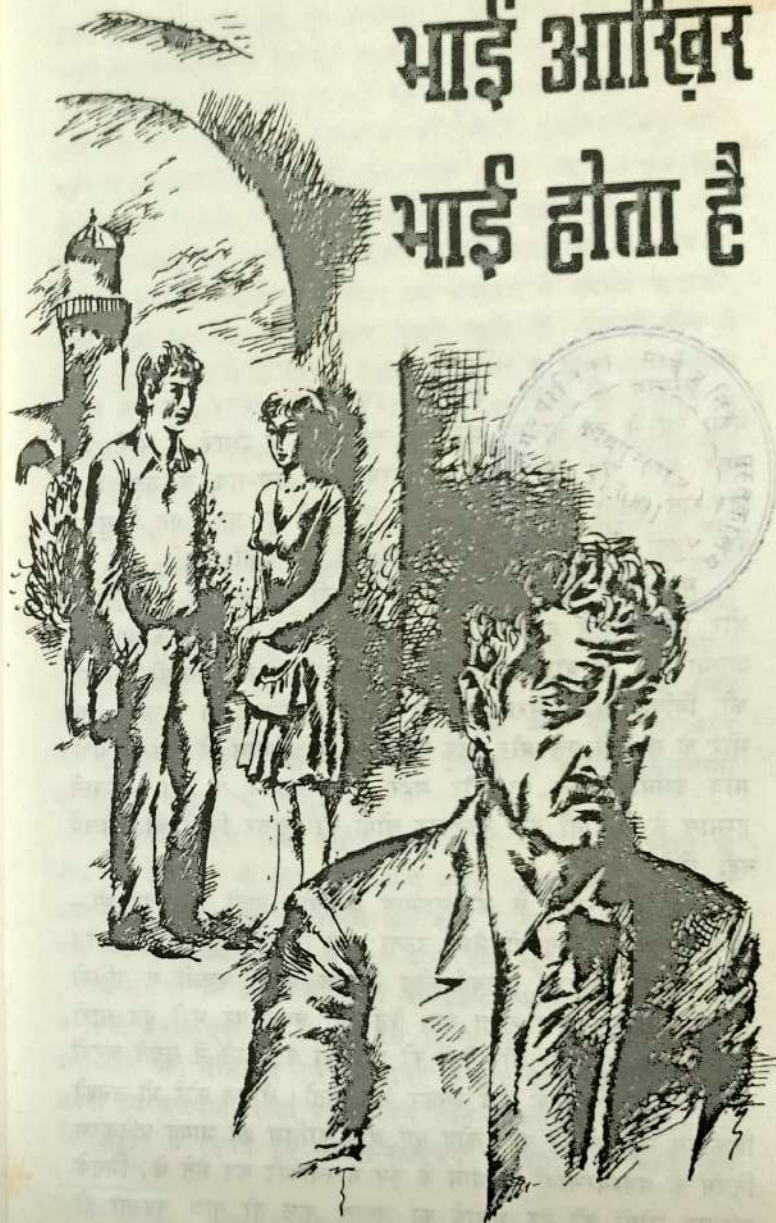
हम्माम की सफ़ेद, दुमंजिला इमारत की सपाट छत पर गहरे गेरुए रंग से रंगे बॉयलर शहर के उस छोरवाले इलाक़े में सबसे ऊंचे नज़र आते थे। उनकी एकरस घरघराहट आस-पास के महल्लों में दिन-रात गूंजती रहती थी और उस समय भी हर घर-आंगन में सुनाई देती रहती थी, जब तेज़ उत्तरी हवा चल रही होती थी।

महल्लेवाले बॉयलरों के शोर के आदी हो चुके थे और उसकी ओर प्रायः ध्यान नहीं देते थे। हम्माम पिछली शताब्दी के मध्य में बनाया गया था और महल्लेवालों की अब पांचवीं या छठी पीढ़ी जीवन की विविध आशा-निराशाओं और विजयों-पराजयों से जूझती उसी शोर के साये में पल और पनप रही थी। यह हम्माम ही वहां का एक-मात्र दर्शनीय स्थल था और शहर के कोने-कोने से यहां आनेवाले हम्माम के शौक़ीनों और जानकार लोगों को देखकर किसी को आश्चर्य नहीं होता था।

शुरू में हम्माम से जो एकमात्र असुविधा होती थी, वह थी – आकाश में काले स्तम्भों जैसा उठता हुआ उसका धुआं, जो नीलाभ पृष्ठभूमि में अनवरत परिवर्तनशील विचित्र वृक्षों, पशुओं व पक्षियों का रूप धारण करता रहता था। तेज़ हवा चलने पर भूरी धुंध सारी गलियों पर छा जाती और पेड़ों की शाखाओं व अहाते में सूखते कपड़ों पर चिकनी कालिख के धब्बे बनकर जम जाती। लेकिन कोई भी उसकी शिकायत नहीं करता था। लोग धुएं और कालिख को शायद प्रतिकरण नियम के अवश्यम्भावी परिणाम के रूप में स्वीकार कर लेते थे, जिसके अनुसार लोगों को हर भलाई का अन्ततः कुछ तो मूल्य चुकाना ही

होता है। महल्ले में ऐसी ही मनोवृत्ति के लोग रहते थे। इसलिए हर वासी यह समझता था कि ऐसे हम्माम में, जहां गुलाबी व हलके नीले रंग के संगमरमर से सजे हुए बड़े और छोटे प्राइवेट कमरे हैं, तालाब तथा हॉल में उन्हीं रंगों की संगमरमर की बेंचें हैं, कुशल मालिश करने-वाले व हम्मामिनें हैं, साथ ही जहां तड़के से देर गये रात तक नीबू-वाली चाय मिलती है, धुआं व कालिख कोई ख़ास माने नहीं रखते हैं। कुछ समय बाद पानी गरम करने के लिए काले तेल के स्थान पर गैस का इस्तेमाल किया जाने लगा। अब बॉयलरों से लगभग पारदर्शी, तपती हवा की तेज़ धाराएं ऊपर उठती रहती थीं, जिनके बीच में तीव्र तकनीकी प्रगति के युग में उद्यमशील लोगों के हिस्से में आनेवाले लाभों का तुरन्त मूल्यांकन करने में समर्थ आस-पास के महल्लों के तेज़ लड़कों द्वारा उड़ायी जानेवाली पतंगें नाचती, ठुमकती रहती और जल भी जाती थीं।

जलील-मुअल्लिम का अहाता हम्माम की पीछेवाली दीवार से लगा हुआ था। इलाक़े के श्रेष्ठ अहातों में उनके अहाते की गिनती की जाती थी। जलील-मुअल्लिम की मेहनत से वह सदा हरा-भरा और साफ़-सुथरा रहता था। अगर किसी को ज्ञात न हो कि यह एक शहरी घर का आंगन है, तो उसे कोई भी सहज ही अप्शेरोन* के समुद्र तट पर स्थित बंगला समझ सकता था, जहां आम तौर पर अंगूर भी होते हैं और अंजीर भी और अधिक उत्साही व जानकार बाग़बानों के यहां तो अनार तथा शहतूत भी।

गर्मियों के एक दिन जलील-मुअल्लिम पौ फटे अपने अहाते के बीच खड़े बॉयलरों के शोर से अप्रसन्न नज़र आ रहे थे, जो, उनके ख़याल से, आज उन्हें एकाग्रचित्त नहीं होने दे रहा था और पिछली रात को आये सपने को याद करने में बाधा डाल रहा था।

लगता था कि उनकी चेतना में जो धुंधली स्मृतियां घूम रही थीं, वे किसी प्रकार एक सूत्र में नहीं बंध पा रही थीं। सपना नीरस और अरुचिकर था, लेकिन वे उसे हर हालत में याद करना चाहते थे और अपनी इस कष्टदायी इच्छा पर नियंत्रण रखने में असमर्थ थे।

अहाते में टहलते हुए जलील-मुअल्लिम ने जाफ़री से नीचे गिर

---

* अप्शेरोन – काकेशस के पूर्वी छोर पर स्थित प्रायद्वीप।

गयी अंगूर की बेल की एक शाखा को अन्यमनस्कता से उसके ऊपर टांग दिया और अंगूर के एक गुच्छे को चिड़ियों द्वारा क्षत-विक्षत किया देखकर नाराज़गी से सिर हिलाया। फिर वे सागबाड़ी के पास गये, जिसके कुल बीस वर्गमीटर में कई क्यारियां बनी हुई थीं। जलील-मुअल्लिम इन क्यारियों में मौसम के मुताबिक़ प्याज, टमाटर, खट्टा पालक, सलाद और तरह-तरह के फूल उगाते थे।

उनके विचार से खाने से ठीक पहले तोड़ी गयी ताज़ा सब्ज़ियां शरीर के लिए विशेष रूप से उपयोगी होती हैं, और सागबाड़ी में काम करने तथा मिट्टी पर नंगे पांव चलने से भी बहुत लाभ होता है, क्योंकि मनुष्य के शरीर में दिन भर में संचित हुई विद्युत पैरों के तलवों की चमड़ी में से होकर ज़मीन में चली जाती है। एक परिचित चिकित्सा-सहायक ने उन्हें एक बार बताया था कि नगरवासी के शरीर में संचित होनेवाली विद्युत डामर के विलगन प्रभाव के कारण बाहर निकल ही नहीं पाती है।

जलील-मुअल्लिम पर इस बात का बहुत असर पड़ा था। अब वे अक्सर कल्पना किया करते थे कि बिजली कैसे ठोस ढेलों के रूप में उनके दिल के आस-पास और सिर में जमा होकर उनकी सारी नसों पर दबाव डालती रहती है। उन्हें दिन भर इस चीज़ का स्पष्ट अनुभव होता रहता था। इसलिए वे शाम को सागबाड़ी में टहलते समय हर बार जब अपने पैर मिट्टी में गहरे धंसाते, तो उन्हें अपने तन का भारी तनाव ज़मीन में जाने से राहत महसूस होती। वैसे उनकी पत्नी और बेटी का विचार था, जो वे अपनी समझदारी के कारण कभी खुले तौर पर व्यक्त नहीं करती थीं, कि अगर कुछ आवेश अदृश्य रूप से मिट्टी में चला भी जाता है, तो भी जलील-मुअल्लिम के शरीर में इतनी विद्युत या विज्ञान के लिए अज्ञात कोई अन्य ऊर्जा हर हालत में बाकू के आस-पास की सारी सागबाड़ियों व बगीचों की मिट्टी के लिए भी आवश्यकता से अधिक प्रचुर मात्रा में बची रहती है।

सागबाड़ी की देख-भाल में अधिक समय नहीं लगा। मिट्टी काफ़ी नम थी, क्योंकि वे सागबाड़ी में रात होने से पहले शाम को ही हमेशा पानी छोड़ देते थे। जलील-मुअल्लिम अहाते के अंदरूनी हिस्से में लगे शहतूत के पेड़ के पास गये, जिसके तले दो मधुमक्खी-पेटियां रखी थीं। इन मधुमक्खी-पेटियों पर जलील-मुअल्लिम को गर्व था। उन्हें यक़ीन था

कि उस इलाके और सारे शहर में यही दो मधुमक्खी-पेटियां थीं। अभी तक उन्हें किसी ने यह नहीं बताया था कि बाकू में कोई और भी मधुमक्खियां पालता है।

वे बड़ी प्रसन्नता से दोनों पेटियों से आनेवाली एकरस भनभन को ध्यान से सुन रहे थे। मधुमक्खियां जाग चुकी थीं, पर अभी उड़ी नहीं थीं। अभी भोर का समय था और वे सूर्योदय पूर्व के उस क्षण की प्रतीक्षा कर रही थीं, जब उष्ण वायु निद्रामग्न, अधखिले पुष्पों पर जमा हुई ओस की शीतलता का स्थान ले लेती है, उनके संसार की जीवनदायी वायु, गरमाती सोंधी मिट्टी, पेड़ों की छाल, मधु, पुष्पों व मनुष्य तन की उष्म सुगंधों से सिक्त वायु...

जलील-मुअल्लिम मधुमक्खियों का बहुत आदर करते थे। वे जब भी इन उद्यमी, निस्स्वार्थ प्राणियों को देखते, तो उनके हृदय में शान्तिदायी प्रसन्नता व कोमल भावनाओं का ज्वार उमड़ आता। उन्हें बातचीत में जब भी मैत्री व विवेकपूर्ण व्यवहार का कोई ठोस उदाहरण देने की आवश्यकता होती, तो वे सदा मधुमक्खियों का ही उल्लेख करते। उन्हें पूरा विश्वास था कि अगर लोग मधुमक्खियों से अपने घनिष्ठ मित्रों की खातिर अपनी सर्वाधिक मूल्यवान वस्तु का त्याग करना सीख लें, तो इससे उनको बहुत ही लाभ होगा। वे पारस्परिक आदर या स्वार्थ से होनेवाली हानियों के उदाहरण देते समय भी मधुमक्खियों की चर्चा करते थे। ऐसी परिस्थितियों में मधुमक्खियों का उल्लेख करना उन्हें आश्चर्यजनक रूप से विश्वासोत्पादक तथा उपयुक्त प्रतीत होता था। मानवीय कृतघ्नता के बारे में बहस छिड़ने पर मधुमक्खियों का उदाहरण देना उन्हें कठिन लगता था। पर ऐसी बातचीत के बाद उन्हें अपने जीवन के आदर्शों के औचित्य पर गर्व की अनुभूति होती थी और उन्हें विश्वास था कि जीवन में मधुमक्खियों के छत्तों या अलग-अलग मधुमक्खियों का आगे निरीक्षण करते रहने पर उन्हें उनकी ऐसी लाक्षणिक विशिष्टताएं मिल जायेंगी, जिनसे उनमें कृतघ्नता जैसे भयानकतम दुर्गुण के अभाव की अन्तिम रूप से पुष्टि हो जायेगी।

उनका इरादा अपनी इस खोज को भविष्य में ऐसी ही बहसों में उदाहरण के रूप में उपयोग करने का था, जिनके लिए वे अपने आप को विशेष रूप से योग्य समझते थे और उपयुक्त अवसर मिलते ही छेड़ने को तैयार रहते थे।

जलील-मुअल्लिम का काकेशियाई काला, दोगला कुत्ता बरामदे की सीढ़ियों के पास अपनी गद्दी पर सो रहा था। जैसे ही वे उसके पास आकर खड़े हुए, उसने आंखें खोलीं और निर्लिप्त भाव से उनकी ओर देखकर फिर झपकी लेने लगा।

जलील-मुअल्लिम दबे पांव बरामदे पर चढ़कर रसोई में गये। उन्होंने फ्रिज में से ओझड़ी का एक टुकड़ा निकाल उसे रकाबी में डाला और उसमें रोटी मिलाकर अहाते में ले आये। कुत्ता अलसाता हुआ उठा और धीरे-धीरे रकाबी के पास आया। जलील-मुअल्लिम की बहुत इच्छा हुई कि कुत्ता दुम हिलाये। आखिर हर स्वामी को यह आशा करने का अधिकार है कि उसका कुत्ता खाना दिये जाने पर दुम हिलाये। कुत्ते ने दो बार मुंह मारकर रकाबी खाली कर दी और पास में रखी अपनी चिलमची में से लपलप पानी पीकर फिर अपनी गद्दी पर जा लेटा। जलील-मुअल्लिम ने उसे ठोकर मारी, जिसके कारण उसने आदतन धीरे से प्यां-प्यां करके भागने की कोशिश की, पर बेकार, वह रस्सी से बंधा हुआ था। वे उसे पालने के लिए जब घर लाये थे, तो वह नन्हा-सा पिल्ला ही था। शुरू में वे उसे दूध पिलाते रहे थे, पर बाद में उसके लिए नियमित रूप से बाज़ार से छिछड़े व हड्डियां खरीदने लगे थे। वे उसे साफ़-सुथरा रखते थे और उसके प्रति वितृष्णा पर नियंत्रण रखकर हफ़्ते में एक बार नहलाते भी थे।

कुत्ते को पालने के मामले में उन्होंने बहुत गम्भीरता से काम लिया था और अपनी राय में वे उसके साथ आवश्यकतानुसार ही सख्ती बरतते थे। वे उसे बेकार सज़ा नहीं देते थे। केवल तभी ऐसा करते, जब वह निषिद्ध स्थान पर टट्टी-पेशाब कर देता या रात के वक़्त अचानक भौंकने लगता। तब जलील-मुअल्लिम इस बात का ध्यान रखते हुए उसे एक खास कोड़े से पीटते थे कि उसके रीढ़ या किसी और हड्डी को कोई नुक़सान न पहुंचे। कुत्ता जब कभी कोई क़ाबिले तारीफ़ काम करता, तो वे उसे अनदेखा न करते और उसे थपथपाकर मिसरी देते।

उन्होंने उसे इसी तरह से पाल-पोसकर बड़ा कर लिया था। विरले ही कोई कुत्ते का इतना खयाल रखता होगा, खास तौर से ऐसी दोग़ली नस्ल के कुत्ते का। लेकिन सबसे ज़्यादा अखरनेवाली बात यह थी कि कुत्ता हालांकि जलील-मुअल्लिम का नमक खा-खाकर लगभग भेड़िये

जैसे ढील-ढौल का हो गया था, पर अपने मालिक को मालिक ही नहीं मानता था।

जैसे ही उसे जलील-मुअल्लिम के घर लौटने की आहट सुनाई देती, वैसे ही वह झाड़ियों में या कहीं और भी दूर जा छिपता और वहीं से उदास-उदास आंखों से उन्हें देखता रहता। लेकिन इस बात पर कोई ध्यान नहीं देता था। न घरवाले और न ही पड़ोसी। जब तक रखवाला कुत्ता अपना काम ठीक से करता रहे, किसी को क्या परवाह कि वह कैसी नजरों से देखता है। लेकिन जलील-मुअल्लिम को बुरा लगता, क्योंकि कुत्ता सब के प्रति प्यार जताता, हर किसी के आगे दुम हिलाता, श्वानसुलभ प्रसन्नता प्रकट करता हुआ लार टपकाता, पर उन्हें देखते ही बुत बन जाता। उन्होंने उसे कल ही जंजीर से बांधा था, क्योंकि वह पूरी शाम अहाते के दूसरे हिस्से में रहा था। उसे रोटी खिलाओ या न खिलाओ, पर उनके भाई के हिस्से में जाने दो। जलील-मुअल्लिम ने कई बार यह जताया कि मालूम नहीं वह कहां है, सीटियां बजायीं, पूरे ज़ोर से आवाज़ें दीं: 'बाज़दार!' पर कुत्ते ने कोई परवाह ही नहीं की। उसे लाने के लिए उन्हें अपने बेटे को भेजना पड़ा।

जले पर नमक छिड़कने का काम तो कुत्ते ने तब किया, जब लड़का उसे पट्टे से पकड़कर लाने लगा। वह अपनी चारों टांगें जमाकर अड़ गया, पट्टा गले में से निकलते-निकलते बचा। ऐसा लगा, मानो लड़का उसे घर के बजाय बूचड़खाने में घसीटे ले जा रहा हो। जलील-मुअल्लिम ने उसे कोड़े से अच्छी तरह पीटा, ताकि वह अपनी आदत से बाज़ आ जाये। बाज़दार गुर्राया, उसके गले में ज़ोरदार घरघराहट भी हुई, पर वह काटने की हिम्मत नहीं कर सका। जलील-मुअल्लिम की बहुत इच्छा हुई कि बाज़दार उन्हें काट ले, जिससे उसे पीट-पीटकर मार डालने का बहाना मिल जाये।

जलील-मुअल्लिम ने उसे एक ठोकर और मारी और अपना सामान लाने घर में चले गये। उनके हम्माम जाने का वक़्त हो गया था। मधुमक्खियों का अवलोकन करते समय वे जिस शान्ति का अनुभव कर रहे थे, उसका कुछ भी शेष न रहा। 'यह भाग-भागकर दूसरे हिस्से में जाता है, तो ज़ाहिर है, यह उसी रंडी की करतूत है, वह जानबूझकर उसे ललचाती है, ताकि मुझे बुरा लगे, दूसरे कुत्ते को तो डण्डा मारकर भगा देती है,' जलील-मुअल्लिम ने सोचा। न जाने कैसे,

उनकी पतलून एक सीढ़ी से निकली हुई कील में फंस गयी और झटके से छुड़ाने से उसके पायंचे की मोहरी फट गयी। जलील-मुअल्लिम को तन-मन में एक अज्ञात, अविवेकपूर्ण क्रोध की लहर दौड़ती अनुभव हुई। वे दांत पीसते हुए घर में गये और हथौड़ा लाकर निकली हुई कील को ठोंकने लगे। हथौड़े की पहली चोट रविवार के उस उषा-काल में व्याप्त पूर्ण निस्तब्धता के लिए कान बहरे कर देनेवाली, पूर्णतः असंगत और भयानक सिद्ध हुई। फिर दूसरी चोट गूंज उठी... दोनों चोटों के बीच का अन्तराल निद्रामग्न लोगों के लिए शायद आवश्यकता से अधिक लम्बा था। पहली चोट के बाद के क्षणिक-से प्रतीत होनेवाले अन्तराल में शायद किसी को भूकंप या आणविक युद्ध का दुःस्वप्न दिखाई दे गया होगा, पर साथ ही दूसरी चोट ने उसकी स्मृति से यह दृश्य लुप्त करके उसके स्थान पर ऐसा घाव कर दिया होगा, जिसके ठीक और निशान ग़ायब होने से पहले वह न जाने कितनी बार नींद में चौंककर उठा होगा और उसका सारा बदन चिप-चिपे, ठण्डे पसीने से लथपथ हो गया होगा... जलील-मुअल्लिम कील पर तब तक पूरे ज़ोर से हथौड़ा मारते रहे, जब तक कि उसका सिरा लकड़ी में धंसने के कारण बननेवाला छोटा-सा छेद समतल नहीं हो गया। हर चोट के साथ उन्हें लग रहा था कि उस अल्पज्ञ चिकित्सा-सहायक के रहस्यमय सिद्धान्त के अनुसार क्रोध उनके गले, सीने और कंधे के सुन्न हो गये बायें हिस्से को धीरे-धीरे छोड़कर तने हुए हाथ से होता हुआ कलाई व गरम हथेली से निकलकर हथौड़े के सिरे में जा रहा है।

आवाज़ चारों ओर के कई महल्लों में गूंजती रही। हर चोट के साथ आवाज़ का कांपता-सा छल्ला उत्तरोत्तर ऊपर उठता और उड़ान के साथ फैलता गया। चोटें तेज़ी से पड़ने लगीं और एक के बाद दूसरे ऊपर उड़ते छल्लों के कारण तितली पकड़ने का एक भीमकाय जाल-सा बनता गया, जिसके नीचे, बीचोंबीच वह व्यक्ति बैठा हुआ था, जो उस सुन्दर व शान्त सुबह को सबसे पहले जाग गया था। जलील-मुअल्लिम पलटकर देखे बिना सुन और महसूस कर रहे थे कि उनके भाई के हिस्से में भयभीत हुए लोग कैसे उचककर उठ रहे हैं, वे जानते थे कि अगर उन्होंने मुड़कर देखा, तो उन्हें विरली, हरी बाड़ में से आश्चर्य व प्रश्नात्मक दृष्टि से अपनी ओर देख रहे भाई

का चेहरा नज़र आ जायेगा।

जलील-मुअल्लिम ने मुड़कर देखने के बजाय अपने घर के दरवाज़े पर दृष्टि डाली। उनकी नज़र सोने के कपड़े पहने दरवाज़े पर खड़ी पत्नी की नज़रों से टकरा गयी। उन्होंने हथौड़ा रख दिया, सलाम कहा और साफ़ कपड़े लेने के लिये उसके पास से धीरे-धीरे निकल गये।

"मैं सीढ़ी ठीक कर रहा था," जलील-मुअल्लिम ने कमरे में से बैग लेकर निकलते हुए पत्नी से कहा। "एक सीढ़ी भी ग़ायब हो, तो बहुत ख़तरनाक हो जाता है। मेरे ख़याल में मुझे अपनी सीढ़ी ठीक करने का पूरा अधिकार है। और इसके लिए सुबह का वक़्त ही सबसे अच्छा है। मुझे इसका इंतज़ार करने की कोई ज़रूरत नहीं कि दोपहर तक सोते रहने के आदी लोग कब उठते हैं। क्या मेरे हथौड़ा चलाने से किसी को परेशानी हुई है?" जलील-मुअल्लिम ने पूछा।

"नहीं, बिलकुल नहीं," पत्नी ने तत्परता से कहा, "मैं तो वैसे भी उठने जा रही थी।"

जलील-मुअल्लिम सीढ़ियां उतरकर पत्नी की ओर मुड़े और बोले:

"मैं दो-एक घंटे में लौट आऊंगा। मेहरबानी करके मुझे माफ़ कर देना। मैं बिलकुल भूल गया था कि अभी सुबह हुई ही है। क्या कमरे में शोर सुनाई दिया था?"

"आपके दो-चार बार कील ठोकने से किसी का कुछ बिगड़नेवाला नहीं। आख़िर आप को अपनी ज़िंदगी में अपने घर में एक बार तो कुछ करने का हक़ है ही।"

लेकिन जलील-मुअल्लिम अपने हाथों की ठण्डी उंगलियां कसे रहे और बायीं आंख के नीचे गाल की सारी चमड़ी को सिकोड़नेवाली फड़कन को किसी तरह भी रोक पाने में असमर्थ रहे।

गली लगभग सुनसान थी। रविवार को यार्डकीपर भी आम दिनों से देर से उठता था। जलील-मुअल्लिम ने सोचा कि कितना अच्छा हो, अगर पूरे साल, दिन-रात इस सुबह जैसा सुन्दर और शीतल मौसम ही रहे और लोग भी कम नज़र आयें। क्योंकि वास्तव में बहुत सारे लोगों के एक स्थान पर जमा हो जाने से कोई फ़ायदा नहीं होता। केवल गड़बड़, धकापेल ही होती है और मानसिक तनाव भी।

उन्हें याद हो आया कि युद्ध से पहले कितना अच्छा लगता था,

जब आज के मुकाबले बाकू में बहुत कम लोग रहते थे और सब एक दूसरे को जानते थे। रास्ते में मिलने पर सब एक दूसरे से दुआ-सलाम करते थे, छोटे अपने से बड़ों का पहले अभिवादन करते थे। सब एक दूसरे का आदर करते थे। किसी-किसी में कभी कहा-सुनी बेशक हो जाती थी, पर बहुत कम ही। आज के भीड़ भरे रास्तों से उसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती।

लेकिन यह हम्माम बिलकुल नहीं बदला, जैसा था, आज भी वैसा ही है। हॉल के बीच में बना तालाब भी वैसा ही है, बस अब उसमें सुनहरी मछलियां दिखाई देती है, शायद पहले भी हमेशा होती थीं। क्या उनकी याददाश्त कमज़ोर पड़ती जा रही है?

और रंगबिरंगी डच टाइलों से दीवार पर बना चित्र – शीतकालीन वन में निर्झर के ऊपर हिम में खड़ा उदास हिरण – आज भी वैसा ही है। और यहां गंध भी पहले जैसी ही आती है – फफूंदी की हलकी गंध के साथ मिली हिना की तेज़ सुगंध।

खज़ानची रख़शंदा ने सहृदयता से मुस्कराकर जलील-मुअल्लिम का अभिवादन किया और मांगे बिना ही उन्हें काग़ज़ में गोल लिपटी हुई दो लुंगियां और हरे साबुन का एक टुकड़ा थमा दिया।

"मैं हुसैन को आध घंटे बाद भेजूंगी," रख़शंदा ने उनकी पत्नी व बेटे की सेहत के बारे में पूछने के बाद कहा। जलील-मुअल्लिम ने रख़शंदा के चेहरे पर नज़र डाली। उनके गढ़ों में धंसे हुए गाल, बारीकी से रंगी हुई भौंहें, ठोड़ी के नीचे लटकी त्वचा की तहें उन्हें उस अत्यधिक सुन्दर स्त्री की याद दिला रही थी, जिसे वे कभी जानते थे।

वे बत्तीस नम्बर के कमरे की ओर जाते समय भी उसी के बारे में सोचते रहे। रख़शंदा ने सदा की तरह उन्हें हम्माम का सर्वश्रेष्ठ कमरा दिया था।

वे उनसे कोई बारह-चौदह साल बड़ी थीं और इस हम्माम में लगभग चालीस साल से काम कर रही थीं। वे पन्द्रह बरस की उम्र में आयीं और तब से यहीं थीं।

शुरू में वे अपनी मां दिलबाज़ी-ख़ानम की देख-रेख में काम करती रही थीं, जो बहुत अनुभवी हम्मामिन और मालिश करनेवाली थीं तथा पीड़ा के बिना खिसकी हड्डियां बिठाने, चेहरे व अन्य स्थानों से अवांछित बालों को सदा के लिए जड़ से मिटा देने में अपनी दक्षता के

लिए स्त्रियों में प्रसिद्ध थीं। उन्हें त्वचा को उसकी निश्चित आयु से दस-पन्द्रह वर्ष या उससे ज़्यादा समय तक कोमल और दीप्तिमान रखने का रहस्य भी ज्ञात था। वे सिर के बालों को घना बनाने, उनका रंग निखारने, तन को सारी रात खिले गुलाबों जैसा सुगंधित रखने, आंखों को सुबह तक उजली रखने और पलकें सूजी हुई न लगने के सब राज़ भी जानती थीं। अगर किसी की शादी का दिन होता, तो दुलहन को अवश्य ही दिलबाज़ी-ख़ानम स्नान करवाती थीं। दुलहन की मां और मौसियां शादी से कई दिन पहले सारी बातें तय करने के लिए उनके पास आया करती थीं। कहने का मतलब यह है कि दिलबाज़ी-ख़ानम विलोमन व अंगों की देख-भाल की कला में पूर्णतः दक्ष थीं। वे अपनी बेटी को बहुत कुछ सिखा गयीं, उसे अपने समान ही सिद्धहस्त बनाना चाहती थीं, पर बना न सकीं। दिलबाज़ी-ख़ानम अपनी ग्राहकों से बातचीत करते वक़्त अचानक ही मर गयीं। उन्होंने अपनी दो परिचिताओं को नहलाकर आख़िरी ठण्डा फ़व्वारा दिया था और वे संगमरमर की गरम पट्टी पर अधलेटी एक दूसरी से गपशप कर रही थीं। उन्होंने अचानक देखा कि दिलबाज़ी का सिर झुक गया है। न जाने वह विचारों में डूबी हुई थीं या चेहरे पर मुस्कान लिये झपकी ले रही थीं।

कहते हैं, दिलबाज़ी अनिंद्य सुन्दरी थीं और रख़शंदा उन्हीं पर गयी थीं।

रख़शंदा हम्मामिन और मालिश करनेवाली का काम करती रही थीं और वृद्धावस्था में उन्हें तरक़्क़ी देकर हम्माम का व्यवस्थापक बना दिया गया था। साथ ही वे ख़ज़ानची का काम भी करती थीं। फिर भी अपने स्थायी ग्राहकों को वे स्वयं स्नान करवाती थीं।

जलील-मुअल्लिम की उनसे पहली मुलाक़ात उस समय हुई थी, जब वे केवल जलील थे और चार साल के भी नहीं हुए थे। तब मां उन्हें अपने साथ लेकर हम्माम में गयी थीं। उन्होंने जलील को फ़व्वारे के नीचे खड़ा करके कहा था कि वे गरम फुहारों के तले कुछ मिनट खड़े रहें। रख़शंदा ने आकर दरवाज़ा बंद किया और आगेवाले कमरे में अपने कपड़े उतारकर अंदर आयीं। तब तक जलील ने अपनी मां के सिवा किसी अन्य स्त्री को नग्नावस्था में नहीं देखा था।

"ओह, कितना अच्छा लड़का है!" रख़शंदा ने कहा और बच्चे का नन्हा गीला सिर थपथपाया।

फिर मां फ़व्वारे के नीचे आ खड़ी हुई। उधर रखशंदा ने संगमरमर की बैंच के किनारे पर बैठकर बच्चे को अपने घुटनों पर बिठा लिया और उससे कसकर आंखें मींच लेने को कहकर उन्होंने उसके सिर पर कई बार साबुन मल दिया।

सिर पर साबुन मलते रखशंदा हर वक़्त पूछती रही कि पानी कहीं ज़्यादा गरम तो नहीं है और वे मन्द स्वर में जवाब देते "नहीं"। और वे सुहाने गरम पानी से उनके सिर से झाग बहाकर अपने हाथ से बच्चे के चेहरे पर फेरती जा रहीं, फिर साफ़ पानी की चिलमची में हाथ डालकर आंखों पर भी...

बाद में मां ने जलील को हम्माम में ले जाना बंद कर दिया। वे उसे घर के ग़ुस्लख़ाने में ही नहलाने लगीं।

वे हफ़्ते में एक बार बच्चे को घर पर छोड़कर पड़ोसन के साथ हम्माम जाने लगीं। छोटे जलील ने कई बार मां की चिरौरी की, रोया भी, पर सब बेकार रहा। मां अपने निर्णय पर अडिग रहीं।

"तुम अब बड़े हो गये हो," मां ने कहा, "अब अब्बा के साथ हम्माम जाया करोगे।"

थोड़ा बड़ा होने पर जलील कई बार हम्माम की छत पर चढ़कर एक छोटी-सी खिड़की में से स्त्रियों के कक्ष में ताक-झांक करता रहा।

गरम, सफ़ेद भाप में घूमती स्त्रियां आपस में बातें करतीं, हंसतीं और यह सब जलील के तन-मन में एक अनूठे उत्तेजक गुंजन की तरह प्रतिध्वनित होता। उसे हर बार ऐसे लगता जैसे कि उन अनिर्वचनीय सुन्दर स्त्री-आकृतियों में रखशंदा को देख रहा हो। जब भी जलील को विश्वास हो जाता कि वह रखशंदा को देख रहा है, तो हर बार उसके दिल पर एक प्रकार की सुखद उदासी छा जाती। लेकिन वास्तव में इतनी ऊंचाई से भाप, सौ वाट के बल्ब के धुंधले प्रकाश और पानी की बहती धाराओं में रखशंदा को पहचान पाना असम्भव था। उनमें से रखशंदा से कुछ मिलती-जुलती किसी स्त्री को कुछ समय निहारकर वह सारी शाम उस पर से नज़र न हटा पाता... और उसके तन-मन में फिर उत्तेजना व विषाद की दुरूह भावना व्याप्त हो जाती।

एक शाम वह गुंबद पर खिड़की से सटा बैठा था, जिससे इत्र, हिना और रखशंदा के तन की सुगंधों से सिक्त गरम, नम हवा की धाराएं निकल रही थीं। उसकी नज़रें रखशंदा को, या अधिक ठीक

कहा जाये, तो उस शाम की रखशंदा को ढूंढ़ रही थीं।

उस चिर-अभीप्सित सुखद अनुभूति का क्षण निकट आता जा रहा था। वह अपने बदन को पूरी तरह खिड़की से सटाये हम्माम में झांक रहा था। अब उसे भली-भांति मालूम था कि वह नीचे से किसी को नज़र नहीं आयेगा, उसके तन-मन में सुखद क्लांति की तरंग व्याप्त होने लगी। पर अचानक उसने महसूस किया कि किसी ने ज़ोर से उसका कंधा पकड़ लिया है।

जलील ने जीवन में कभी ऐसा भय अनुभव नहीं किया था। उसका शरीर सुन्न और जड़वत् हो गया। उसके सामने हंम्मामी अक़ीफ़ खड़ा था, जो हट्टा-कट्टा तो था ही, साथ ही सारे महल्ले में अपनी अतिमानवीय शक्ति के लिए प्रसिद्ध था और आचारशास्त्र से सम्बन्धित सभी विषयों का निर्विवाद निर्णायक माना जाता था।

प्रचण्ड क्रोध के कारण उसका सुन्दर, कोमल चेहरा बिडाल परिवार के किसी सदस्य जैसा लग रहा था। जलील की हालत उस निस्सहाय व्यक्ति जैसी हो गयी, जिसकी किसी हिंसक पशु से अचानक मुठभेड़ हो जाने पर होती है।

"ज़रा सोच तो," अक़ीफ़ बड़ी मुश्किल से बोल पाया, "ज़रा सोच तो, कि हम्माम में तेरी मां, बहन या बीवी नहा रही हैं और कोई हरामी पिल्ला खिड़की में से झांक रहा है। हमारे महल्ले में पहले कभी किसी ने ऐसी हरकत नहीं की। वैसे कोई फ़ायदा नहीं तुझसे बात करने का। तू, दुधमुंहा छोकरा, समझेगा भी क्या? अच्छा, सुन, मेहरबानी करके यहां से चलता बन, वरना मैं तेरा गला काट डालूंगा।"

जलील को कुछ याद नहीं रहा कि उस समय वह बेहोश हुआ था या नहीं। हां, इतना उसे अच्छी तरह से याद रहा कि अक़ीफ़ ने कैसे छत से उतरने में उसकी मदद की थी और फिर वह काफ़ी देर तक दरवाज़े के सामनेवाली बैंच पर बैठकर उससे नरमाई से बातचीत करता रहा था।

अक़ीफ़ ने उसके गलबहियां डाले समझाया था कि जलील ने मर्द के लिए बहुत शर्मनाक हरकत की है और अगर इसका किसी को पता चल गया, तो उसके नाम को हमेशा के लिए बट्टा लग जायेगा और फिर रास्ते चलता हर आदमी उसकी मां-बहन और कई साल बाद

उसकी बीवी या बेटी की बेइज्जती करना अपना हक़ समझेगा, क्योंकि ऐसी शर्मनाक हरकतें कभी भुलाई नहीं जातीं।

अक़ीफ़ ने कहा था कि वह जलील को माफ़ कर रहा है, क्योंकि वह नहीं जानता था कि वह क्या कर रहा है और उसे पूरा विश्वास है कि जलील को अब अपने किये पर सचमुच अफ़सोस हो रहा होगा।

अक़ीफ़ ने यह बात किसी से भी न कहने का वादा किया और अपने क़ौल का पक्का रहा।

फिर अक़ीफ़ ने पूछा कि वह कैसा महसूस कर रहा है, और जलील के यह कहने के बावजूद कि सब ठीक है, हालांकि उसका सिर चकरा रहा था और वह मुश्किल से चल पा रहा था, वह उसे घर तक छोड़ आया था।

अपनी रखशंदा को देखने का जलील का यह आखिरी दिन था।

एक साल बाद अक़ीफ़ की शादी रखशंदा से हो गयी। उनके तीन बच्चे हुए। बाद में जब युद्ध छिड़ा, तो अक़ीफ़ मोर्चे पर चला गया। दो महीने बाद ही रखशंदा को उसकी मृत्यु की सूचना मिल गयी।

रखशंदा ने तीन साल बाद मिट्टी के तेल की दुकान के काने व्यवस्थापक से शादी कर ली। उसने कैसे उनका मन मोह लिया, सारे महल्ले के लिए यह रहस्य ही रहा। पर उनमें अच्छी निभी और वह अक़ीफ़ से हुए रखशंदा के बच्चों के साथ अपने बच्चों जैसा बरताव करता रहा।

जलील-मुअल्लिम की शादी केवल युद्ध के बाद ही हो पायी, क्योंकि उनके पिता की मृत्यु हो गयी थी और परिवार की सारी ज़िम्मेदारी उन्हीं के कंधों पर आ पड़ी थी। दूर की एक रिश्तेदार से उनकी शादी तय करवा दी गयी। उसके बारे में यही कहा गया कि वह घरेलू और पढ़ी-लिखी है, संगीत विद्यालय पास कर चुकी है। देखने में वह काफ़ी चारु, पर बहुत ही दुबली और क़द में जलील-मुअल्लिम के ही बराबर थी, शायद थोड़ी लम्बी थी। उन्होंने शादी से पहले एक दूसरे को केवल दो बार देखा था...

उनके एक बेटी पैदा हुई। कई साल बाद अपनी कापी में नज़रें गड़ाये बैठी हुई बेटी के चेहरे को ग़ौर से देखकर उनकी पत्नी आश्चर्य से कह उठी:

"सचमुच, कितनी मिलती-जुलती है उनसे! सुनिये, आप यह मत

सोचिये कि मेरा दिमाग खराब हो गया है, लेकिन हमारी बेटी बिलकुल हम्माम की मैनेजर रखशंदा पर गयी है। हू-बहू उन जैसी है। ताईरा-खानम का ध्यान सबसे पहले इस पर गया, बोली: 'तुम्हारी बेटी बिलकुल रखशंदा पर गयी है, हू-बहू उन्हीं जैसी है। मालूम पड़ा, जवानी में वे रखशंदा को अच्छी तरह जानती थीं। रखशंदा उस ज़माने का एक फ़ोटो लायी थी। हम सब उसे देखकर हैरान रह गये। 'यह तो बिलकुल मेरी बेटी ही है। रखशंदा के आंसू भी निकल आये। क्यों, बेटी, तुम सचमुच वैसी ही लगती हो ना, जैसी रखशंदा अपने फ़ोटो में? कैसे-कैसे कमाल होते हैं इस दुनिया में!"

बेटी ने अपने ही किन्हीं विचारों में डूबे हुए सिर हिलाया।

"ऐसा हो ही नहीं सकता," जलील-मुअल्लिम ने यह महसूस करते हुए कि वे इस कारण खीज रहे हैं, आश्चर्य व्यक्त किया। "तुम्हें बस ऐसा लगता है।" उन्होंने बेटी के चेहरे को ग़ौर से देखा और उसमें रखशंदा से कोई भी साम्यता न पाकर आत्मविश्वासपूर्ण मुस्कान के साथ कहा – "तुम्हें बस ऐसा लगता है, क्योंकि तुम लोगों को और कोई काम ही नहीं है। आखिर क्यों लगेगी हमारी बेटी रखशंदा जैसी?"

"अगर उन जैसी लगती भी है, तो इसमें कोई बुराई नहीं है। रखशंदा बहुत भली इनसान हैं। अफ़सोस, आप उन्हें इतनी अच्छी तरह नहीं जानते हैं। बहुत ही नेकदिल हैं वे, आज भी इतनी ख़ूबसूरत लगती हैं। वे सारी ज़िंदगी एक शरीफ़ औरत रही हैं, उनके बारे में कभी कोई बुरी बात अपनी ज़बान पर नहीं लाया है..."

कमरे की संगमरमर की दीवारों और बैंचों से भाप उठ रही थी। उन्हें शायद जलील-मुअल्लिम के आने के थोड़ी देर पहले ही खौलते पानी से धोया गया था।

जलील-मुअल्लिम ने कपड़े उतारकर टसर की पतलून व कोट खूंटी पर टांग दिये, फिर दूसरे कमरे में जाकर गरम पानी के फ़व्वारे के नीचे खड़े हो गये। कोई बीस-तीस मिनट बाद हुसैन अपनी खड़ाऊं खटखटाता हुआ आया। उसने अपने कपड़े अगले कमरे में उतार दिये और अन्दर दाखिल हुआ, जिसमें एक चिलमची में मालिश के लिए मोटे ऊन से बुने दस्ताने, पकी हुई सुखी तुरई से बना झांवां, साबुन और शेम्पू की शीशी रखी थी। जलील-मुअल्लिम ने जब तक मालिश के लिए अपने बदन को तैयार किया, हुसैन ने कमरे के कोने में संगमरमर

की पट्टी को धो और पोंछ लिया और रबड़ का तकिया फुलाकर उसके सिरहाने रख दिया।

"काफ़ी है, मेरे खयाल से," हुसैन ने जलील-मुअल्लिम पर ग़ौर से नज़र डालकर कहा। "अब जाकर लेट जाओ, मैं अल्लाह का नाम लेकर शुरू करता हूं।"

जलील पट्टी के पास जाकर उसकी चिकनी, गरम सतह पर पेट के बल लेट गये। उनके तन-मन में शान्ति की चिर-परिचित अनुभूति व्याप्त हो गयी। ऐसा सुख व शान्ति हम्माम के अलावा उन्हें और कही भी अनुभव नही होती थी।

हुसैन ने अपने मज़बूत हाथों से खूब दबा-दबाकर जलील-मुअल्लिम के सारे जोड़ों की मालिश की।

"दुबले हो गये हो कुछ," उसने ठण्डी सांस लेकर कहा। "बहुत चिड़चिड़े हो तुम, यह सब इसी कारण होता है।"

हुसैन ने दूसरी बार हर जोड़ की, पहले से ज़रा धीरे, कशेरुका को मथते हुए मालिश की। इसके बाद वह उनकी उंगलियां कड़कड़ाने लगा, हाथ, पैर के हर जोड़ों को इस तरह मरोड़ने लगा कि उनमें मीठा-मीठा दर्द महसूस होता। वह उन्हें इस तरह कड़कड़ा रहा था कि लगता जैसे शरीर का हर जोड़ अलग-अलग खोलकर उसे किसी चमत्कारी, जीवनदायी पदार्थ में डुबोया जा रहा हो, जिससे उसमें स्फूर्ति और ताज़गी का संचार हो रहा हो। फिर जैसे उनका सारा बदन दोबारा जोड़ दिया गया और वह पहले से हलका, स्वस्थ और युवा लगने लगा।

गरदन की मालिश करते समय हुसैन गुद्दी पर मुश्किल से नज़र आनेवाली तहों को ज़ोर-ज़ोर से पकड़कर खींच रहा था। लगता था जैसे वह मांसपेशियों को उखाड़कर हड्डियों से अलग ही कर देगा। फिर उसने उनके कानों के पीछे अपनी उंगलियां पटपटायीं और उन्हें इतने ज़ोर से ठोढ़ी के नीचे मला कि लगा जैसे उसने एक सैकंड तथा एक मिलीमीटर और आगे दबाया तो जबड़ा ही उखड़ जायेगा। इसके बाद उसने पूरे कंधों और गरदन पर कई बार धीरे-धीरे हाथ फेरकर मालिश ख़त्म कर दी।

जलील-मुअल्लिम की मांसपेशियां उनकी पतली चमड़ी के तले सिमट गयीं। उन्होंने मन में सोचा कि हुसैन भी उम्र के साथ ढलता

जा रहा है, मालिश भले ही वह अच्छी करता है, शहर में उसकी टक्कर का बेशक और कोई नहीं, फिर भी अब उसमें पहले जैसा जोश और पहले जैसी ताक़त भी नहीं रही...

"याद है," हुसैन ने ठण्डी सांस लेकर कहा, "पहले मैं पैरों से तुम्हारी कैसे मालिश किया करता था? अब शायद तुम उसे सहन भी नहीं कर पाओगे।"

हुसैन तब मालिश करते-करते कैसे जोश में आकर उनकी पीठ पर पूरे ज़ोर से अपने नंगे घुटनों के बल मारा करता था यह याद करके जलील-मुअल्लिम को अब आश्चर्य भी हुआ: 'तब मैं यह सब बर्दाश्त कैसे कर लेता था?' स्पष्ट था कि अकेला हुसैन ही नहीं बुढ़ाया था...

हुसैन फ़व्वारा लेकर और दस्ताने पहनकर जलील-मुअल्लिम के पास आ गया। दस्ताने से मालिश करते समय हुसैन किसी से बात नहीं करता था, क्योंकि यह एक नाज़ुक काम था और इसमें ख़ास तौर से ध्यान रखना आवश्यक होता था। वह केवल जलील-मुअल्लिम जैसे सम्माननीय ग्राहकों से ही थोड़ी बहुत बातचीत किया करता था। लेकिन अपने अत्यधिक सम्माननीय ग्राहकों के साथ खुलकर बातचीत करने के लिए वह उन्हें साबुन से नहलाते समय ही मौक़ा देता था। हुसैन किसी भी प्रबुद्ध व्यक्ति के साथ बातचीत कर सकता था, शायरी से सम्बन्धित किसी भी विषय पर भी, जिसका वह अरसे से शौक़ीन और पारखी रहा हो। वह अंतरंग विषयों पर बातचीत करने में नहीं हिचकिचाता था, नैतिकता व आचार-शास्त्र के बारे में उसका अपना निश्चित दृष्टिकोण था और गृह व विदेश राजनीति की उसे अच्छी समझ थी। इनके अलावा वह उन सब गुप्त गतिविधियों का भी अच्छा-खासा जानकार था, जिनकी सहायता से शक्तिशाली राजनीतिज्ञ अपने बड़े-बड़े काम किया करते थे।

हुसैन ने अपनी दूसरी बैत सुनाने के बाद जलील-मुअल्लिम से पीठ के बल लेटने को कहा। उसका स्वर सुखद था और वह भावाभिव्यक्ति के साथ शेरो-शायरी करता था।

"शुक्रिया," जलील-मुअल्लिम ने कहा, "शुक्रिया, तुम्हारी दूसरी बैत सुनकर तो मैं अपने आंसू बड़ी मुश्किल से रोक पाया। पहली बैत भी खूबसूरत थी, पर दूसरी तो अनमोल मोती है। उसमें सारी दुनिया

आईने में अक्स की तरह उतर आयी। फ़ज़ूली अजीम गजब के शायर है।"

"आह!" हुसैन ने निराशा से कहा। "आज कौन ऐसा शायर है, जो उनका मुकाबला कर सके? कोई नही। मैं यह नहीं कहना चाहता कि अच्छे शायर नहीं रहे, कभी-कभार कुछ मिल जाते हैं, पर अजीम उनमें कोई नहीं..."

स्नान अपने अन्तिम चरण में पहुंच गया था। हुसैन ने उनके सिर पर साबुन मला।

"कल मास्को से एक नौजवान यहां आया था, जमशेद के साथ। जमशेद ने मुझसे कहा कि मेहरबानी करके मेरे इस मास्कोवाले दोस्त को दिखा दो कि बाकू का असली हम्माम कैसा होता है... तो क्या कह रहा था मैं? हां, तो उस नौजवान ने बताया कि कुछ अरसे पहले वह फ़िनलैंड और स्वीडन गया था। बोला, वहां लकड़ी के, भापवाले हम्माम होते है। पहले लोग नहाते है, फिर भाप लेते हैं, वैसे ही जैसे यहां। बस उनके यहा हम्माम लकड़ी के होते हैं और हमारे यहां पत्थर के। उसके बाद सब दूसरे तरीक़े से होता है। गरम-गरम भाप से बर्फ़ में निकलकर सब बर्फ़ीले पानी में कूद जाते हैं। कभी सुना ऐसा होता? नौजवान वह काफ़ी संजीदा था, गपोड़िये जैसा बिलकुल नहीं लगता था। जमशेद ने भी उसकी बात को सच बताया। कहता है, वह खुद वहां नहा चुका है, बर्फ़ीले पानी में भी कूद चुका है। तुम्हारा क्या ख़याल है इस बारे में?"

"मेरा क्या ख़याल हो सकता है इस बारे में? दुनिया में पागलों की कोई कमी है क्या? हो सकता है वह झूठ बोलता हो। जमशेद भी तो आखिर असामान से कुल दस साल पहले ही तो बाकू आया है और मुझे अभी तक वहां का कोई ढंग का आदमी नहीं मिला है। इसलिए मैं जानता हूं कि उसके दोस्त कैसे हो सकते हैं। लेकिन हो सकता है, वह सच ही कह रहा हो।"

"बिलकुल सच है," हुसैन बोला, "मैं हमेशा महसूस कर सकता हूं कि कोई सच बोल रहा है या झूठ। मालूम है उस नौजवान ने और क्या सुनाया?" हुसैन ही-ही कर उठा। "मैं किसी से यह बात कहने की कल से हिम्मत नहीं कर पा रहा हूं। शर्म आती है। मैंने उस नौजवान से पूछा भी कि कहीं वह मज़ाक़ तो नहीं कर रहा है। मैंने

उससे कई बार यह सवाल किया, आखिरी बार, जब वह कपड़े पहनकर जाने की तैयारी करने लगा, पर उसने मुझे यही जवाब दिया 'ईमान से', 'बिलकुल सच्ची बात है' और क़सम भी खायी और चला गया। है ना हैरत की बात?"

"आखिर उसने तुम्हें ऐसी क्या सुनायी थी?"

"पूछो मत, जलील, ऐसी बात ज़बान पर लाने को भी दिल नहीं करता। तुम्हें तो मालूम ही है कि मैं कितना खुदातरस आदमी हूं।"

"आखिर मुझे तो बता ही सकते हो, तुम तो जानते हो कि यह मुझ तक ही रहेगा।"

हुसैन ने मौन साधे जलील-मुअल्लिम के सिर पर तीसरी बार साबुन मला।

"बताओ भी," जलील-मुअल्लिम ने आग्रह किया।

"जानते हो, उसने क्या कहा?" हुसैन ने आखिर दिल कड़ा करके कह ही डाला। "कह रहा था कि वहां मर्द और औरतें सब साथ नहाते हैं। एक ही हम्माम में, एक ही कमरे में, सब नंगे घूमते हुए एक दूसरे की पीठ मलते हैं। कहो, क्या ख़्याल है?"

जलील-मुअल्लिम का दम घुटते-घुटते बचा, जब हुसैन ने उनके सिरे से झाग बहाने के लिए पानी डाला।

"कितने बेहया लोग हैं!" जलील-मुअल्लिम ने सांस सामान्य होने पर कहा। वे सचमुच क्रुद्ध हो उठे थे। "बेशर्मी की हद कर देते हैं लोग भी।" बेशर्मी की बात छेड़कर जलील-मुअल्लिम को अपने भाई की बात याद हो आयी और वे पूर्णतः उदास हो उठे। "थू! लोगों की बेशर्मी की कोई हद नहीं होती!"

"अगर कोई आदमी अपनी शर्म-हया गंवा बैठता है, तो उसे ज़िंदगी में कोई सही रास्ते पर नहीं ला सकता। तुम यक़ीन मानो!" अपने भाई का क़िस्सा याद आने पर उन्हें क्रोध आ रहा था। हम्माम का सारा मज़ा किरकिरा हो गया और कनपटियों में हथौड़े की चोटें-सी गूंजने लगीं। वे किसी से कुछ कह भी नहीं सकते थे, आखिर सगे भाई के बारे में किसी ग़ैर को कुछ बताया भी तो नहीं जा सकता था। शर्म की बात होती। नहीं बतायें तो भी बुरा हाल होगा, एक दिन दिल टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। मन ही मन घुटते सदा चुप्पी साधे रहे, तो

मुंह से खून का फ़व्वारा फूट निकलेगा।

चायख़ाना हम्माम के अहाते में ही था। इतना सवेरा होने के बावजूद कोई मेज़ ख़ाली नहीं थी, एक मेज़ पर तो लोग नर्द भी खेल रहे थे। जलील-मुअल्लिम दीवार के पास रखी मेज़ की तरफ़ बढ़ते हुए चायवाले को इशारा भी करते गये। अपने ज़माने में यह चायख़ाना खोलनेवाले ममेद अली के बेटे अज़ीज़ ने उनके पास आकर बाअदब सलाम किया, एक नम, साफ़ कपड़े से बलूत की लकड़ी की और समय के कारण काली पड़ गयी चाय की मेज़ को पोंछा और उनके सामने चायदानी और दो तश्तरियों समेत दो गिलास रख दिये, एक उनके लिए और दूसरा इसलिए कि अगर वे किसी को अपने साथ बैठने के लिए बुलायें, जो वे अकसर करते थे।

उन्होंने अपने लिए गिलास में लाल-सी रंगतवाली तेज़ चाय डाली और सोचा कि जाते समय उन्हें अज़ीज़ को उसके ग्राहकों के सामने आज की चाय के लिए धन्यवाद देना चाहिए। पिछले इतवार को चाय ज़रूरत से ज़्यादा उबाली गयी थी और जलील-मुअल्लिम कुछ नाराज़ होकर चले गये थे।

पर आज चाय बहुत बढ़िया बनी थी। उन्होंने सदा की तरह चाय के पहले गिलास को तश्तरी में ठण्डा करके जल्दी से पी डाला। उन्हें तुरन्त उसका प्रभाव अनुभव हुआ। लगा जैसे चाय ने उनके सिर में खोपड़ी और दिमाग़ के बीच तनी हुई कुहासे की झीनी चादर को अपने में घोल लिया है। अब उनकी स्मृतियां बॉयलरों के निरन्तर चलनेवाले मन्द शोर तथा उनके सिर के ऊपर अंगूर की पत्तियों की सरसराहट के साथ उनकी चेतना में स्वच्छंद रूप से विचरण करती उन्हें चिन्तन के लिए प्रेरित करने लगीं और सुखद प्रतीत होने लगीं। जलील-मुअल्लिम ने चाय का दूसरा गिलास धीरे-धीरे चुस्कियां लेते हुए पिया। पसीना आने से माथे में ठण्डक महसूस हुई। चायख़ाने में नये ग्राहक आ रहे थे, जिनमें से अधिकांश उनके पड़ोसी और परिचित थे और नियमतः सभी उनका अभिवादन कर रहे थे। जलील-मुअल्लिम को जीवन से, उसकी पूर्णता व स्थायित्व तथा साथ ही इस अनुभूति से कि वे अपने चारों ओर के लोगों के लिए ज़रूरी और महत्त्वपूर्ण हैं, वैसा ही पूर्ण सन्तोष अनुभव हो रहा था, जैसा कि आध घंटा पहले हम्माम में हुआ था।

दूसरे छोरवाली मेज़ पर, जहां नर्द का खेल चल रहा था, कुछ देर बाद खिलाड़ियों में विवाद हो गया। वे लोग पड़ोसियों की सलाह अनसुनी करके जलील-मुअल्लिम के पास आ गये और कष्ट देने के लिए बार-बार क्षमा-याचना करते हुए उनसे नर्द पर एक नज़र डाल लेने का आग्रह करने लगे। वे धीरे-धीरे चलकर नर्द के पास गये और विवाद का पलक झपकते निपटारा करके एक वैसी ही घटना के बारे में बताने लगे, जो उनके साथ इसी चायख़ाने में, मरहूम ममेद अली के जीवन में ही घटी थी। सब लोग दिलचस्पी से उनका क़िस्सा सुनते रहे। खिलाड़ियों ने चूं किये बिना उनका निर्णय स्वीकार कर लिया, यह उन्हें बहुत सुखद लगा और यह भी कि चायख़ाने में बैठे लोगों में से, जिनमें से अधिकांश नर्द के जाने-माने खिलाड़ी थे, केवल उन्हें ही विवाद का निर्णय करने के लिए चुना गया। बाज़ी ख़त्म होने पर विजेता ने जलील-मुअल्लिम से अपने साथ एक बाज़ी खेलने का अनुरोध किया, पर उन्होंने इनकार कर दिया। उन्होंने चायख़ाने में नर्द खेलना तभी से छोड़ दिया था, जब से यह पता चला था कि कुछ समय से लोग वहां पैसों की शर्त बदकर खेलने लगे हैं। ऐसा पहले कभी नहीं होता था। वे केवल अपने दोस्तों के यहां या अपने घर में नर्द खेलते थे और वह भी सम्मानित और योग्य व्यक्तियों के साथ। उनके साथ वे कभी-कभी सन्तरों या सरदों, या ज़्यादा से ज़्यादा हर खिलाड़ी से लॉटरी के तीन टिकट की शर्त बदकर खेला करते थे। लेकिन पैसों की शर्त बदकर वे कभी नहीं खेलते थे।

अपनी मेज़ पर लौटकर जलील-मुअल्लिम जाने की तैयारी ही कर रहे थे कि अचानक उनका इरादा बदल गया और उन्होंने ताज़ा केतली से एक गिलास में चाय और डाल ली। चायख़ाना छोड़कर जाते समय उन्हें हमेशा अफ़सोस होता था।

वे दूसरी केतली से चाय का पहला गिलास ख़त्म ही कर रहे थे कि ड्राइवर कमाल उनके पास आ पहुंचा, जिसे लोग उसकी पीठ पीछे लमकन्ना कहते थे। उसमें और दूसरे कमाल में फ़र्क़ करने के इरादे से, जो बिजली मिस्त्री था और जिसे ऐसा कोई नाम नहीं दिया गया था। ड्राइवर कमाल का यह नाम उसकी जवानी में ही उसकी गालियां देने की आदत के कारण पड़ गया थर। वैसे उस ज़माने में उसे केवल गधा कमाल कहकर ही पुकारा जाता था और लमकन्ना

नाम बाद में उसकी उम्र का लिहाज़ करके रख दिया गया था। उसकी चर्चा छिड़ते ही लोग उसकी पत्नी व बच्चों के सामने भी बेझिझक लमकन्ना कह बैठते थे।

लमकन्ना कमाल के लंगोटिया यार उसे उसके मुंह पर भी लमकन्ना कहकर पुकारते थे, जिसके जवाब में वह उन्हें दोस्ताना अंदाज़ में एक से एक चुनिंदा गालियां दिया करता था।

जलील-मुअल्लिम के सामने लमकन्ना कमाल उनका लिहाज़ करके कोई अनुचित बात नहीं कहता था, फिर भी जब कमाल इजाज़त मांगकर उनके सामने बैठ गया, तो उन्हें यह अच्छा नहीं लगा। उन्हें उसे चाय पेश करनी ही पड़ी। कमाल अपनी कोहनियों से आधी मेज़ घेरकर ज़ोर-ज़ोर से नाक सुड़कता और ज़बान चटकारकर चाय पीता हुआ ऊंचे स्वर में कहने लगा कि गर्मी का मौसम कितना अच्छा होता है, बस एक ही चीज़ की कमी खलती है – कोई ऐसी जगह नहीं, जहां ख़श* खाया जा सके। जलील-मुअल्लिम यही सोच रहे थे कि कितना अच्छा होता, अगर वे कमाल के आने से पहले ही यहां से उठकर चले गये होते। अब यहां मौजूद लोगों में से कुछ को लग सकता है कि जलील-मुअल्लिम कमाल से गपशप कर रहे हैं, खुदा न करे, कहीं यह न सोच लें कि वे चायख़ाने में उसके साथ आये हैं। फ़ौरन उठकर चल देना अब अशिष्टता लगती।

"फिर भी पिछले इतवार को हम लोगों ने छककर ख़श खाया," कमाल ने कहा। "रज़ा के तहख़ाने में। रज़ा ने यही कहा: 'भाइयो, यह आख़िरी ख़श है। अगली बार छः महीने बाद ही खाने को मिलेगा।' फिर क्या था, हम बस टूट पड़े उस पर। हरेक ने दो-दो प्लेटें खा डालीं, ईमान से, मेरी आंखें फूट जायें अगर मैं झूठ बोलूं, हरेक ने पूरी एक-एक लीटर वोदका पी डाली! असली शहतूत की वोदका, जो मेरे दोस्त ज़कताल से लाये थे। क्या कहने उस वोदका के! असली शहतूत की वोदका मुझे ज़कताल से लाकर दी गयी थी। जलाओ उसे, तो नीली लौ के साथ जलती है। सबसे बढ़िया क़िस्म की वोदका..."

"लेकिन यह तो नुक़सानदेह है," जलील-मुअल्लिम ने आस-पास

* ख़श – लहसुन के साथ पकाया गया गोश्त का शोरबा। – सं०

की मेज़ों पर बैठे लोगों को कमाल की मूर्खता व अशिष्टतापूर्ण बातों में रुचि लेते देखकर उसे टोक दिया।

"किसके लिए नुक़सानदेह है?" कमाल ने आश्चर्य से पूछा।

"तुम्हारी सेहत के लिए," जलील-मुअल्लिम ने कमाल के मुंह से कोई ऐसी बात निकलने का इंतज़ार करते हुए कहा, जिसके बहाने वे शिष्टाचार भंग किये बिना अपने लिए अप्रीतिकर बातचीत ख़त्म करके जा सकें। वे कमाल को, जो निस्सन्देह उनके आदर का पात्र नहीं था, ठेस पहुंचाये बिना, कोई भी उपयुक्त अवसर मिलते ही उससे विदा लेकर चले जाने को उत्सुक थे। लेकिन इस समय वह उनके सामने बैठा था, इसी कारण उनसे अपने प्रति समुचित व्यवहार की अपेक्षा करने का अधिकारी था।

"बिलकुल नुक़सानदेह नहीं है," कमाल ने उन्हें विश्वास दिलाया। "नुक़सान तो हमारी बाकू की वोदका पीने से होता है। खुदा जाने किस चीज़ से खींचते हैं उसे। कोई कहता है सड़े आलुओं से बनाते हैं, तो कोई कहता है तेल से। पर वह तो वोदका नहीं, कोई बेमिसाल चीज़ थी। ओस-सी साफ़, फूलों-सी ख़ुशबूदार। अफ़सोस, सारी ख़त्म हो गयी! हममें से हरेक ने एक-एक लीटर पी, पर और पीने को मन करता है। हम तीन जने बैठे थे, मैं, मोन्तीं का बेटा फ़िरोज़ और आपका भाई सीमुर्ग़। ईमान से, दूसरी बोतल के बाद फ़िरोज़ की हालत ऐसी हो गयी कि हमें उसे रज़ा के यहां ही सुलाना पड़ा। सच कहूं, तो मुझे भी चढ़ गयी थी, पर सीमुर्ग़, आप तो जानते ही हैं, मैं आपसे इसलिए नहीं कह रहा हूं कि वह आपका भाई है। मैं तो अच्छी बात भी बेलाग कह सकता हूं और बुरी भी। अगर मैं उसके बारे में बुरा सोचता होता, तो आपके मुंह पर साफ़ कह देता। लेकिन एक बात मैं कहना चाहूंगा, सीमुर्ग़ ग़ज़ब का आदमी है, आदमी नहीं, शेर है, शेर! देव की तरह पीता है! पीता है, पर उसे नशा ही नहीं चढ़ता। मैं सीमुर्ग़ की ख़ातिर अपनी जान भी दे सकता हूं। वह इतना अच्छा नौजवान है कि बस, पूछिये मत। जानते हैं, मुझे जब कभी क़सम खानी होती है, तो उसकी और अपने बच्चों की ही क़सम खाता हूं। सबसे अच्छा दोस्त है वह मेरा।"

जलील-मुअल्लिम लमकन्ने कमाल के सामने बैठे किसी प्रकार का

आनन्द अनुभव किये बिना चाय की चुस्कियां ले रहे थे और अब यह महसूस करते हुए आस-पासवालों की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहे थे कि स्नान और चायपान से प्राप्त सारा मज़ा किरकिरा हो गया है।

कमाल का निस्सन्देह इसमें कोई दोष नहीं था, वह आखिर लमकन्ना ठहरा, लेकिन उनके सगे भाई को आखिर ऐसी क्या जरूरत पड़ी थी, जो वह कमाल के साथ दोस्ती गांठने लगा, पीने लगा। और जलील-मुअल्लिम आखिर क्यों ऐसे ग़ैर आदमियों के सामने ये सब सुनें, जिनमें उनके हितैषी भी हैं और बेशक ऐसे भी, जिन्हें उन्हें शर्मिंदा होते देख मन ही मन खुशी होती है। फिर उन्हें याद आया कि उनका भाई अपने पड़ोसियों को पहले भी कई बार मन ही मन खुशियां मनाने के मौक़े दे चुका है, तो वे मानसिक तनाव और कष्टदायी विचारों से ग्रस्त हो गये। वे समझ गये कि अब दिन भर इस तनाव से मुक्ति नहीं पा सकेंगे।

जलील-मुअल्लिम अपने और कमाल के लिए गिलासों में यंत्रवत् चाय डाल रहे थे। जब कमाल उन्हें बताने लगा कि वह और सीमुर्ग़ कैसे नशे में धुत्त होने तक पीकर शहर के मनोरंजन पार्क में मेरी-गो-राउन्ड पर सवारी का मज़ा लूटने गये, तो वे व्यंग्यपूर्वक मुस्करा पड़े। वे खास तौर से उनका अभिवादन करने के लिए अपनी मेज़ पर आये लोगों से हाथ मिलाने लगे, फिर उन्होंने मुरब्बे में पड़ी एक मधुमक्खी को निकाल फेंका और उन्हें यह सोचकर उसके मरने पर अफ़सोस भी हुआ कि शायद यह उनके दो छत्तों में से किसी एक की ही हो। इस समय जो कुछ वे सुन या देख रहे थे, उन्हें अब निरानन्द और अस्पष्ट लगने लगा और उनकी चेतना में अपनी कोई छाप छोड़े बिना लुप्त होने लगा।

वे लमकन्ने के साथ हो रही बेतुकी बातचीत को समझने की कोशिश किये बिना उसे सहन करते रहे और स्वयं कुछ और ही स्मरण करते रहे, जिसमें न तो उसके लिए कोई स्थान था और न ही उस सब के लिए, जो हाल ही में हुआ था। उन्हें वे दिन स्पष्ट याद हो आये, जब महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के कठिन समय में, पिता की मृत्यु के बाद उनके सारे परिवार – मां और दो छोटे भाइयों सीमुर्ग़ और ताईर – की सारी जिम्मेदारियां उनके कंधों पर आ पड़ी थीं। उनकी

मां अशिक्षित थीं। वे सूक्ष्मजैविकी संस्थान की प्रयोगशाला में सहायक के पद पर काम करने लगी थीं। पड़ोसियों को उन्होंने यही बताया था। पर वास्तव में वे वहां सफ़ाई कर्मचारी के रूप में पिंजरे धोया करती थीं, जिनमें खरगोश और कुत्ते रखे जाते थे। तनख्वाह बहुत मामूली मिलती थी, पर संस्थान के कर्मियों को समय-समय पर वैज्ञानिक प्रयोगों के लिए चीराफाड़ी के बाद बचा और खाने योग्य पाया जानेवाला आधा खरगोश दे दिया जाता था। जलील-मुअल्लिम को तब पढ़ाई छोड़कर सुबह के समय स्टेशन के सामनेवाले चौक में समाचारपत्र बेचने पड़े, बाद में घर-घर जाकर चिट्ठियां व समाचारपत्र बांटने पड़े। दोपहर के बाद वे शहर के दूसरे छोर पर बुदागा बाज़ार में जाकर सिगरेटों, चीनी, टॉफ़ी और उन सब चीज़ों की खुदरा बिक्री किया करते थे, जो उन्हें एक दुकान के प्रबन्धक और असहाय रह गये परिवार पर दया करनेवाले अपने एक दूर के रिश्तेदार से मिल जाती थीं। हमेशा अधपेट खाते रहने और बाकू की चिलचिलाती धूप से काले स्याह हुए और सूख गये जलील केवल यही सपने देखा करते थे कि कब वे बड़े होंगे और इतना कमाने लायक़ होंगे कि अपनी मां को कमरतोड़ मेहनत से छुटकारा दिला देंगे, अपने छोटे भाइयों को शिक्षा दिलायेंगे और अपनी मदद करनेवाले सम्बन्धी का एहसान भी चुका देंगे। उनके ये सारे सपने सच हो गये होते, अगर युद्ध के अन्तिम दिनों में उनके छोटे भाई ताईर की मृत्यु न हो गयी होती। वह ज़्यादा दिन बीमार नहीं रहा था। भूख के कारण क्षीण हुआ उसका नन्हा तन नयी विपत्ति यानी लाल स्कारलेट बुखार को सहन न कर पाया। मां उसके दुख में घुलती रहीं, काफ़ी अरसे से बीमार रहीं, उन्हें खांसी हो गयी और वे अपने बेटे की मौत के बाद कभी स्वस्थ न हो पायीं। जलील के लिए यह अपने किसी निकट व्यक्ति की, अपनी आंखों देखी पहली मृत्यु थी और इसके बाद भी मृत्यु की अनिवार्यता के भय से वे काफ़ी समय तक ग्रस्त रहे। पिता की मृत्यु मोर्चे पर हो गयी और जलील को अपने भाई की मौत होने तक इस बात पर किसी तरह विश्वास ही न हो पाया कि पिता जैसे हंसमुख व्यक्ति अब इस दुनिया में नहीं रहे। पर भाई की मृत्यु के बाद उन्हें इस बात पर विश्वास हो गया।

युद्ध के बाद स्थिति सुधरने लगी। जलील ने कुछ और समय तक डाकिये का काम किया, बाद में डाकखाने में उनके त्रुटिहीन कार्य

के लिए उन्हें "काकेशस की रक्षा के लिए" पदक से विभूषित किया गया। दो वर्ष बाद जब पुराना निदेशक रिटायर हुआ, तो जलील को उस पद पर नियुक्त कर दिया गया। उन्हें पता भी नहीं चला कि जवानी कब बीत गयी, पर इसका उन्हें कोई अफ़सोस नहीं था। उन्होंने जो कुछ हासिल किया था, वे उसे किसी क़ीमत पर भी अपनी बीती ज़िंदगी से बदलने को तैयार न होते। सीमुर्ग़ पढ़ाई में उतना अच्छा न था, जितनी जलील-मुअल्लिम उससे अपेक्षा रखते थे, पर वह वैसे ही पढ़ता था, जैसा कि सामान्य परिवार का कोई दूसरा लड़का। वे अपने भाई व मां को काफ़ी अच्छा पहनाते-ओढ़ाते थे, निहायत शराफ़त की ज़िंदगी बसर करते थे और घर के काम-काज के अलावा और किसी काम में दिलचस्पी नहीं लेते थे।

वे अपने उत्तरदायित्वों के प्रति पूर्णतः गम्भीर थे और उनके अधि-कारी उनका उच्च मूल्यांकन करते थे। उन्हें और उनके साथ डाकखाने में काम करनेवाले कर्मचारियों को उनकी सेवाओं के लिए अनेक बार सम्मान-पत्र, नक़द बोनस और मूल्यवान उपहार प्रदान किये जा चुके थे।

उन्होंने अपने छोटे-से घर-बार को सम्भालने के लिए भी पूरी लगन से मेहनत की थी।

धीरे-धीरे उन्होंने अपने अहाते को बाकू के डामर बिछे नीरस आम अहाते से पुष्पित उद्यान और हरी-भरी सागवाड़ी में बदल लिया था, साथ ही एक छोटा-सा बाड़ा भी बना दिया था, जिसमें टर्की और चीनी मुर्ग़ियां शान से घूमती रहती थीं।

जलील-मुअल्लिम ने सीमुर्ग़ को भी पेड़ों में पैवंद लगाने, अंगूर की बेलों की कटाई-छंटाई जैसे अपने मनपसंद काम सिखाने शुरू कर दिये थे। भाई सारे काम खेल-खेल में किया करता था, गम्भीर, विचार-मग्न जलील और उसमें यही अन्तर था। स्कूल के बाद सीमुर्ग़ अपने सहपाठियों के साथ टोकरी उठाकर गलियों में गोबर जमा करने चला जाता था। सीमुर्ग़ और जलील इसकी खाद अपने बगीचे में डालते थे। शुरू में भाई को गलियों में जाकर तब तक गोबर उठाने में शर्म महसूस होती रही, जब तक कि जलील-मुअल्लिम ने यह भांपकर उसे शान्तिपूर्वक समझा नहीं दिया कि इसमें शर्म की कोई बात नहीं है। अपने कथन की पुष्टि करने के लिए एक रविवार को वे स्वयं सीमुर्ग़ और उसके मित्रों के साथ क्यूबा राजपथ पर गये, जहां से मोटर गाड़ि-

यों की तंगी के उस ज़माने में फ़ौजी गाड़ियां, सवारी-फ़िटनें, किसानों के छकड़े आदि गुज़रा करते थे। वे अपने पीछे सड़क पर प्रचुर मात्रा में अपने स्पष्ट और ठोस प्रमाण छोड़ जाते थे, जिन्हें कोई भी समझ-दार, व्यवहारकुशल व्यक्ति उनके ताज़ा रहते अपनी टोकरी में जमा करके खाद के रूप में अपने बगीचे में डाल सकता था। इस प्रकार वह एक पदार्थ के दूसरे पदार्थ में परिवर्तन की रहस्यमय शाश्वत प्रक्रिया में सीधे भाग ले सकता था।

जलील-मुअल्लिम अपने महल्ले में बड़े ज्ञानी माने जाते थे, हालांकि विश्व साहित्य के महासागर में से, जिसकी गहराई का अनुमान आज तक कोई नहीं लगा पाया है, उन्हें केवल एक बूंद मात्र ही प्राप्त हो पायी थी। उन्होंने केवल आज़रबैजानी लोक-कथाओं का संग्रह ही पढ़ा था और उसमें उन्हें बहुत आनन्द आया था।

वे हर डेढ़-दो साल बाद उस पुस्तक को फिर से पढ़ते रहते थे। कुछ कहानियों के कथानक उन्हें अत्यन्त रोचक लगते थे, तो कुछ में प्रेमियों द्वारा भोगे जानेवाले कष्टों, दुष्टों व जादूगरों द्वारा उनके मिलन के विरुद्ध रचे गये षड्यंत्रों आदि के कारण उनकी आंखें छलछला आती थीं। अत्यन्त हास्यजनक अंशों को पढ़ते समय वे खुलकर हंसते थे, किसी प्रकार अन्ततः एक दूसरे से मिलने में सफल हुए प्रेमियों के, किसी महल में या जन्नत के किसी चमन के सुनहरी मछलियोंवाले तालाब के किनारे किंचित् एकरस और सामान्य प्रेम-सुख भोगने में निमग्न होने के वर्णन को पढ़कर भावनाओं की विह्वलता से लाल हो उठते थे। इस पुस्तक में जो बात उन्हें सबसे अधिक प्रभावित करती थी, वह थी उससे मिलनेवाली बुद्धिमत्तापूर्ण, स्पष्ट नैतिक शिक्षा, जिसके अनुसार बदी अपने हर रूप में अन्ततः दण्डित होती ही है, जबकि सच्चरित्र, परिश्रमी और अपने सम्बन्धियों व मित्रों के साथ निष्कपट रहनेवाले लोग उनके कार्यों व प्रेम में उदारतापूर्वक पुरस्कृत किये जाते थे। जनता अथवा न्यायप्रिय शासक उनके कृत्यों का यथोचित मूल्यांकन करते थे, उन्हें जन या राजकीय सेवाओं में सर्वोच्च पदों पर नियुक्त किया जाता था और तब भी वे पूर्ववत् विनीत तथा सज्जन बने रहते थे।

जलील-मुअल्लिम ने सीधे-सादे शब्दों में, जैसा कि वे स्वयं समझते थे, सीमुर्ग़ को समझा दिया कि गोबर पेड़-पौधों की बढ़ती के लिए

अत्यावश्यक है और उसे इकट्ठा करके वह और उसके दोस्त एक बहुत लाभदायक व आवश्यक कार्य कर रहे हैं। उन्हें चिढ़ानेवालों पर, जो यह नही समझते कि हर तरह का श्रम सम्मानजनक है, उन लोगों को कोई ध्यान नही देना चाहिए, क्योंकि वे लोग नालायक है, कहना चाहिए बिलकुल गये-गुज़रे है और उनका उद्धार केवल तभी हो सकता है, जब वे तुरन्त सच्चे दिल से प्रायश्चित्त करें।

अपने जीवन के उस काल में जलील-मुअल्लिम पूर्णतः सुखी व्यक्ति थे। अपनी मां के गिरते स्वास्थ्य के कारण वे थोड़ा चिन्तित रहते थे, जो युद्ध के कठिन वर्षों में दुख भोगने के बाद कभी सामान्य न हो पाया था। वे बहुत ज्यादा खुदातरस हो गयी थीं और रोज़ाना अपने बेटों की सेहत के लिए दुआ किया करती थीं। जलील को वे बहुत प्यार व उन पर बहुत गर्व करती थीं और उनके काम से घर लौटने की व्याकुलता से प्रतीक्षा करती रहती थीं। उनकी पीठ पीछे वे केवल उन्हीं के बारे में बातें करती रहती थीं, उनकी तारीफ़ों के पुल बांधती रहती थी, जिनका सिलसिला केवल उन्हें खांसी का दौरा पड़ने पर ही टूटता था। वे कहती रहती थीं कि उनके पास सब कुछ है, लेकिन सच्चा सुख उन्हें केवल तभी मिलेगा, जब जलील की शादी हो जायेगी और ऊधमी सीमुर्ग़ स्कूल पास कर लेगा।

उन्हें अपने ये सपने साकार होते देखने का सुख प्राप्त हुआ। उन्होंने एक भले परिवार में जलील के लिए बहू ढूंढ़ ली, जो दहेज भी कुछ बुरा नहीं लायी। कहने का मतलब यह है कि उन्हें वह सब हासिल हो गया, जो औरों को हासिल था। लैला अच्छी गृहिणी और पत्नी साबित हुई। लैला ने पूरे मनोयोग से, केवल बहू की तरह नहीं, बल्कि स्नेहमयी बेटी की तरह सास की सेवा की, शुरू में शायद दो प्यारे बेटों की इज्ज़तदार बुढ़िया मां का दिल जीतने के इरादे से उसने ज्यादा मेहनत भी की। सच कहा जाये, तो शुरू में यह सब इसी उद्देश्य से किया गया, पर साथ ही मरियम खानम भी यही सोचकर कि देखें यह कैसे घर की बेटी है, शुरू से लैला पर नज़र रखे रहीं। फिर वे एक दूसरी की आदी हो गयीं, एक दूसरी को दिल से प्यार करने लगीं, जो सास व बहू के बीच विरले ही हुआ करता है। सुबह एक दूसरी से मिलकर उन्हें सच्ची खुशी होती थी, हालांकि वे पड़ोसिनें नहीं थीं, बल्कि एक ही घर में रहती थीं। उनके लिए एक दूसरी की कमी

महसूस करने की कभी नौबत नही आयी, क्योंकि जबसे बहू घर मे आयी थी, तब से वे एक दिन के लिए भी जुदा नही हुई थीं, उस दुखद दिन तक, जब मरियम खानम हमेशा के लिए यह दुनिया छोड़कर नहीं चली गयी, लेकिन यह काफ़ी समय बाद की बात है।

पड़ोसी भी सबको जलील-मुअल्लिम के खानदान की मिसाल दिया करते थे। जलील अपने मुहल्ले के सर्वाधिक सम्मानित व्यक्ति हो गये थे। उनसे अगले ब्लाक में रहनेवाले लोकाभियोजक हसानोव को भी अनौपचारिक रूप से होनेवाली उस प्रतिस्पर्द्धा में उनके लिए इलाके के सर्वाधिक सम्मानित व्यक्ति का स्थान छोड़ने को विवश होना पड़ा था।

छोटे भाई सीमुर्ग़ ने भी उन्हें निराश नही किया। वह पढ़ाई में पहले से अच्छा हो गया, स्कूल के बाद पुस्तकालय में भी जाने लगा। जलील-मुअल्लिम यह सोचकर इस काम में उसका उत्साह बढ़ाते रहे कि पुस्तकालय जाने से निश्चय ही कभी कोई हानि नहीं होगी।

उन्हें इस बात का एहसास होता था कि सीमुर्ग़ अपने बड़े भाई को प्यार भी करता है और उन पर गर्व भी करता है। इस बात से भी दिली खुशी होती थी कि सीमुर्ग़ बड़ा होकर लम्बा और सुन्दर युवक होगा, क्योंकि अभी उसके सातवीं कक्षा में होने पर भी आस-पड़ोस की लड़कियों की नज़रें बराबर उसी पर टिकी रहती थीं।

जलील-मुअल्लिम के विचार से उस समय उनकी आय बुरी न थी, उन्हें पैसा अपनी सभी आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त पड़ता था और वे कुछ बचा भी लेते थे। हर सप्ताह के अन्त में जलील-मुअल्लिम सीमुर्ग़ को जेब-खर्च के लिए पैसे देते थे, वह चाहे मांगे या न मांगे, क्योंकि उन्हें याद आता रहता था कि जब वे सीमुर्ग़ की उम्र के थे, तब उन्हें कितनी मुसीबतें भोगनी पड़ी थीं। वे सीमुर्ग़ को सिनेमा जाने, आइसक्रीम खाने और अगर वह किसी को साथ ले जाना चाहे, तो उसके लिए भी पर्याप्त पैसा देते थे, ताकि भाई मज़े से रहे और किसी को साथ चलने का निमंत्रण देने में पैसों की कमी उसके लिए बाधा न बने। सच कहा जाये, तो जलील-मुअल्लिम उसे पैसा इसलिए भी देते थे कि वे भाई को बहुत प्यार करते थे, उसे हृदय से चाहते थे। उन्हें मालूम था कि भाई पार्क में डांस करने जाता है, लेकिन इसके लिए उन्होंने उसे कभी बुरा-भला नहीं कहा, क्योंकि उन्हें पूरा विश्वास

3-0300

था कि थोड़ा बड़ा होने पर सीमुर्ग़ खुद ही समझ जायेगा कि यह व्यर्थ और अनैतिक भी है। इस बारे में जलील-मुअल्लिम ने कभी एक शब्द भी नहीं कहा, क्योंकि वे पूर्णतः आश्वस्त थे कि सीमुर्ग़ और उनकी रगों में एक ही बाप का खून बहता है और वह कभी उसे ग़लत रास्ते पर नहीं जाने देगा। स्वयं जलील ने शादी होने तक किसी स्त्री की बांह में बांह डालकर चलने की तो बात दूर, कभी किसी के साथ अकेले में वक़्त तक नहीं गुज़ारा था।

जब सीमुर्ग़ दसवीं पास करने के बाद गर्मियों में अकसर घूम-फिरकर रात को देर से घर लौटने लगा, तो जलील-मुअल्लिम समझ गये कि अब उन्हें अपनी खामोशी तोड़नी ही होगी। वे लगभग सारी रात सो नहीं पाये और सुबह जैसे ही उन्हें भाई के क़दमों की आहट सुनाई दी, वे सोने के कपड़ों में ही उठकर, उसे देखते हुए हौले से फाटक पर जा पहुंचे। सीमुर्ग़ का चेहरा अद्भुत लग रहा था, उस पर भाव भी असाधारण थे, आंखें क्लान्त पर इतनी खिली हुई लग रही थीं, मानो उनसे प्रकाश फूटा पड़ रहा हो, लाल-लाल और किसी कारण कुछ फूले हुए होंठों पर एक अस्पष्ट मुस्कान फैली हुई थी। सीमुर्ग़ की क़मीज़ के बटन खुले हुए थे और उसका लगभग पूरा चौड़ा सीना स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

जलील-मुअल्लिम ने पहले तो सोचा कि सीमुर्ग़ पीकर आया है, उनका दिल इस विचार मात्र से धक से रह गया। लेकिन जब ग़ौर से देखने पर उन्हें उसकी गरदन पर चेरी-से लाल रंग के दो निशान और इत्र की भीनी खुशबू भी आयी, तो वे समझ गये कि सीमुर्ग़ नशे में नहीं है। उनकी समझ में नहीं आया कि वे खुशियां मनायें या कुछ और करें। जलील-मुअल्लिम ने भाई की तरफ़ केवल एक बार, पर काफ़ी देर तक घूरकर देखा और इस तरह काफ़ी कुछ कह दिया। सीमुर्ग़ ने सकपकाकर सिर झुका लिया, कुछ भी बोला नहीं और मां द्वारा शाम से ही अहाते में चबूतरे पर लगा दिये गये बिस्तर पर सोने चला गया। उस सुबह के बाद से सीमुर्ग़ ने देर तक बाहर रहना बंद कर दिया और हमेशा रात के बारह बजने से पहले ही घर लौटने लगा। जलील-मुअल्लिम ने भी उस सुबहवाली बात को कभी नहीं छेड़ा। वे दोनों उसी तरह हर शाम को बगीचे में काम करते रहते और उसे निबटाने के बाद नर्द खेलते, चाय पीते। जलील-मुअल्लिम

के भाई जैसा आज्ञाकारी और उससे बेहतर भाई सारे इलाक़े में तो क्या, शायद सारे शहर में किसी के न होगा। वे सीमुर्ग़ के लिए घनिष्ठतम मित्र भी थे, दयालु बड़े भाई भी, स्नेहमय और विशालहृदय पिता भी। ऐसा इसलिए कि सीमुर्ग़ का और कोई घनिष्ठ मित्र नहीं था, कोई और भाई भी नहीं था, पिता की उसे बिलकुल याद नहीं थी, क्योंकि उन्हें तभी मोर्चे पर बुला लिया गया था, जब वह केवल दो वर्ष का था। सीमुर्ग़ जलील-मुअल्लिम को विरले ही नाम लेकर पुकारता था, दूसरों के सामने वह अपने से बारह वर्ष बड़े भाई को, जैसी कि परम्परा थी, आग़ा-दादश कहकर ही बुलाता था।

...उस साल गर्मियों में सीमुर्ग़ ने मेडिकल इंस्टीट्यूट में प्रवेश पाने की तैयारियां शुरू कर दीं। उसने सभी प्रवेश-परीक्षाओं में अच्छे अंक प्राप्त किये, लेकिन प्रतियोगिता के लिए वे कम थे और उसे प्रवेश नहीं मिला। जलील-मुअल्लिम रेक्टर से मिलने गये, उसके बाद मंत्रालय की भी नौबत आयी, पर कोई फल न मिला। मंत्रालय से निकलते समय उन्होंने परीक्षाओं की परिणाम-तालिका पर अन्तिम बार दृष्टिपात किया। सीमुर्ग़ को सभी विषयों में पांच में से चार-चार अंक और केवल एक में तीन मिले थे। जलील-मुअल्लिम ने तालिका को उखाड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। सिर्फ़ दो अंकों के कारण उसे प्रवेश नहीं दिया गया था! यह बात किसी तरह भी जलील-मुअल्लिम की समझ में नहीं आयी, सोचने लगे: 'क्या ये सब के सब पागल हो गये हैं?' आदमी आखिर दस साल पढ़ता रहा, डाक्टर बनने के सपने देखता रहा, उसने सभी परीक्षाएं अच्छे अंकों से पास कीं, फिर भी उसे सिर्फ़ दो अंक कम होने के कारण प्रवेश नहीं दिया गया।

जलील-मुअल्लिम को अफ़सोस था कि वे उन प्राध्यापकों को नहीं जानते हैं, जिन्हें सीमुर्ग़ को इतने कम अंक देते समय ज़रा भी दुख नहीं हुआ। वे उनसे पूछते कि उन्हें किसने अधिकार दिया है इतनी निर्ममता से किसी के भाग्य के साथ खिलवाड़ करने का। यह तो पहली दृष्टि में ही स्पष्ट था कि सीमुर्ग़ चतुर और ज्ञानवान है और जब उन्हें तुरन्त यह नज़र न आ सका कि उनके सामने कौन है, तो एक बार और उससे प्रश्न पूछ सकते थे। प्रश्न-पत्र आखिर क्या होता है, जलील-मुअल्लिम कटुता से सोच रहे थे। सिर्फ़ एक काग़ज़ का टुकड़ा, जिस पर तीन प्रश्नों के सिवा और कुछ नहीं होता। उन्हें चाहिए था कि

आदमी से पूछते, वह कैसे परिवार में पला-बढ़ा है, क्या पिता के बिना उसका पालन-पोषण आसान रहा। इसके बाद ही उन्हें फ़ैसला करना चाहिए था कि उसे कैसे अंक दें। और अगर उन लोगों का मूड खराब था, बात करने को मन नहीं चाहता था, तो फिर परीक्षा लेने न जाते, थोड़ी देर खुले में टहलते, जब तक कि तबीयत ठीक न हो जाती। आखिर लोगों का जीवन उन पर निर्भर करता है!

सीमुर्ग़ को अपनी असफलता पर उतना दुख नहीं हुआ, जितना कि उसके बड़े भाई को। उसने जलील-मुअल्लिम को यह समझाने का यथासम्भव प्रयास किया कि मेडिकल इंस्टीट्यूट में उस वर्ष प्रतियोगिता पहले से बहुत कठिन थी और केवल सभी विषयों में पांच में से पांच अंक पानेवालों को प्रवेश दिया गया है और जिन्हें एक या दो विषयों में पांच अंक मिले थे, उन्हें केवल जन-स्वास्थ्य व बाल-चिकित्सा में ही प्रवेश दिया गया था, जबकि लगभग सभी ने चिकित्सा विभाग में प्रवेश पाने के लिए प्रार्थनापत्र दिये थे। उसने जलील-मुअल्लिम को काफ़ी देर तक समझाया, वचन दिया कि अगले वर्ष वह दिल लगाकर पढ़ाई करेगा और सभी परीक्षाओं में पांच में से पांच अंक लेकर प्रवेश पाकर ही रहेगा। लेकिन सब व्यर्थ रहा, जलील-मुअल्लिम सन्तुष्ट नहीं हुए। दस दिन बाद ही सैनिक भरती कार्यालय से सीमुर्ग़ को बुलावा आ गया। जलील-मुअल्लिम पहली बार अपने स्वाभाविक संयत व्यवहार में परिवर्तन करके, जो उनके विचार से बड़े भाई और परिवार के मुखिया के लिए सर्वथा उचित था, सीमुर्ग़ को छोड़ने बालाजारी तक गये।

उन्होंने सीमुर्ग़ का प्रगाढ़ आलिंगन करके कई बार उसे प्यार किया और हालांकि वे छोटे भाई के सामने इस बात को सर्वथा लज्जाजनक और अनुचित मानते थे, फिर भी उनकी आंखों में आंसू आ ही गये। सीमुर्ग़ भी रोता हुआ उनके साथ डिब्बे के पास खड़ा रहा, पर जलील-मुअल्लिम किसी प्रकार भी अपने पर नियंत्रण न रख पाये और अपने छोटे भाई को ऐसी हिदायतें भी देना भूल गये, जो उसकी सैनिक सेवा में लाभकारी सिद्ध हो सकती थीं।

सीमुर्ग़ के जाने के बाद घर जैसे सुनसान हो गया। उसकी कमी बहुत खलती थी। उसके पत्र लगभग हर दूसरे दिन आ रहे थे। जलील-मुअल्लिम उसे वैसे ही यथासमय उत्तर देते थे, जैसे कि वे जीवन में

हर काम के मामले में करते थे। वे कितने ही व्यस्त क्यों न होते, पर उसके हर पत्र के उत्तर में पत्र लिखते और उसके अन्त में पूछते कि सीमुर्ग़ को पैसा या किसी और चीज़ की ज़रूरत तो नहीं है।

सीमुर्ग़ के पत्र रोचक होते थे। उनमें वह उन स्थानों का वर्णन करता था, जिनके बारे में जलील-मुअल्लिम ने केवल सुना ही था।

शुरू में सीमुर्ग़ के पत्र उक्राइन से आते रहे। वह लिफ़ाफ़ों में ल्वोव, चिर्नोवत्सी और अन्य नगरों के रंगीन व्यूकार्ड भी भेजता था। सीमुर्ग़ ने लिखा था कि वह सेना में मोटर-चालक का प्रशिक्षण पाकर एक यूनिट में सेवा कर रहा है, जिसके बारे में वह एक सैनिक होने के नाते नहीं लिख सकता। जब सीमुर्ग़ को "सैनिक व राजनीतिक दक्षता" के लिए पदक दिया गया, तो जलील-मुअल्लिम ने एक दावत दी, जिसमें अपने मित्रों, सम्बन्धियों और सदा की तरह दुकान के प्रबन्धक, अपने उस दूर के रिश्तेदार को भी बुलाया, जिसने युद्ध के वर्षों में उनकी सहायता की थी और जिसका वे सदा आदर करते थे। फिर सीमुर्ग़ के पत्र विदेश से आने लगे, लेकिन पहले से बहुत कम। जलील-मुअल्लिम ने इसका बुरा नहीं माना, क्योंकि वे समझते थे कि सेना में सेवा करना कोई मज़ाक़ की बात नहीं है, वहां पत्र लिखने के लिए समय ही नहीं बचता होगा। वे स्वयं उसे नियमित रूप से पत्र लिखकर घर, बाहर, अपने काम और आस-पड़ोस के समाचार भेजते रहे। हर महीने वे सीमुर्ग़ के नाम खोले बचत खाते में दस और कभी-कभी पन्द्रह रूबल जमा करने लगे। जलील-मुअल्लिम जानते थे कि उनके सिवा सीमुर्ग़ का जीवन में और कोई सहारा नहीं है। सेना से लौटने के बाद उसे पैसों की बहुत ज़रूरत पड़ सकती है, ख़ास तौर से अगर वह इंस्टीट्यूट में प्रवेश ले या फिर जवान ठहरा, कहीं शादी ही करने की ठान ले। जलील-मुअल्लिम अपने बचत खाते में भी हर महीने उतने ही पैसे जमा कराते रहे, आख़िर गृहस्थ को अपने और अपने बच्चों के भविष्य की भी चिन्ता करनी ही चाहिए। उस समय तक उनके दो बच्चे हो चुके थे। बेटे का जन्म सीमुर्ग़ की सैनिक सेवा के दूसरे वर्ष में हुआ था। जलील-मुअल्लिम ने अपने बच्चों को लाड़-प्यार से बिगाड़ा नहीं। वे उन्हीं के हित में उनके साथ सख़्ती से पेश आते थे, क्योंकि वे जानते थे कि लाड़-प्यार से बिगड़े बच्चे विरले ही ढंग के आदमी बन पाते हैं। वैसे वे बच्चों को दिल से प्यार करते थे और

उनमें से कोई बीमार पड़ जाता, तो बहुत दुखी होते थे, पर उन्हें जितना प्यार सीमुर्ग़ से था, उसका इस प्यार से कोई मुक़ाबला नहीं किया जा सकता था। इसके लिए न उनकी मां ने उन्हें कभी बुरा-भला कहा और न ही पत्नी ने, क्योंकि वे जानती थीं कि उन्होंने ही सीमुर्ग़ को पाला-पोसा है और उसके लिए उस समय से चिन्तित रहे हैं, जिस समय उन्हें ख़ुद ही अपने सिर पर बाप के साये की ज़रूरत थी। सीमुर्ग़ उनके लिए पहलौठे जैसा था, पिता के लिए बच्चों में सबसे लाड़ला।

ये लोग इसी तरह सीमुर्ग़ के लौटने की बाट जोहते दिन काट रहे थे। ज़िंदगी बुरी नहीं कट रही थी। ऐश पर ये पैसा बरबाद नहीं करते थे। जलील-मुअल्लिम अपनी मेहनत की कमाई यूं ही फूंक डालनेवालों में से नहीं थे, लेकिन अपनी आवश्यकताओं और अच्छे रहन-सहन में वे कंजूसी नहीं बरतते थे। वे लोगों को अपने यहां भी अकसर बुलाते थे और ख़ुद भी उनके यहां जाते थे। जब कभी जलील-मुअल्लिम को पत्नी के साथ किसी के यहां जन्म-दिन या विवाह में जाना होता, तो वे अपने ख़ानदान के नाम और उसकी हैसियत के अनुरूप उपहार ले जाने में बड़ी उदारता से काम लेते थे। पिछली गर्मियों में, सीमुर्ग़ के लौटने से पहले, जलील-मुअल्लिम ने अचानक अपने एक पुराने सपने – सपरिवार किस्लोवोद्स्क की यात्रा – के सपने को साकार करने का फ़ैसला कर लिया।

भौगोलिक प्रकृति का यह चिर-अभीप्सित विचार शायद उनकी चेतना में सीमुर्ग़ द्वारा भेजे गये उन स्थानों के वर्णनों व व्यूकार्डों के कारण ही फिर जागृत हो उठा था, जिन्हें उन्होंने कभी नहीं देखा था। कौन जाने, यही कारण था या कुछ और। शायद ही कभी कोई ऐसा ज्ञानी या विद्वान हुआ हो, जो निश्चित रूप से यह जान पाये कि जलील-मुअल्लिम जैसे आदमी के दिमाग़ में उनके लिए अस्वाभाविक विचार आने के पीछे आख़िर कारण क्या होता है। शायद वे मां को उनकी वृद्धावस्था में कुछ सुख देना चाहते हों। उनके घर में उनके स्वर्गीय पिता बयराम-बेक (तेल उद्योग के सम्मानित टोली-नायक) के कुछ फ़ोटो बहुत संभालकर रखे हुए थे। उनमें से एक में उनके माता-पिता अपनी युवावस्था में, युद्धपूर्व काल के फ़ैशन की अजीब-सी पोशाकों में काली चट्टानों पर साथ खड़े दिखाई देते थे, जिनके

नीचे एक चौड़े पाटवाली, उथली धारा बह रही थी और जो अपनी निर्मलता के कारण सोते के जल-सी लगती थी। फ़ोटो के नीचे लिखा हुआ था : "चश्मा-ए-शीशा, किस्लोवोद्स्क।" उनकी मां को सब ज़बानी याद था। मां-बाप ने अपना मधुमास वहां बिताया था और उनके विचार से धरती पर किस्लोवोद्स्क से बढ़कर कोई जगह नहीं थी। मां को किस्लोवोद्स्क की याद थी और वे फलों के बाग़वाले घर और वहां के रास्तों के "पसली पहाड़ी" जैसे अनूठे नामों का भी अनेक बार बड़े विस्तार से ज़िक्र करती रहती थीं। इन सबके क़िस्से बयान करते समय वे बड़ी सजीव और एक प्रकार से फिर से जवान हो उठती थीं। वे हर बार एक ठण्डी सांस लेकर अफ़सोस ज़ाहिर करती थीं कि जलील-मुअल्लिम को अभी तक किस्लोवोद्स्क जैसे रमणीय स्थान पर रहने का किसी तरह मौक़ा ही नहीं मिला। स्पष्ट था कि अपने भोलेपन व भुलक्कड़पन के कारण वे यह भूल जाती थीं कि किस्लोवोद्स्क ही दुनिया में या सोवियत संघ का अकेला ऐसा शहर नहीं है, जिसमें रहने और दर्शनीय स्थल देखने का जलील-मुअल्लिम को मौक़ा नहीं मिल पाया था। जलील-मुअल्लिम बाकू में ही जन्मे और बड़े हुए थे, कभी उससे बाहर नहीं गये थे।

किस्लोवोद्स्क की यात्रा का अपना चिर-अभीप्सित स्वप्न साकार होने के साथ इससे उनकी पत्नी और बच्चों को भी अपने मानसिक क्षितिज का विस्तार करने का अवसर मिल रहा था। इसके अलावा स्नेहशील व आदर के पात्र के रूप में जलील-मुअल्लिम को अपनी मां को अनपेक्षित सुख देने का भी अवसर प्राप्त हो रहा था, जो अपने निकट लोगों के लिए जीवन के उस काल में पदार्पण कर चुकी थीं, जब उनकी जीवनडोर किसी भी क्षण टूट सकती थी और जिसमें अपने नेक इरादे को और न टालना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है।

इसके अलावा जलील-मुअल्लिम काफ़ी सोच-विचार के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि स्वास्थ्य-स्थल की यात्रा महल्ले के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और विरली घटना होगी और इससे उनके पड़ोसियों की दृष्टि में एक सफल व विशालहृदय व्यक्ति के रूप में उनकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी, वे आम आदमियों से ऊंचे समझे जाने लगेंगे। परिवार सहित स्वास्थ्य-स्थल की यात्रा पर जाने के अपने निर्णय के बारे में उन्होंने सीमुर्ग़ को लिखकर अफ़सोस भी ज़ाहिर किया कि उन्हें उसके बिना

जाना पड़ रहा है। पत्र के अन्त में जलील-मुअल्लिम ने सही तारीखें भी लिख दी कि उन्हें वहां आने-जाने में कितना समय लगेगा और यह भी कि इस दौरान सीमुर्ग़ को अपनी चिट्ठी-पत्री किस्लोवोद्स्क के मुख्य डाकघर की मारफ़त भेजनी चाहिए। जलील-मुअल्लिम को उनकी यात्रा के समाचार से सीमुर्ग़ और बच्चों पर अच्छा शिक्षात्मक प्रभाव पड़ने की आशा थी। सबसे पहले तो यह कि ईमानदारी से अपने आपको लाभदायक श्रम को समर्पित करनेवाला व्यक्ति कैसे-कैसे अवसर प्राप्त कर सकता है, दूसरे उनकी स्मृति में जलील-मुअल्लिम जैसा निस्स्वार्थ व्यक्ति, परिवार का मुखिया उनके प्रति चिन्ताशीलता व दयालुता का एक और जीता-जागता उदाहरण बन जायेगा।

सदा की तरह अपने और अपने घरवालों के बारे में सोचते समय जलील-मुअल्लिम का हृदय द्रवित हो उठता था। उन्होंने सभी के—अपने भाई, अपनी पत्नी और बच्चों के प्रति और अधिक उदारता बरतने अर्थात् उनकी उन सब भूलों को, जो वे अनजाने में कर बैठते थे, माफ़ कर देने का और उनके अन्तःकरण को केवल उदाहरणों से ही क़ायल करने का निर्णय किया। उन्होंने आज्ञाओं व निषेधाज्ञाओं के बिना काम चलाने का निश्चय किया, जिसका उन्हें निस्सन्देह परिवार का मुखिया, उनका बड़ा और एक ऐसा व्यक्ति होने के नाते पूरा अधिकार था, जिसके प्रति उन्हें अपने अस्तित्व और उस वस्तु के लिए कृतज्ञ होना चाहिए, जो उनके पास वर्त्तमान में है और भविष्य में भी मिलनेवाली है।

जलील-मुअल्लिम ने चायख़ाने में आग़ा-समेद के साथ अच्छी तरह सलाह-मशविरा करके, जो पेंशन पर जाने से पहले फ़ाइलिंग क्लर्क और माल-विशेषज्ञ के रूप में सोवियत संघ का चप्पा-चप्पा छान चुके थे और काफ़ी अनुभवी थे, रेलगाड़ी के बिना गद्दोंवाले शयनकक्ष के टिकट दस दिन पहले ही ख़रीद लिये। आग़ा-समेद ने कहा कि गर्मियों में गद्दोंवाले डिब्बे में और कोई चारा न रहने पर ही यात्रा करनी चाहिए। इस क़िस्म के डिब्बे में बहुत गर्मी लगती है और उनमें सबसे बुरी बात यह है कि पिछली बार, जहां तक उन्हें ठीक से याद है, युद्ध छिड़ने से पहले त्बिलिसी से बाकू तक का सफ़र करते समय वे खटमलों के मारे सारी रात बिलकुल नहीं सो पाये थे।

उन लोगों ने फ़ैसला किया कि जलील-मुअल्लिम को तीसरे दर्जे

में यात्रा करना शोभा नहीं देगा। इस प्रकार उन्होंने बिना गद्दोंवाले डिब्बे में ही यात्रा करने का फ़ैसला किया। यह सच है कि आग़ा-समेद ने कभी ऐसे कंपार्टमेंट में यात्रा नहीं की थी (क्योंकि युद्ध से पूर्व वे थे ही नहीं। लेकिन उनके कहने के अनुसार कुछ ऐसे परिचित हैं, जिन्होंने कहा है कि जो भी आदमी आराम से, बिना धक्का-मुक्की के परिवार सहित स्वास्थ्य-स्थलों की यात्रा करना चाहता है, उसके लिए बिना गद्दों के डिब्बेवाले कंपार्टमेंट में सफ़र करना पूर्णतः उपयुक्त है।

जलील-मुअल्लिम ने अपने मकान की चाबियां अपने निकटतम पड़ोसी, तेलकर्मी करीम को सौंप दीं। उसे आवश्यकता से अधिक कष्ट न देने के इरादे से जलील-मुअल्लिम ने अहाते के नल में पाइप लगाकर उन्हें अपने बगीचे और क्यारियों में इस तरह डाल दिया था कि करीम को उनके द्वारा नपे-तुले परीक्षणों के बाद तय किये समय—केवल पैंतालीस मिनट के लिए रोज़ाना शाम को पूरा नल खोलने की जरूरत रह गयी थी।

जलील-मुअल्लिम को जिस डिब्बे में सपरिवार यात्रा करनी थी, वह वास्तव में बहुत आरामदेह था। उन्होंने सन्तोष प्रकट करते हुए पालिश की हुई लकड़ी की शायिकाओं और चमचमाते प्लास्टिक से मढ़ी दीवारों पर हाथ फेरा, बिजली के बटनों की जांच की, जिनको दबाकर अपनी इच्छानुसार रोशनी तेज़ या हलकी की जा सकती थी, बिजली ठीक से जल और बुझ रही थी। फिर नसेनी पर नज़र पड़ते ही वे फ़ौरन समझ गये कि वह किस लिए है। कंपार्टमेंट की जांच कर लेने के बाद उन्होंने सबसे पहले शायिकाओं का बंटवारा किया। निचली शायिकाएं उन्होंने अपनी मां और पत्नी व नन्हे बेटे के लिए छोड़ दीं और ऊपरी अपने तथा अपनी बेटी के लिए रखीं। फिर उन्होंने अपनी घड़ी पर नज़र डाली और यह विश्वास हो जाने पर कि गाड़ी रवाना होने में अभी लगभग आधा घंटा बाक़ी है, वे भागकर प्लेटफ़ार्मवाली दुकान पर गये और खनिज-जल की दस बोतलें ख़रीद लाये, ताकि सफ़र में किसी को भी, ख़ासकर बच्चों को कच्चा पानी न पीना पड़े। आख़िर गर्मी का मौसम था, जो हर तरह की छूत की बीमारियां फैलने के लिए सबसे उपयुक्त होता है। ट्रेन के रवाना होते ही जलील-मुअल्लिम ने टायलेट में जाकर स्वास्थ्य-स्थल की यात्रा से पूर्व विशेष

रूप से खरीदा गया नया, धारीदार स्लीपिंग सूट और रबड़ के नये स्लीपर पहन लिये। वे पूरी तरह अंधेरा हो जाने तक कुछ समय के लिए कारिडर में खड़े रहे, फिर अपने कंपार्टमेंट में गये, जहां मरियम खानम किस्लोवोद्स्क के क़िस्से सुना रही थीं। अपनी मां का खुशी से खिला चेहरा देखते हुए उन्हें सन्तोष अनुभव हुआ कि उन पर यात्रा का लाभकारी प्रभाव पड़ रहा है और खुदा ने चाहा, तो वह उनके स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी सिद्ध होगी। मरियम खानम किसी "भूलते महल", उसके चारों ओर की किन्हीं छायादार घासस्थलियों और 'भूलते महल' में घटी एक ऐसी घटना के बारे में बता रही थीं, जिसका पूरा ब्योरा जलील-मुअल्लिम को जबानी याद था। लेकिन किसी प्रकार भी उनकी समझ में यह नहीं आ पाया था कि या तो उसमें रेस्तरां था या वह किसी रेस्तरां में था। उसमें एक शाम को हुए डांस के दौरान उनके मरहूम अब्बा की अपने एक बहुत दूर के रिश्तेदार कर्नल मेहमानदारोव से मुलाक़ात हुई थी, उन्हीं से, जो ज़ारशाही सेना में कर्नल रहे थे और क्रान्ति के दौरान लाल सेना में जा मिले थे और बाद में पदोन्नति होने पर पहले सोवियत जनरलों में से एक हो गये थे।

जलील-मुअल्लिम मरियम खानम का लगभग पूरा क़िस्सा (जनरल ने, जो उनसे पहली बार मिला था, कैसे उन्हें दो बार टेंगो नाचने के लिए निमंत्रण दिया और बयराम बेग ने उसकी पत्नी को...) सुनते रहे, फिर उन्होंने मां को शिष्टतापूर्वक टोककर याद दिलाया कि अब सोने का समय हो गया है। उन्होंने ऐसा इसलिए किया, क्योंकि वे इसके आगे का सारा क़िस्सा जानते थे: फिर कैसे शाम को वे लोग शेम्पेन और वाद्यकारों को साथ लेकर दो फ़िटनों में सुबह होने तक घूमते रहे थे। उनके पिता को खूब चढ़ गयी थी और वे कैसे सब लोगों को हंसाते रहे थे। फिर घर पर मरियम खानम को उनको सोने के लिए काफ़ी देर तक मनाना पड़ा था। जलील-मुअल्लिम इसके आगे का क़िस्सा बच्चों के सामने, खास तौर पर दस वर्षीया बेटी के सामने सुनाये जाने के बिलकुल खिलाफ़ थे।

रात को वे शान्ति से गहरी नींद सोये। सुबह की होने में वे खास तौर से केवल यह देखने के लिए जागे कि कंपार्टमेंट में सब ठीक-ठाक है या नहीं और केवल इतना सोचकर कि यह सब वास्तव में हो रहा

है और अगले दिन ही वे किस्लोवोद्स्क पहुंच जायेंगे, वे तुरन्त फिर सो गये। उनका चित्त प्रसन्न था।

किस्लोवोद्स्क स्टेशन पर टैक्सी का काफ़ी देर इंतज़ार करना पड़ा। मां ने बताया कि उनकी पिछली यात्रा के दौरान ट्रेन से उतरते ही गाड़ीवानों ने उन्हें घेर लिया था और वे यात्रियों का सामान अपनी-अपनी फ़िटन की ओर उठा ले जाने की कोशिश में आपस में बस लड़ ही नहीं पड़े थे।

आखिरकार टैक्सी आयी। जब उन्होंने ड्राइवर से उस ब्यूरो तक ले चलने को कहा, जहां स्थानीय लोग विश्राम के लिए आये लोगों को कमरे किराये पर देते हैं, तो मालूम पड़ा कि वह स्टेशन के पास ही है। ब्यूरो में जाकर जलील-मुअल्लिम ने कहा कि उन्हें 'पसली-पहाड़ी' पर किसी घर में एक कमरा चाहिए। वे मां को खुशी देना चाहते थे। तुरन्त एक औरत लपककर उनके पास आयी और बोली कि वह 'पसली-पहाड़ी' पर स्थित अपने घर का एक कमरा किराये पर देना चाहती है, कमरा साफ़-सुथरा, रोशनीदार और सर्वसुविधायुक्त है और उसकी दो खिड़कियां बगीचे में खुलती हैं।

जलील-मुअल्लिम ने मकान-मालकिन को टैक्सी में बैठने को कहा और वे सब रवाना हो गये। मरियम खानम वैसी ही पुलकित और प्रसन्नचित्त ड्राइवर के पास बैठी हुई थीं, जैसी कि वे रेलगाड़ी में थीं। वे लगातार यह कहती जा रही थीं कि किसी न किसी तरह बच्चों को सारे दर्शनीय स्थल दिखाने लायक़ ताकत जुटा ही लेंगी। फिर वे भीड़ भरे साफ़-सुथरे, सुन्दर रास्तों, जिनसे मोटरों व कारों की क़तारें फ़र्राटे से गुज़र रही थीं, बड़ी-बड़ी, शीशे लगी खिड़कियों और खुली बालकनियोंवाली उजली इमारतों को ध्यानपूर्वक देखकर अचानक चुप हो गयीं। जब वे अपने बेटे की ओर मुड़ीं, तो जलील-मुअल्लिम ने देखा कि वे घबरा गयी हैं और परेशान भी हैं।

"जलील!" उन्होंने पूछा। "यह हम कहां आ गये हैं?"

"किस्लोवोद्स्क!" जलील-मुअल्लिम ने कहा।

"नहीं," मरियम खानम बोलीं। "यह किस्लोवोद्स्क नहीं है।"

"यह तब से बहुत बदल गया है," जलील-मुअल्लिम ने कुछ सोचकर कहा। "आप तो बाकू में भी कहीं आती-जाती नहीं हैं, वरना आपको मालूम हो जाता कि वह कितना बदल गया है। वहां नये-

नये रास्ते बन गये है। आजकल हर जगह तामीर का काम बहुत तेजी
से हो रहा है। हम अभी 'पसली पहाड़ी' पहुंच जायेंगे, तब फ़ौरन
आपको सब याद आ जायेगा," मां का हौसला बढ़ाने के इरादे से
उन्होंने मज़ाक करने की कोशिश की, "और यक़ीन भी आ जायेगा
कि हम किस्लोवोद्स्क में है, न कि सोची में।"

जलील-मुअल्लिम के अनुरोध पर ड्राइवर ने 'पसली पहाड़ी'
के एक छोर से दूसरे छोर तक दो चक्कर लगाये, ताकि उनकी मां
अपना जाना-पहचाना रास्ता देखकर कुछ शान्त हो जायें।

उन्होंने ड्राइवर से एक मिनट के लिए उस घर के सामने भी
गाड़ी रोकने को कहा, जिसमें मां अपनी पिछली यात्रा के दौरान रही
थी। मरियम खानम ने उस घर के बारे में उन्हें इतनी बार विस्तार से
बताया था कि उन्हें उसका नम्बर हमेशा के लिए याद हो गया था।

"यही है आपकी 'पसली पहाड़ी'," जलील-मुअल्लिम ने कहा,
"आप यही ठहरी थीं।"

"यह किस्लोवोद्स्क नहीं है," उनकी मां ने हठ किया और
वे उनका वृद्धावस्था सुलभ क्लान्त व बुझा हुआ स्वर सुनकर हतप्रभ
रह गये। "कोई शहर इतना कभी नहीं बदल सकता, कोई चीज
कभी इस तरह नहीं बदलती, हमेशा कुछ-न-कुछ तो बदले बिना रह
जाता है। यहां तो अब हवा भी वैसी नहीं रही है, मुझे उसकी गंध
याद है। यह कोई दूसरा शहर है, मैं कह तो रही हूं, इसका नाम
भले ही कुछ भी हो। यहां तो एक भी चीज वैसी नहीं है। मुझे सब
कुछ अच्छी तरह से याद है, तुम जानते ही हो कि मेरी याददाश्त
कितनी अच्छी है। यह रास्ता बिलकुल भी 'पसली पहाड़ी' जैसा
नहीं लगता, जिस पर तुम्हारे अब्बा के साथ मैं रही थी। कोई कुछ
भी क्यों न कहे, पर तुम मुझ पर यक़ीन करो, यह वह जगह नहीं
है।"

उद्विग्न जलील-मुअल्लिम ड्राइवर की मदद से सारा सामान घर
में ले गये। कमरा वास्तव में ही खासा बड़ा और रोशनीदार था।
उसमें कपड़ों की एक अलमारी, मेज़ और तीन पलंग थे, जिनमें से
एक पर दो लोग सो सकते थे। मकान-मालकिन उनकी बेटी के लिए
एक सफ़री-पलंग ले आयी। जलील-मुअल्लिम ने अपने लिए एक पलंग
थोड़ा परे खींचकर, मकान-मालकिन द्वारा ही लाये आड़गीर को लगाकर

उसे बाक़ी कमरे से अलग कर लिया।

जलील-मुअल्लिम को वह घर पसंद आया, शायद इसलिए कि
वह उनके बाकूवाले घर से बहुत मिलता-जुलता था। उसमें भी पहली
मंजिल पर चार कमरे लगभग वैसी ही स्थिति में थे और घर के चारों
ओर चौड़ा बरामदा भी था। गुस्लखाने में वैसा ही गीज़र भी लगा
था। अन्तर केवल इतना ही था कि लकड़ी की ढुळती छत पर लाल
टाइलें लगी हुई थीं। जलील-मुअल्लिम ने सोचा कि उन्हें वैसी ही
छत अपने मकान पर भी बनानी चाहिए। वह सपाट छत से बेहतर
होगी और डामर बिछी होने के कारण उसे गर्मियों में ज़्यादा तपने
भी नहीं देगी। उन्होंने फ़ैसला किया कि वे यह काम सीमुर्ग के लौट
आने के बाद करेंगे। ढुळती भी उनके काम आयेगी। वे वहां मधुमक्खी-
पेटियां रखा करेंगे। मधुमक्खियों को भी ऊंचाई पर और तेज़ हवाओं
से बचे रहना अच्छा लगेगा।

जलील-मुअल्लिम ने मां का हौसला बढ़ाने की काफ़ी कोशिश की।
शुरू में उन्होंने अपना सारा समय मां को उन स्थानों पर ले जाने में
लगाया, जिनके बारे में बहुत कुछ सुनने में आया था। वे अगले दिन
सुबह ही 'झूलते महल' भी गये। मां से सुने क़िस्सों के आधार पर
वे सोचते थे कि यह स्थान शहर से बाहर, किसी वन में एक अद्भुत
स्थान होगा, हालांकि उन्होंने कभी उसे अपनी कल्पना में साकार नहीं
किया था। फिर भी उनका विचार था कि वह बबूल या लाइलैक के
साधारण वृक्षों के बीच से निकलते और डामर बिछे पथों से घिरा,
साधारण शहरी बाग़ में छत पर खुले बरामदेवाला नया रेस्तरां तो
हरगिज़ नहीं होगा।

जब वे लोग "झूलते महल" के पास टैक्सी से निकले तो मरियम
खानम ने कहा, "अच्छी जगह है।" वे अब अपने बेटे की आशाओं
पर तुषारापात करने के लिए स्वयं को दोषी अनुभव कर
रही थीं। मरियम खानम ने सबको खुश करने की खातिर पूरी कोशिश
की। वास्तव में उन्होंने यह यात्रा भी किस्लोवोद्स्क की अपनी सुमधुर
स्मृतियों की पुष्टि करने की आशा से तय की थी। "बच्चों को तो
खेलने का मौक़ा मिलेगा।"

जलील-मुअल्लिम ने केवल एक ठण्डी सांस लेकर अपनी पत्नी
से नजरें मिलायीं। उन्हें इस बात से राहत महसूस हो रही थी कि

उन्होंने मां के सामने अपने आपको यह डींग हांकने से रोक लिया कि अब वे इतने वर्षों बाद अपने उस मनचाहे "झूलते महल" के सामने खड़ी हैं।

उस स्थान से, जहां वे बरामदे में मेज पर बैठे हुए थे, धूप में छटते कोहरे में लिपटे सारे शहर का दृश्य दिखाई दे रहा था। दृश्य बुरा नहीं था, पर वह बाकू के नगोरनी पार्क में बने "द्रूभबा" रेस्तरां से दिखाई देनेवाले अद्भुत परिदृश्य की तुलना में कुछ भी नहीं था। यहां की व्यंजन-सूची भी "द्रूभबा" से बहुत खराब थी, तिस पर बेटर के आने पर मालूम पड़ा कि उसमें से आधे से ज़्यादा खाने वास्तव में तैयार ही नहीं हैं।

विनम्र बेटर ने उन्हें विश्वास दिलाया कि सुबह जो खाने तैयार नहीं किये जाते हैं, वे शाम के मेन्यू में जरूर रखे जाते हैं। लेकिन जलील-मुअल्लिम को पक्के तौर पर मालूम था कि बाकू में अनार का रस और बारीक कटे रैहां के साथ भुनी स्टर्जियन मछली दिन भर मिल सकती है। अब वे अच्छी तरह से समझ गये कि हालांकि दूसरे शहरों से आनेवाले लोगों के बारे में तो कुछ नहीं कह सकते, पर बाकूवासियों के लिए किस्लोवोद्स्क जन्नत नहीं है।

वे दूसरे स्थानों पर भी गये, जिनके सपने वे अकसर देखा करते थे, पर कोई अन्तर नहीं अनुभव हुआ। ऐसे भ्रमण के समय मरियम खानम की कुछ-कुछ यादें ताज़ा होती-सी लगती थीं, पर बिना विशेष उत्साह के। जलील-मुअल्लिम को उन पर विश्वास नहीं होता था, बल्कि सन्देह होता था कि अपने मधुर स्वभाव के कारण वे उन्हें पूरी तरह निराश नहीं करना चाहती हैं। अन्ततः वे इन भ्रमणों से थक गयी और उन्होंने तुरन्त अपनी बहू के साथ सलाह करके उन लोगों को घर पर ही रहने देने का आग्रह किया, क्योंकि शहर में वे काफ़ी घूम चुकी थी और उसमें उन्हें अब कोई खासियत नजर नहीं आती थी।

इसलिए जलील-मुअल्लिम नाश्ता करके अपने परिवार को घर पर ही छोड़कर दिन भर शहर में घूमने निकल जाते। उनके बच्चे बगीचे में मकान-मालकिन के अपने हमउम्र बच्चों के साथ खेलते रहते। स्त्रियां, जिनकी मकान-मालकिन से दोस्ती हो गयी थी, सुबह उसके साथ बाज़ार चली जाती और बाक़ी दिन घर के काम-काज में लगी रहतीं।

जलील-मुअल्लिम सबसे पहले मुख्य डाकखाने जाकर मालूम करते कि उनके नाम सीमुर्ग का कोई पत्र आया है या नहीं, फिर पार्क में चले जाते या यूं ही शहर के रास्तों पर घूमते रहते। वे अलग-अलग कमरोंवाले एक हम्माम का पता मालूम करके उसमें गये, पर वहां से बहुत नाराज़ होकर और दोबारा वहां कभी न जाने की क़सम खाकर बाहर निकले। कमरे तंग गुस्लखानों जैसे निकले और कपड़े बदलने के कमरे संकरी कोठरियों जैसे, जिनमें कार्बोलिक की बू भरी रहती थी।

दिन बीत रहे थे। जलील-मुअल्लिम रोज़ाना अकेले घूमते, पर दिन-प्रतिदिन अपने शहर और बगीचे को याद करके बहुत दुखी होते रहते। वे यही कल्पना करते थे कि वे ईंटों के चूरे बिछे लाल पथों, सफ़ेद खम्भों पर टिके मेहराबवाले और सुबह से रात देर तक आर्केस्ट्रा पर अनजानी सिम्फ़नियां मुफ़्त बजानेवाले उबाऊ पार्क में नहीं, बल्कि बाकू की अपनी गली में हैं। कल्पना करते कि वे अपने पड़ोसियों के साथ गपशप कर रहे हैं, या अपने बगीचे में काम कर रहे हैं, या हम्माम में नहाकर आने के बाद चायखाने में चाय पी रहे हैं। जलील-मुअल्लिम झुण्ड बनाकर दिन भर मटरगश्ती कर रहे लोगों को देखते हुए यह समझने की कोशिश करते थे कि आखिर इनका किस्लोवोद्स्क आने का उद्देश्य क्या है। वे इलाज के लिए वहां आनेवाले आदमी की बात समझ सकते थे, हालांकि उन्हें विश्वास नहीं था कि खनिज-जल से किसी की कोई बीमारी दूर हो सकती है। पर ये बाक़ी लोग क्या कर रहे हैं? हट्टे-कट्टे लोग पराये शहर के रास्तों पर, पार्कों में मटरगश्ती कर रहे हैं, जैसे वे यह सब वहां नहीं कर सकते थे, जहां से आये हैं। उन्हें यह भी आश्चर्य होता कि इन खुशहाल लोगों को, उनमें से अधिकतर उन्हें ऐसे ही दिखते थे, दुनिया के इस दूसरे छोर पर आने और एक कमरे में तीन-तीन या चार-चार करके रहने की, जैसा कि वे स्वयं कर रहे हैं, हालांकि बाकू में उनका अपना चार कमरोंवाला घर है, आखिर क्या ज़रूरत पड़ी है। वे बराबर इसी बारे में सोच-सोचकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इन सब लोगों को, जो खुदा ही जाने, किस चीज़ की तलाश में आये हैं, वह चीज़ न मिल पाने और अनेक अन्य कारणों से, यहां से समय से पहले लौटना असुविधाजनक लग रहा है। कुछ को कमरों के पेशगी चुकाये भाड़े के बेकार जाने की

उन्होंने मा के सामने अपने आपको यह डीग हांकने से रोक लिया कि अब वे इतने वर्षों बाद अपने उस मनचाहे "झूलते महल" के सामने खड़ी हैं।

उस स्थान से, जहा वे बरामदे में मेज पर बैठे हुए थे, धूप में छटते कोहरे में लिपटे सारे शहर का दृश्य दिखाई दे रहा था। दृश्य बुरा नहीं था, पर वह बाकू के नगोरनी पार्क में बने "द्रुझबा" रेस्तरां से दिखाई देनेवाले अद्भुत परिदृश्य की तुलना में कुछ भी नहीं था। यहां की व्यंजन-सूची भी "द्रुझबा" से बहुत खराब थी, तिस पर वेटर के आने पर मालूम पड़ा कि उसमें से आधे से ज्यादा खाने वास्तव में तैयार ही नहीं हैं।

विनम्र वेटर ने उन्हें विश्वास दिलाया कि सुबह जो खाने तैयार नहीं किये जाते हैं, वे शाम के मेन्यू में जरूर रखे जाते हैं। लेकिन जलील-मुअल्लिम को पक्के तौर पर मालूम था कि बाकू में अनार का रस और बारीक कटे रैहां के साथ भुनी स्टर्जियन मछली दिन भर मिल सकती है। अब वे अच्छी तरह से समझ गये कि हालांकि दूसरे शहरों से आनेवाले लोगों के बारे में तो कुछ नहीं कह सकते, पर बाकूवासियों के लिए किस्लोवोद्स्क जन्नत नहीं है।

वे दूसरे स्थानों पर भी गये, जिनके सपने वे अकसर देखा करते थे, पर कोई अन्तर नहीं अनुभव हुआ। ऐसे भ्रमण के समय मरियम खानम की कुछ-कुछ यादें ताज़ा होती-सी लगती थीं, पर बिना विशेष उत्साह के। जलील-मुअल्लिम को उन पर विश्वास नहीं होता था, बल्कि सन्देह होता था कि अपने मधुर स्वभाव के कारण वे उन्हें पूरी तरह निराश नहीं करना चाहती हैं। अन्ततः वे इन भ्रमणों से थक गयीं और उन्होंने तुरन्त अपनी बहू के साथ सलाह करके उन लोगों को घर पर ही रहने देने का आग्रह किया, क्योंकि शहर में वे काफ़ी घूम चुकी थीं और उसमें उन्हें अब कोई खासियत नजर नहीं आती थी।

इसलिए जलील-मुअल्लिम नाश्ता करके अपने परिवार को घर पर ही छोड़कर दिन भर शहर में घूमने निकल जाते। उनके बच्चे बगीचे में मकान-मालकिन के अपने हमउम्र बच्चों के साथ खेलते रहते। स्त्रियां, जिनकी मकान-मालकिन से दोस्ती हो गयी थी, सुबह उसके साथ बाज़ार चली जातीं और बाक़ी दिन घर के काम-काज में लगी रहतीं।

जलील-मुअल्लिम सबसे पहले मुख्य डाकखाने जाकर मालूम करते कि उनके नाम सीमुर्ग का कोई पत्र आया है या नहीं, फिर पार्क में चले जाते या यूं ही शहर के रास्तों पर घूमते रहते। वे अलग-अलग कमरोंवाले एक हम्माम का पता मालूम करके उसमें गये, पर वहां से बहुत नाराज होकर और दोबारा वहां कभी न जाने की क़सम खाकर बाहर निकले। कमरे तंग गुस्लखानों जैसे निकले और कपड़े बदलने के कमरे संकरी कोठरियों जैसे, जिनमें कार्बोलिक की बू भरी रहती थी।

दिन बीत रहे थे। जलील-मुअल्लिम रोज़ाना अकेले घूमते, पर दिन-प्रतिदिन अपने शहर और बगीचे को याद करके बहुत दुखी होते रहते। वे यही कल्पना करते थे कि वे ईंटों के चूरे बिछे लाल पथों, सफ़ेद खम्भों पर टिके मेहराबवाले और सुबह से रात देर तक आर्केस्ट्रा पर अनजानी सिम्फ़नियां मुफ़्त बजानेवाले उबाऊ पार्क में नहीं, बल्कि बाकू की अपनी गली में हैं। कल्पना करते कि वे अपने पड़ोसियों के साथ गपशप कर रहे हैं, या अपने बगीचे में काम कर रहे हैं, या हम्माम में नहाकर आने के बाद चायख़ाने में चाय पी रहे हैं। जलील-मुअल्लिम झुण्ड बनाकर दिन भर मटरगश्ती कर रहे लोगों को देखते हुए यह समझने की कोशिश करते थे कि आखिर इनका किस्लोवोद्स्क आने का उद्देश्य क्या है। वे इलाज के लिए वहां आनेवाले आदमी की बात समझ सकते थे, हालांकि उन्हें विश्वास नहीं था कि खनिज-जल से किसी की कोई बीमारी दूर हो सकती है। पर ये बाक़ी लोग क्या कर रहे हैं? हट्टे-कट्टे लोग पराये शहर के रास्तों पर, पार्कों में मटरगश्ती कर रहे हैं, जैसे वे यह सब वहां नहीं कर सकते थे, जहां से आये हैं। उन्हें यह भी आश्चर्य होता कि इन खुशहाल लोगों को, उनमें से अधिकतर उन्हें ऐसे ही दिखते थे, दुनिया के इस दूसरे छोर पर आने और एक कमरे में तीन-तीन या चार-चार करके रहने की, जैसा कि वे स्वयं कर रहे हैं, हालांकि बाकू में उनका अपना चार कमरोंवाला घर है, आखिर क्या ज़रूरत पड़ी है। वे बराबर इसी बारे में सोच-सोचकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इन सब लोगों को, जो खुदा ही जाने, किस चीज की तलाश में आये हैं, वह चीज न मिल पाने और अनेक अन्य कारणों से, यहां से समय से पहले लौटना असुविधाजनक लग रहा है। कुछ को कमरों के पेशगी चुकाये भाड़े के बेकार जाने की

बात सोचकर दुख होता है, कुछ को इस बात का कि समय से पहले घर लौट जाने पर पड़ोसी क्या कहेंगे और कुछ को शायद रेल के टिकट नहीं मिल पा रहे हैं... वैसे जलील-मुअल्लिम को पूरा विश्वास था कि किस्लोवोद्स्क आनेवाले अधिकांश लोग कुछ ही दिनों बाद अपने-अपने ठिकानों पर लौट जाते हैं, पर यह वैसी ही भीड़ रोजाना यहां नये आनेवाले भोले-भाले लोगों के कारण ही दिखाई देती है।

अगर उन्हें अपने पड़ोसियों की चिन्ता न होती, जिनकी राय में उनके समय से पहले लौट आने पर उनकी यात्रा का महत्त्व तुरन्त और सदा के लिए कम हो सकता है, तो वे बिना सोच-विचार किये फ़ौरन वापस चले गये होते। वे सीमुर्ग को तार भेज देते ताकि वह बेकार उन्हें वहां पत्र न लिखे, डाकखाने में कह देते कि संयोगवश कोई पत्र उनकी मार्फ़त आये, तो वे उसे बाकू भेज दें। वरना इस तरह तो उन्हें कम-से-कम यहां दो हफ़्ते और अटके रहना पड़ेगा।

एक दूसरे से मिलते-जुलते दिन काटे नहीं कट रहे थे। और शामें भी। जलील-मुअल्लिम शाम को आदतन पार्क में टहलने जाते, पर इससे उन्हें ज़रा भी खुशी हासिल न होती जैसी कि बाकू में होती थी। वहां क़दम-क़दम पर उन्हें अपने परिचित मिलते थे, वे अपने आपको एक आवश्यक और सम्मानित व्यक्ति अनुभव करते थे। वे वीथि पर चलते, जिसका नाम न जाने क्यों 'गुलाब बाग़' रख दिया गया था, और एक निर्वृक्ष मैदान में पहुंच जाते जिसके बीचोंबीच फूलों से कैलेंडर बना हुआ था। कैलेंडर में सफ़ेद फूलों से दिखायी जानेवाली रोज़ाना बदलती तारीखें ही उस मैदान का सहनीय और किंचित प्रीतिकर भाग था, वरना उनकी सारी सैर उन्हें उबाऊ और बेकार लगती। जलील-मुअल्लिम को इस तथ्य की स्पष्ट और प्रभावशाली ढंग से पुष्टि होते देखकर सन्तोष अनुभव होता कि उनके यहां से जाने का एक और दिन क़रीब आ गया है। और वे पार्क के ऊपरी हिस्से की ओर बढ़ जाते। वे यूं ही निरुद्देश्य चलते जाते; आखिर कहीं तो जाना ही चाहिए और उन्हें घर लौटने की इच्छा न होती, क्योंकि वहां सभी कब के सो गये होंगे। हल्के अंधेरे में डूबी झाड़ियों में से अस्पष्ट आवाज़ें और दबी हुई हंसी सुनाई देती रहती। जलील-मुअल्लिम जानते थे कि अगर वे पगडंडी से नीचे उतरे, तो कुछ मिनट में एक ऐसी बेंच के सामने पहुंच जायेंगे, जिसे प्रेमी-युगल कुछ सेंटीमीटर

चौड़े पांच-छः तटस्थ क्षेत्रों में बांटकर, जिससे उसके दो स्वामियों को अपनी सर्वसत्ता और स्वतंत्रता का पूर्ण आभास होता है, चूमाचाटी कर रहे होंगे।

जलील-मुअल्लिम ने वितृष्णा से मुस्कराकर सोचा कि क्या ज़रूरत पड़ी है इन लोगों को इतना समय और पैसा खर्च करने की, अपना सामान बांधकर रेल या हवाई जहाज़ से केवल इसलिए यहां आने की, ताकि एक बेंच पर ठुंसकर बैठें और किसी को चूमचाट सकें, जबकि, जब जी चाहे, ये यही सब कुछ अपने शहर में भी कर सकते हैं।

हवा में भीनी-भीनी सुगंध व्याप्त हो रही थी। लोग उस निर्मल, ग्रीष्मकालीन रात्रि को एकाएक अपने साथ किन्हीं अनजाने फूलों की भीनी खुशबू लेकर आये झोंके के कारण न जाने क्यों अप्रत्याशित रूप से उत्तेजित हो उठे।

जलील-मुअल्लिम को फूलों की खुशबू आ रही थी, पर उन्हें उनका नाम याद नहीं आ पा रहा था। उन्होंने सोचा कि ये तम्बाकू के फूल ही होने चाहिए, पर इन फूलों के खिलने में तो अभी आधा महीना बाक़ी था।

वे थककर ग्रीष्मकालीन सिनेमाघर के सामनेवाली एक बेंच पर बैठ गये। उनके पास एक व्यक्ति आकर बैठा, तो धुंधले प्रकाश के बावजूद वे पहचान गये कि वह उनका बाकू का पड़ोसी अभियोक्ता हसानोव है। उन्होंने एक दूसरे का सहृदयता से अभिवादन किया। पराये शहर में अपने किसी परिचित के मिलने पर वास्तव में ही बहुत प्रसन्नता होती है, तिस पर जब वह एक बुद्धिजीवी और सम्मानित व्यक्ति हो। अभियोक्ता बहुत अच्छे मूड में था और उसके मुंह से अंगूरी शराब और सीख-कबाब की गंध आ रही थी। उसने बताया कि वह अपनी पत्नी और बेटे को लेने सिनेमाघर के सामने आया है।

"मेरी पत्नी तीसरी बार यह फ़िल्म 'गार्नेट ब्रेसलेट' देखने आयी है। जब भी उसे देखती है, रोती रहती है। मैं भी इस मौक़े का फ़ायदा उठाकर अपने एक दोस्त के साथ सीख-कबाब खा आया हूं। अब उन्हें घर ले जाना है। मालूम नहीं कि फ़िल्म जल्दी ही खत्म होनेवाली है या नहीं। किससे मालूम किया जा सकता है?"

जलील-मुअल्लिम ने फ़िल्म जल्दी ही खत्म हो जाने के बारे में बताकर हसानोव से पूछा कि क्या वे लोग किस्लोवोद्स्क में काफ़ी

4-0300

दिनों से है और उन्हें यहां कैसा लगता है।

"जन्नत है," अभियोक्ता ने संक्षिप्त उत्तर दिया, "सचमुच जन्नत है। जैसे ही मुझे खयाल आता है कि मुझे एक हफ़्ते बाद ही तपते भट्ठे जैसे बाकू लौटना होगा मुझे ठण्डा पसीना आने लगता है... मैं तो यहां हर साल आता हूं। आराम करने के लिए यह सबसे अच्छी जगह है। आबोहवा भी बढ़िया है, दिल बहलाने के भी खूब मौक़े मिलते हैं और खाने-पीने के सामान की तो बस पूछिये ही मत, सब ताज़ा मिलता है..."

जलील-मुअल्लिम को लगा जैसे उनके कानों को धोखा हुआ है।

"आपको यहां बहुत अच्छा लगता है?"

"और क्या!" अभियोक्ता ने उन्हें घूरकर देखा। "वरना मैं अपनी छुट्टी कभी यहां बिताने आ सकता था? मैं पूरे साल माथा खपाता रहता हूं, काम ही मेरा ऐसा है, बस यही सपना देखता रहता हूं कि कब जल्दी से छुट्टी मिले और किस्लोवोद्स्क पहुंचूं। आपको क्या यहां अच्छा नहीं लगता?" अभियोक्ता ने, जिसमें जलील-मुअल्लिम के प्रश्न ने कुतूहल जगा दिया था, पूछा।

"क्यों नहीं," जलील-मुअल्लिम ने अपना दिल न खोलने का फ़ैसला करके किंचित् अस्पष्ट-सा उत्तर दिया। "कुछ मामलों में किस्लोवोद्स्क अच्छा है और कुछ में बाकू।"

"ऐसी क्या अच्छाइयां हैं बाकू में, माफ़ कीजियेगा," अभियोक्ता ने कुछ झल्लाकर कहा। "वैसे वह बेशक एक सुन्दर शहर है। वहां रहना और काम करना अच्छा लगता है, लेकिन साल में एक बार उससे बाहर जाना बहुत ही ज़रूरी है। और किस्लोवोद्स्क इसके लिए सबसे सुविधाजनक जगह है। अहा, वे आ गये मेरे घरवाले," अभियोक्ता ने सिनेमा से निकलती भीड़ में अपनी बीवी और बेटे को पहचानकर कहा। "खुशी से रहिये, जहां तक किस्लोवोद्स्क का सवाल है, तो फिर कभी बात करेंगे इस बारे में, मैं शायद आपको इसका क़ायल कर दूंगा।" उन्होंने एक दूसरे से विदा ली। अभियोक्ता अपने परिवार के साथ बग़ल की एक वीथिका में ओझल हो गया, और जलील-मुअल्लिम सहज भाव से व्यंग्यपूर्वक मुस्कराते हुए उसकी ओर देखते रहे।

उस शाम जलील-मुअल्लिम आम दिनों से कुछ ज़्यादा देर तक

पार्क में रुके रहे। उन्हें अभियोक्ता के साथ हुई एक-एक बात याद आती रही और उनका चित्त किसी प्रकार शान्त न हो पाया। 'कितना बनता है!' जलील-मुअल्लिम कटुता से सोचते रहे। 'आखिर किस लिए? और किसे दिखाने के लिए? किस्लोवोद्स्क अच्छा लगता है इन्हें। मैं कभी इस पर विश्वास नहीं कर सकता! क्या कहने इस अभियोक्ता के! बड़े आये हैं, स्वास्थ्य-स्थल जाये बिना न रह पानेवाले। बाकू पसंद नहीं है इन्हें, उंह!'

जलील-मुअल्लिम ने गुस्से से थूका और अपने डेरे की ओर चल दिये। रास्ते में वे इसी निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभियोक्ता ढोंग कर रहा था, क्योंकि जहां तक उन्हें मालूम है, वह कोई बेवकूफ़ नहीं, बल्कि अक़्लमंद आदमी है और अपने काम में भी खूब माहिर है।

जलील-मुअल्लिम को एक बार फिर इस बात की खुशी और गर्व भी हुआ कि उन्होंने अपनी बातचीत में झूठ और ढोंग का सहारा लिये बिना भी अपने दिल का राज़ बिलकुल नहीं खोला। उन्होंने यहां अपने बाक़ी बचे दिनों में और बाकू लौटने के बाद भी अभियोक्ता से दूर ही रहने का फ़ैसला किया, क्योंकि वह बेईमान है और नाजायज़ ढंग से अपने को दूसरों की नज़रों में ऊंचा उठाना चाहता है।

घर लौटने पर जलील-मुअल्लिम को जिस उत्तेजना और मानसिक सुख की अनुभूति हुई, उसे शब्दों में व्यक्त करना असम्भव था। "दुआ मांगो कि तुम हमेशा अपने घर पर अपने घरवालों के बीच रहो," — अपने जीवन में पहली बार उन्होंने बुज़ुर्गों की इस दुआ की दूरदर्शिता और उसमें छिपे सुख को अनुभव किया। अपनी परम्पराओं का कठोरता से पालन करनेवाली मरियम खानम को भी घर की देहलीज़ पर पैर रखते ही यही अनुभव हुआ था।

जलील-मुअल्लिम ने अपने बगीचे के अपने स्वामी को देखने के लिए तरस रहे हर पेड़, रसीले अंगूरों से लदी हर बेल को ध्यानपूर्वक निहारा। उन्होंने तेज़ धूप में अपने छिलकों के तड़कने से चारों ओर अपनी तीव्र सुगंध फैला रहे पके सरदों की हर क्यारी पर भी नज़र डाली। वहां हर बैंगनी रंग के रैहां तथा ग्रीष्म ऋतु के सुर्ख़-लाल, हलके पीले और सफ़ेद पुष्पों की मादक, सिर चकरा देने और सांस अवरुद्ध करनेवाली सुगंध भी बसी थी।

अपने घर की देहलीज़ लांघते समय जलील-मुअल्लिम के मन में

उमड़ी भावनाओं को शब्दों में व्यक्त करना उनके लिए दूभर था। शायद ऐसी भावनाएं उस प्रवासी पक्षी में होती हैं जो दूर परदेस में लम्बी सर्दी बिताने के बाद घर लौट आया हो। परदेस में हालांकि सूरज भी अपने पूरे तेज से चमकता था, रातें भी स्वच्छ और बिना पाले की होती थीं, दाने-पानी की भी हालत बुरी न थी, हर पत्थर तले, हर पत्ते पर कोई न कोई कीड़ा भी मिलता था, फिर भी सब पराया-सा लगता था, न घोंसला बनाने की इच्छा होती थी और न ही अपनी वंशवृद्धि करने की। अचानक एक दिन वह किसी प्रकार का दुख अनुभव किये बिना अपनी सहज प्रवृत्ति के आदेश का पालन करके उस स्थान को छोड़कर ऐसी उड़ान पर रवाना हो जाता है, जो दुर्बलों के प्रति अत्यन्त निर्मम होती है। केवल अपने देश पहुंचकर ही वह बेहद थका-हारा होने पर भी अपने डैने फैलाता है और खुशी से फूला न समाते हुए अपना मधुर तराना गा उठता है।

जलील-मुअल्लिम को अपनी भावनाओं के बारे में किसी के साथ तर्क-वितर्क करना पसंद नहीं था। लेकिन इस क्षण यदि उनके पास कोई समझदार आदमी होता, तो वे उसे जरूर यह बता देते कि अपने घर लौटने पर उन्हें वास्तव में ही बहुत सुख अनुभव हो रहा है, अपने घर और अपनी गली के सिवा और कहीं भी वे खुद को इतना सुखी महसूस नहीं कर सकते हैं और न ही किसी और ढंग से जी सकते हैं... लेकिन उस उदात्त क्षण में उन्हें अपने साथ इतनी अंतरंगता से बातचीत करने योग्य ऐसा समझदार आदमी कहां मिलता?

वे अकेले, निरुद्देश्य, विक्षिप्त के समान अपने अहाते में चहलक़दमी करते हुए यही सोचते रहे कि उस सब के अलावा, जो उन्होंने देखा और जिसका उन्होंने स्पर्श भी किया, वह ऐसा क्या है, जो उन्हें इतनी शान्ति और आत्मविश्वास प्रदान कर रहा है। काफ़ी देर तक उन्हें कुछ न सूझ पाया, केवल जब उनसे मिलने आये मेहमानों के आने पर उन्हें आवाज़ दी गयी, तभी अचानक उनकी समझ में आया कि इसका कारण उनके ऊपर बॉयलरों की नियमित और शान्त घरघराहट है। जलील-मुअल्लिम हंस दिये और मुस्कराते हुए अपने घर आये अतिथियों का स्वागत करने गये। पड़ोसियों के साथ आधी रात तक बातचीत चलती रही। जलील-मुअल्लिम ने किस्लोवोद्स्क के बारे में अपने विचार व्यक्त करने में संयम से काम लिया, न उसकी प्रशंसा

की न बुराई और अपने क़िस्सों में केवल तथ्यों का उपयोग करते हुए अपनी राय बताने से कतराते रहे। बस एक क्षण ऐसा आया, जब वे भावुकता में बहकर कह उठे कि बाकू में बिकनेवाला नरज़ान खनिज-जल बिल्कुल किस्लोवोद्स्क में बेचे जानेवाले बोरझोमी या इस्ती-सू खनिज-जल जैसा नहीं है, क्योंकि वे खास तौर से उन्हें अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग समय में पीकर आज़मा चुके हैं। वे इतने गरम थे कि उनको मतली भी आने लगती थी। इन खनिज जलों को पीने से मुंह में अजीब-सा स्वाद महसूस होने लगता है और इससे मूड भी ख़राब हो जाता है।

किस्लोवोद्स्क के बाद जलील-मुअल्लिम की अनुपस्थिति में उनके आस-पड़ोस में घटित घटनाओं की चर्चा छिड़ी। घटनाओं की कमी नहीं थी और सुनने में काफ़ी समय लगा, पर जलील-मुअल्लिम सब कुछ बड़ी दिलचस्पी से सुनते रहे। सबसे अहम खबर यह थी कि उनके सामनेवाला पड़ोसी रशीद नजफ़ज़ादे सुमगाईत में काम मिलने पर किसी के साथ अपना मकान बदलकर वहां चला गया है। उन्होंने यह भी बताया कि रशीद को जलील-मुअल्लिम की अनुपस्थिति का बहुत अफ़सोस हुआ, क्योंकि वह उनके साथ सलाह-मशविरा करना चाहता था। लेकिन फिर उसने खुद ही जाने का फ़ैसला कर लिया, क्योंकि वहां के कारखानेवाले उसका इंतज़ार करने को तैयार न होते और उसके सामने जो सुविधाएं पेश की गयी थीं, वे वास्तव में बाकू के मुक़ाबले बेहतर थीं। फिर टेकनीशियन मात्र होने के बावजूद उसके सेवा-काल को ध्यान में रखकर उसे अच्छे वेतन के साथ इंजीनियर का पद दिया जा रहा था। उसे बदले में जो फ़्लैट मिल रहा था, वह भी एक नये घर में था। ये सब अच्छी बातें सुनने के बावजूद पड़ोसियों को चुप्पी साधकर एक दूसरे की ओर देखते रहने से जलील-मुअल्लिम भांप गये कि वे अवश्य ही कोई बुरी खबर सुनाने से अपने आप को रोक रहे हैं, ताकि उनका दिल न दुखे। जलील-मुअल्लिम ने उनसे आगे बताने का आग्रह किया। तब पड़ोसियों ने कहा कि रशीद के मकान में आकर रहनेवाला व्यक्ति टैक्सी-ड्राइवर मनफ़ है, जो किसी को पसंद नहीं है, क्योंकि उसके आ बसने के बाद से महल्ले में जीना दूभर हो गया है। उसे न लाज है, न शर्म। वह लगभग रोज़ाना पीकर धुत्त हो जाता है, फिर या तो गली के नुक्कड़ पर खड़ा हो जाता है, या

पड़ोसियों से ज़बरदस्ती ऐसी बातें करने लगता है जिनसे मतली आने लगती है, या फिर घर जाकर अपनी घरवाली से लड़ने-झगड़ने लगता है, ऐसी भद्दी-भद्दी गालियां देता है, जो बदतर-से-बदतर गुण्डे को भी न आती होंगी। गर्मियों में खिड़कियां खुली रखने के कारण औरतों और बच्चों को भी यह सब सुनना पड़ता है। सबसे भयानक बात यह है कि उसकी घरवाली भी गाली-गलौज और बेशर्मी के मामले में अपने पति से उन्नीस नहीं है। उसकी मनहूस, तीखी आवाज़ सारे महल्ले में गूंजती है। लगता है, मियां-बीवी दोनों एक ही आवें के बरतन हैं। उन्हें न तो अपनी सयानी बेटी के सामने कुछ शर्म-हया महसूस होती है और न पड़ोसियों के सामने ही।

एक बार जब उनका झगड़ा ज़ोरों पर था, तो दाऊद मोची ने उनका दरवाज़ा खटखटाया और मनफ़ को बाहर बुलाकर यह बेहूदगी बंद करने को कहा। बस मनफ़ डण्डा उठाकर दाऊद पर लपका। दाऊद ने डण्डा उससे छीन लिया और वह उसके ही सिर पर दे मारनेवाला था। यही ग़नीमत हुई कि तुरन्त पहुंचे पड़ोसियों ने उन्हें अलग कर दिया। यह भी तो कोई अच्छी बात नहीं है। दाऊद अभी जवान है और यह नीच भी कोई छोकरा तो है नहीं, गृहस्थी है, बच्चे हैं, कहते हैं, बड़े बच्चे सुमगाईत में काम करते हैं। उसकी उम्र भी ऐसी है, जिसमें लोगों का बहुत पहले ही आदर-सम्मान किया जाने लगता है। वे सब लोग जलील-मुअल्लिम के लौटने का इंतज़ार कर रहे थे, जैसा वे फ़ैसला करेंगे, उन्हें मंज़ूर होगा। जलील-मुअल्लिम ने इस गम्भीर मामले को उसी के अनुरूप लिया और समस्या का कोई हल सोच निकालने का वादा करके पड़ोसियों को विदा किया।

जलील-मुअल्लिम को भी नये पड़ोसी पसंद नहीं आये। जैसे ही उन्हें पहली बार गाली-गलौज सुनाई दिया, उन्हें बहुत ग़ुस्सा आया और उन्होंने पक्का फ़ैसला कर लिया कि या तो नया पड़ोसी आगे से ऐसी बेहूदा हरकतें बंद कर देगा या फिर उसे यहां से कहीं और जाकर बसना पड़ेगा। नहीं, वे उन्हें बिलकुल पसंद नहीं हैं। पसंद आ भी कैसे सकते हैं, अगर उसकी बीवी और बेटी दोनों ही दिन भर घर के सामने बेंच पर बेकार बैठी सूरजमुखी के बीज छील-छीलकर खाती रहती हैं या ज़ोर-ज़ोर से बतियाती रहती हैं?

आखिर ये कैसी औरतें हैं, जिन्हें अंदर पहनने के कपड़े, ज़नाने

भी और मर्दाने भी, ऐसी जगह में सुखाते शर्म नहीं आती, जहां से वे हर राह गुज़रते को नज़र आते रहें? आखिर ये लोग हमारी गली में आ कहां से मरे?

अगले ही दिन जलील-मुअल्लिम महल्ले के दो इज़्ज़तदार लोगों को साथ लेकर नये पड़ोसी के यहां पहुंच गये। उन्होंने मनफ़ की बीवी और बेटी को बाहर जाने को कहकर उसे अकेले में खूब खरी-खरी सुनायी। क़िस्मत से, मनफ़ फ़ौरन भांप गया कि जलील-मुअल्लिम किस क़िस्म के आदमी हैं, पलक झपकते ठण्डा पड़ गया और बाद में उनसे माफ़ी भी मांगने लगा। उनके साथ गये लोगों ने बाद में बताया कि उन्होंने पहले कभी जलील-मुअल्लिम को इतनी सख़्ती से बात करते नहीं सुना था।

और मनफ़ थोड़ा बदल गया। वैसे कलह करना उसने नहीं छोड़ा, पर अगर पीता भी, तो नशे में पूरी तरह धुत्त न होता, लड़खड़ाता हुआ गली से गुज़रता, सबसे दुआ-सलाम करता, अपरिचितों से भी और राह चलतों से भी, अपनी बीवी के साथ उलझता, तो खिड़कियों को पहले कसकर बंद कर लेता। बाहर केवल अस्पष्ट शोर ही सुनाई देता। इस तरह बस घुटन में ही गाली-गलौज करता।

अगले दिन वह अकसर सबसे इज़्ज़तदार पड़ोसियों से माफ़ी मांगता और जलील-मुअल्लिम के नज़र आ जाने पर तो ज़रूर ही ऐसा करता। कुछ अरसे बाद लोगों ने मनफ़ के घर की औरतों पर ध्यान देना बंद कर दिया, आदी हो गये – करने दो इन्हें मटरगश्ती, अगर घर में कुछ काम नहीं रहा। क्या पड़ी है किसी को ग़ैरों की बीवी-बेटियों की वजह से परेशान होने की, जब अपने ही कामों से फ़ुरसत नहीं मिलती।

कुछ दिनों बाद पड़ोसी इन लोगों से बातचीत भी करने लगे। लेकिन वे इन्हें अपने ज़्यादा क़रीब नहीं आने देते, हां घर-गृहस्थी की कोई चीज़ मांगने आ पहुंचतीं, तो उन्हें घर से निकाल न भगाते।

वे जलील-मुअल्लिम से दुआ-सलाम करने लगीं। शुरू में वे बेरुखी से जवाब में सिर हिलाते रहे, पर उनका बर्ताव कुछ सुधरता देखकर बाद में खुद भी दुआ-सलाम करने लगे, हालांकि बहुत ही संजीदगी से, लेकिन जैसे कि मर्द को औरतों के साथ पेश आना चाहिए – पहले और ऊंची आवाज़ में नाम लेकर।

बाद में दिलबर, मनफ़ की बेटी का यही नाम था, जलील-मुअल्लिम

को काम से घर लौटते समय मोड़ पर नज़र आते ही मुस्कराने भी लगी। वे उसकी पोशाक देखकर हर बार भौचक्के रह जाते। लड़की शादी लायक़ हो चली थी, पर उससे बेहतर कपड़े तो लोग डरावे पर डाल देते थे। पैवंदों से भरा, रंग उड़ा कुरता, वह भी इतना तंग और छोटा कि अगर वह नीची बेंच पर बैठे तो आम आदमी की भलाई इसी में है कि वह उसकी ओर नज़र उठाकर भी न देखे। वह जलील-मुअल्लिम की तरफ़ हमेशा मुस्कराकर देखती। उसकी मुस्कान प्रीतिकर थी, होंठ भी तरोताज़ा, जैसे कि उसकी उम्र की लड़की के होने चाहिए, दांत चमचमाते, छोटे-छोटे, हमवार। मुस्कराते वक़्त वह सीधी आंखों में झांकती-सी देखती रहती थी। उसकी दृष्टि में निमंत्रण और निर्लज्जता का इतना पुट होता था कि यह उसके जैसे माता-पिता की बेटी के लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं लगती थी।

जब वह हवा के रुख के खिलाफ़ चलती, तो जलील-मुअल्लिम को उसका अंग-प्रत्यंग दिखाई देने लगता। उसका कुरता उसके पूरे तन पर एक हमवार, झीनी तह की तरह, हर उस उतार-चढ़ाव को स्पष्ट करता हुआ चिपक जाता, जो किसी युवा नारी में प्रमुख होता है। और एक बार जब वह अचानक सिर पीछे को झुकाये, और आंखों पर हथेलियों की ओट किये छाया से धूप में निकली, तो उन्हें एक क्षण के लिए लगा जैसे वह होठों पर अपनी स्वाभाविक मुस्कान लिये उसके झीने कुरते को बेधती प्रखर सूर्य-किरणों की दिशा में बढ़ती चली जा रही हो।

जलील-मुअल्लिम ने घबराकर नज़रें फेर लीं और उससे दुआ-सलाम करना भी भूल गये। उन्होंने उसके पिता से यह कहने का फ़ैसला किया कि वह अपनी बेटी पर नज़र रखे और ज़रा ढंग के कपड़े पहनाये, पर बाद में उनका इरादा बदल गया। उसके मां-बाप दोनों ही बिलकुल मुंह लगाने लायक़ नहीं थे।

जैसा सोता, वैसी धारा, आखिर नतीजा और हो ही क्या सकता था।

मनफ़ रास्ते में कई बार उनसे मिलने पर बातचीत करने की कोशिश करता, नर्द के खेल में अपनी महारत का ज़िक्र करके उनसे अपने घर बुलाये जाने का इशारा करता, पर जलील-मुअल्लिम तुरन्त उसकी आशाओं पर पानी फेर देते।

एक बार जलील-मुअल्लिम जब अपने अहाते में काम करने के बाद दोपहर के खाने के इंतज़ार में चहलक़दमी कर रहे थे, तो उन्होंने दिलबर को शहतूत के पेड़ पर चढ़े हुए देखा। लड़की ने उन्हें पहले देख लिया और फ़ौरन पेड़ से उतर गयी। इस हड़बड़ी में उसका कुरता पल्ले से ऐन नाभि तक फट गया। वह अपना फटा हुआ कुरता थामे, शहतूत के लाल रस से नम होंठों पर मुस्कान लिए खड़ी रह गयी। उसकी लजीली मुस्कान में उन्हें विनती और परवशता दिखाई दी।

जलील-मुअल्लिम को झटके से मुड़कर घर रवाना होने से पहले दिलबर को अपने घुटनों और पेट पर कुरते को खींचने में लगे कुछ ही क्षणों में उसका सारा कोमल बदन दिखाई दे गया। वह भी समझ गयी कि उन्होंने सब कुछ देख लिया है, क्योंकि उस फटे कुरते के सिवा उसके तन पर और कुछ था ही नहीं।

जलील-मुअल्लिम ने पूर्णतः मौन साधे हुए खाना खाया। वे यही सोचे जा रहे थे कि पत्नी से नये पड़ोसियों को अपने घर में फिर कभी क़दम न रखने देने की बात कैसे कहें, जहां उनकी अपनी बेटी सयानी होने जा रही है। लेकिन उस दिन उन्होंने पत्नी से कुछ नहीं कहा।

वे तीन दिन तक अपनी झिझक पर ग़ुस्सा होते, खीजते रहे। मामला बिलकुल साफ़ था। उनकी बात सही थी। वे लोग बुरा मानेंगे, इसका कोई महत्त्व ही नहीं था। आखिर वे लोग हैं भी तो इसी लायक़। इस तरह उन्होंने अंत में पत्नी से कह ही डाला कि वे लोग फिर कभी उनके घर में पैर रखने का साहस न करें, चाहे वह कितना ही बुरा माने, पर उनकी अवज्ञा कभी न करे।

लेकिन इस सबके बावजूद वे एक और बार, जिस दिन मरियम खानम की मृत्यु हुई, आ ही पहुंचीं...

मरियम खानम शाम को उस समय मरीं, जब जलील-मुअल्लिम काम से लौट चुके थे। वे कोई दो महीने बीमार रहीं। किस्लोवोद्स्क से लौटने के कुछ दिन बाद ही उनके सीने में दर्द होने लगा था, फिर भी वे घर के काम-काज में बहू की मदद करतीं, पोते को संभालती रहीं। उनसे जब लेटने को कहा जाता, तो वे नाराज़ हो जातीं। पिछले दो हफ़्तों से वे पलंग पर पड़ी रही थीं, हाथ उठाने तक की ताक़त न रही थी उनमें। इन कुछ ही दिनों में वे सूखकर कांटा हो गयी थीं।

जब कमरे में कोई न होता, तो वे सीने में हो रही असह्य पीड़ा से कराहने लगतीं, उनका चेहरा विकृत हो उठता। जलील-मुअल्लिम ने अच्छे से अच्छे डाक्टरों को बुलवाया, एक बहुत माने हुए प्रोफ़ेसर को भी उन्हें दिखाया, पर सबने यही कहा कि ऐसी कोई दवाई नहीं है, जिससे मरियम खानम को इस दुनिया में और रोका जा सके। जलील-मुअल्लिम को अचरज भी होता और निराशा भी। यह उनकी समझ में किसी प्रकार नहीं आ पा रहा था कि आखिर ऐसा क्यों हो रहा है। मां के साथ कोई घातक दुर्घटना भी नहीं घटी है, न वे आग में झुलसी हैं, न उनके ऊपर छत गिरी है, फिर उनकी उम्र भी ऐसी है कि वे अपने बेटे के घर में जब तक चाहे आराम से जी सकती हैं, ऐसे बेटे के घर में, जो उनकी सबसे अच्छी सेवा-सुश्रूषा कर सकता है, हर तरह की दवा ला सकता है; और तो और लड़ाई भी नहीं चल रही है, शान्ति का समय है, फिर भी कोई उनके लिए कुछ नहीं कर पा रहा है। यह सब एक दुःस्वप्न जैसा लग रहा था। मां उनकी आंखों के आगे घुलती जा रही थीं और वे कुछ भी कर पाने में असमर्थ थे।

डाक्टर उन्हें एक के बाद दूसरी दर्द कम करनेवाली औषधियां लिखकर देते और चले जाते।

मरियम खानम लगभग पूर्णतः बेसुध लेटी रहीं, पर आखिरी दिन उन्हें होश आ गया और दर्द भी कुछ कम हो गया। वे पूरे होश में अपने बेटे और सारे घरवालों से विदा लेकर मरीं। मां के चेहरे पर मुरदनी छायी थी, मगर मृदु मुस्कान व्याप्त थी। जलील-मुअल्लिम दुख से स्तब्ध हुए उनकी बातें सुनते रहे थे कि वे कितनी शान्ति से इस संसार को छोड़कर जा रही हैं, अपने को कितना सुखी अनुभव कर रही हैं, उन्हें कितना गर्व है अपने बेटे जलील पर और यह भी कि वे वहां भी उसके लिए दुआ करती रहेंगी, जहां वे निडरता से और बिना हिचकिचाये जा रही हैं।

मरियम खानम ने अपने स्वर्गीय पति को भी स्मरण किया, जिनके साथ उन्होंने कुछ ही समय तक, लेकिन सुखी जीवन बिताया था और अपने बेटे ताईर को भी जो पिता की तरह उस मनहूस युद्ध के दौरान ही असमय मर गया था। उन्होंने जलील-मुअल्लिम से कहा कि वे उनके इकलौते भाई सीमुर्ग़ को सदा प्यार करते रहें, उसका खयाल रखें,

हर तरह उसकी मदद करते रहें, वे लोग हमेशा साथ रहें, कभी बिछुड़ें नहीं, एक परिवार की तरह रहें, क्योंकि बुज़ुर्ग और दानिशमंद हमेशा यही कहते आये हैं कि फूट से घर बरबाद हो जाता है।

जलील-मुअल्लिम ने मां को उनकी इच्छानुसार उनके मां-बाप के काले संगमरमर के समाधि-प्रस्तर लगी क़ब्रों के पास ही दफ़नाया। उन्होंने मन ही मन वचन दिया कि मिट्टी के बैठते ही वे मां की क़ब्र पर समाधि-प्रस्तर लगवा देंगे और पेड़ भी लगायेंगे, जिससे वे उनकी शीतल छाया में सदा शान्तिपूर्वक चिरनिद्रा में मग्न रहें।

जलील-मुअल्लिम अपनी सूनी-सूनी आंखों से मां की क़ब्र को देखते रहे।

जलील-मुअल्लिम के रिश्तेदारों, पड़ोसियों और सहकर्मियों ने शहर के समाचारपत्रों में जलील-मुअल्लिम को मां की मृत्यु के कारण हुई असामयिक क्षति के लिए संवेदना-संदेश भी प्रकाशित करवाया।

जलील-मुअल्लिम ने महसूस किया कि शोक के समय वे अकेले नहीं हैं। उनका दुख बांटने के लिए लोग रोज़ाना शाम को आते, उन्हें विषादपूर्ण विचारों के साथ अकेला न छोड़ते।

जलील-मुअल्लिम ने मां को दफ़नाने के बाद मृत्यु-भोज किया। कमरों व अहाते में क़तारों में लगायी गयी मेज़ों पर सौ से ऊपर लोग बैठे। मेज़ों पर बड़ी-बड़ी प्लेटों में खूब घी में पका केसर डालकर तीन क़िस्मों के मसालोंवाला पुलाव परोसा गया। पुलाव सबसे बढ़िया चावल से शाहबलूत के फलों, मुर्ग़ी के गोश्त को आमलेट में पकाकर, आलूचे की खट्टी चटनी डालकर, क़ीमे को किशमिश व परासिमन के साथ मिलाकर, अदरक व दूसरे खुशबूदार मसाले डालकर बनाये गये थे।

दूसरी प्लेटों में अंगूर की कोमल पत्तियों में चावल के साथ चर्बीदार गोश्त लपेटकर पकाया दोलमा परोसा गया। मरियम खानम ने वे पत्तियां मरने से पहले खुद ही सावधानी से चुनकर शीशे के बड़े-बड़े मर्तबानों में एक खास तरह के घोल में रख दी थीं, जिससे उन्हें अगली गर्मियों तक सुरक्षित रखा जा सकता था। दोलमे के साथ प्यालों में सादा दही और घिसा लहसुन डालकर बनाया रायता भी परोसा गया था। तरह-तरह का ताज़ा, हरा सलाद भी रखा गया था। बारीक कतरी हुई दूधिया, कच्ची मूलियां, कच्चा प्रनाग, हरा प्याज, रैहां, जलकुंभी, सब चुनिंदा और हर किसी के पसंद का। प्यास बुझाने के

लिए गुलाब का हल्का शर्बत सुराहियों और जगों में रखा गया था।

मेजें साफ़ करने के बाद ढंग से बनायी तेज़ चाय, उसके साथ नींबू के टुकड़े और प्लेटों में हल्के सुनहरे रंग का हलवा परोसा गया, जिस पर पिसी दालचीनी बुरकी हुई थी।

जलील-मुअल्लिम ने तीसरे और सातवें दिन भी मृत्यु-भोज दिया और फिर चेहलुम पर भी। उन्होंने परम्परानुसार वह सब किया, जो मरहूम खानम की स्मृति को अमर रखने के लिए आवश्यक माना जाता था।

जलील-मुअल्लिम को अपने पूर्वजों की अनेक पीढ़ियों से विरासत में मिले रीति-रिवाजों का गहन, बुद्धिमत्तापूर्ण आशय उनका पालन करते हुए ही स्पष्ट हुआ। दौड़-धूप और लोगों से घिरे रहने के कारण वे कुछ समय के लिए अपना दुख भूल जाते थे।

सारी पड़ोसनें जलील-मुअल्लिम की पत्नी की मदद करने आयीं। उनमें मनाफ़ की बीवी और बेटी भी थी। जलील-मुअल्लिम ने दिलबर को कई बार रसोई और अहाते में देखा, लड़की की आंखों में दुख और किंचित आश्चर्य का भाव साफ़ दिखाई देता था। लेकिन इस बारे में उन्होंने अपनी पत्नी से कुछ नहीं कहा, क्योंकि शोक के समय घर के दरवाज़े घर में आने के इच्छुक हर व्यक्ति के लिए खुले रहने चाहिए। पहले सात दिन हर शाम को और फिर चेहलुम तक हर जुमेरात को नियमित रूप से मिलने आ रहे मनाफ़ से भी बातचीत करने में जलील-मुअल्लिम ने बेरुख़ी ज़ाहिर नहीं होने दी।

जलील-मुअल्लिम ने इन चालीस दिनों में अपने जीवन की सारी बचत खर्च कर दी। उन्होंने ज़रा भी अफ़सोस किये बिना अपने इस दृढ़ विश्वास के कारण सब खर्च किया, कि ऐसे पवित्र और आवश्यक कार्य में बचत करना किसी को शोभा नहीं देता। जलील-मुअल्लिम का विचार था कि जिस स्तर पर और जितनी सावधानी से इन रीति-रिवाजों का पालन किया जाता है, उससे शरीफ़, दूसरों के सम्मानपात्र लोगों और नीच खानदान तथा बदज़ात लोगों के बीच फ़र्क़ का पक्के तौर पर पता चल जाता है।

भाई के लिए जमा की गयी रक़म को उन्होंने यह सोचकर छुआ भी नहीं कि जब तक वह अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो जाता, वह उसके

लिए बहुत ही ज़रूरी होगी। खुद उन्हें उस रकम की बिलकुल ज़रूरत नहीं और भविष्य में वे उतना ही, बल्कि उससे ज़्यादा पैसा बचाकर रख देंगे, क्योंकि खुदा की मेहरबानी से वे चुस्त और दुरुस्त हैं और उनके हालात भी अच्छे हैं।

जलील-मुअल्लिम ने सीमुर्ग़ को मां की मृत्यु का समाचार नहीं भेजा। वे परदेस में भाई को दुखी और उसका जीवन विषादमय नहीं करना चाहते थे। उसे अभी वहां तीन महीने और सैनिक सेवा करनी थी।

वे बड़ी अधीरता से भाई के लौटने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने खुद ही उसके कमरे की दीवारों पर गोंद मिला रंग किया और स्टेंसिल की सहायता से सीधे-सादे बेलबूटे भी बना दिये। जलील-मुअल्लिम को मधुमक्खियों के छत्तों की सार-संभाल के लिए अपने बगीचे में काम करने से भी बड़ा आनन्द मिलता था। शुरू में वे मधुमक्खियों के पास जाते समय सिर पर खास तरह की सुरक्षा-जाली डाल लेते थे, पर कुछ समय बाद वे उन्हें पहचानने लगीं और बिना जाली के भी अपने पास आने देने लगीं। फिर भी वे कभी-कभार उन्हें डंक मार देती थीं। उस बूढ़े मधुमक्खी-पालक ने, जिसने जलील-मुअल्लिम को वे पेटियां बेची थीं, यह समझा दिया था कि मधुमक्खियां क्रुद्ध और खीजे हुए आदमी को किसी अज्ञात तरीक़े से भांप लेती हैं और डंक मार देती हैं।

जलील-मुअल्लिम किसी तरह भी यह याद कर पाने में असमर्थ थे कि वे छत्तों के निकट कैसे मूड में गये थे, जब मधुमक्खियों ने उनके डंक मारे थे। उनको उस बुजुर्ग पर अधिक विश्वास भी नहीं हुआ, क्योंकि डंकों से उन्हें कोई खास तकलीफ़ नहीं हुई थी। जलील-मुअल्लिम ने यह भी सुना था कि मधुमक्खियों के विष से मनुष्य को केवल लाभ ही होता है।

उनके काम पर और आस-पड़ोस में सब ठीक-ठाक चल रहा था। जलील-मुअल्लिम अपना सामान्य, सुखद जीवन व्यतीत कर रहे थे, जिसके वे अभ्यस्त हो चुके थे और कोई परिवर्तन नहीं चाहते थे। उन दिनों उनका मूड सदा एक समान अच्छा रहता था, वे अपने काम से खुश थे, घर से भी और अपने चारों ओर के माहौल से भी।

एक शाम जब मनाफ़ उनके पास आया, तो उन्हें कोई खास बुरा

नहीं महसूस हुआ। मनफ़ ने आते ही उन्हें बता दिया कि वह उनसे यह विनती करने आया है कि वे उसकी बेटी दिलबर को अपने किसी डाकखाने में कोई काम दिलवा दें।

जलील-मुअल्लिम ने कहा कि उनके यहां कोई स्थान खाली नहीं है, पर वादा किया कि वे अपने एक अच्छे दोस्त से इस बारे में बात करेंगे, जो चादरोवा मार्ग पर एक औषधालय का प्रबंधक है।

औषधालय में दिलबर के पहले दिन काम करने के बाद मनफ़ अपने परिवार के साथ जलील-मुअल्लिम के यहां आया। उसने और उसकी घरवाली ने उनको बहुत-बहुत धन्यवाद दिया।

दिलबर एक नया कुरता पहने थी, उसके बाल सलीक़े से संवरे और एक गुलाबी रिबन से बंधे हुए थे। जलील-मुअल्लिम ने उसे कभी इतना सुन्दर नहीं देखा था। लड़की ने भी शर्म से लाल होते, उत्तेजक मुस्कान से सकुचाते और हर शब्द पर अटकते-अटकते उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की। आगन्तुक उपहार भी लेकर आये थे– चिमटी सहित चांदी की चीनीदानी और गुलाबों का गुलदस्ता।

जलील-मुअल्लिम ने कहा कि उन्होंने दिलबर को एक ऐसे औषधालय में, जहां प्रबंधक एक भला आदमी है, केवल मनफ़ और उसके परिवार की ख़ातिर नहीं, बल्कि किसी को उसके जीवन में सही रास्ते पर लाने को अपना कर्त्तव्य मानकर काम पर लगाया है।

जलील-मुअल्लिम ने उनके साथ हालांकि संयत स्वर में, पर साथ ही हितैषी की तरह बातचीत की। चिमटी सहित चांदी की चीनीदानी उन्होंने मनफ़ के चलते समय उसके हाथों में रख दी। मनफ़ ने प्रतिवाद करना चाहा, पर जलील-मुअल्लिम को किसी को उसकी औक़ात का ध्यान दिलानेवाली नज़रों से अपनी ओर देखते ही वह तुरन्त चुप हो गया। हां, गुलाब के गुलदस्ते के लिए वे मेहमानों का शुक्रिया अदा करना नहीं भूले।

आख़िर वह सुखद दिन भी आ गया, जिसकी जलील-मुअल्लिम कब से प्रतीक्षा कर रहे थे। वे ट्रेन के आगमन से एक घंटा पहले ही स्टेशन पर पहुंच गये। उन्होंने सीमुर्ग़ को सीने से चिपटा लिया और यह महसूस करते हुए उसे अपने से अलग नहीं होने दिया कि वह शून्य, जो तीन वर्ष पूर्व उनके हृदय में उत्पन्न हुआ था, प्रसन्नता के क्षण-

प्रतिक्षण उमड़ते ज्वार से भरता जा रहा है। वे भाई को, इस धरती पर उनके सबसे प्रिय और निकट व्यक्ति को इस तरह अपने आलिंगन में जकड़े रहे, मानो वे किसी जीवनदायी स्रोत के जल का पान कर रहे हों, जो उनमें जीवन और पहले से दसगुनी शक्ति का संचार कर रहा हो।

स्टेशन से वे क़ब्रिस्तान गये, जहां सीमुर्ग़ भागकर मां की क़ब्र पर जा गिरा और आंसुओं से रुंधे स्वर में बच्चों की तरह सुबक-सुबककर रोने लगा।

जलील-मुअल्लिम भाई को किसी तरह तसल्ली न दे पाये और तब वे मां को दफ़नाने के बाद पहली बार ख़ुद भी रो पड़े। आंसुओं से उनके दिल को काफ़ी राहत मिली।

जलील-मुअल्लिम सारी शाम पुलकित आंखों से सीमुर्ग़ को देखते रहे। वह अपनी भाभी, भतीजे, भतीजी और दोनों भाइयों को बधाइयां देने आये पड़ोसियों को सैनिक सेवा में अपने जीवन और उस सुन्दर स्थान के बारे में बताता रहा, जहां उनकी यूनिट तैनात थी। वह अपने दिलचस्प क़िस्सों में ऐसे शब्दों का उपयोग कर रहा था जिन्हें पहली बार सुनने के कारण उपस्थित लोग या तो बिलकुल ही नहीं समझ पा रहे थे या बहुत ही कम।

मेहमानों के जाने के बाद जलील-मुअल्लिम ने पत्नी और बच्चों के सोने का इंतज़ार किया और फिर भाई से बात करने लगे। सबसे पहले उन्होंने उपहार के रूप में सीमुर्ग़ के नाम से बचत-खाते में जमा कराये साढ़े चार सौ रूबल की पासबुक उसे दी।

यह बात सीमुर्ग़ के दिल को छू गयी। उसने बड़े भाई की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखा, पर यह कहकर पैसा लेने से इनकार कर दिया कि जलील-मुअल्लिम घर-गृहस्थी वाले आदमी हैं और उन्हें उसकी ज़्यादा ज़रूरत है। उसने कहा कि वह अपना काम चला लेगा, क्योंकि सैनिक सेवा से वह कुछ पैसा बचाकर लाया है, उपहार ख़रीदने और सफ़र-ख़र्च के बावजूद उसके पास सत्तर रूबल बचे हैं, जो शुरू में उसके लिए पर्याप्त होंगे।

जलील-मुअल्लिम ने उसे कृत्रिम क्रुद्ध स्वर में डपटा और उसके विरोध करने के बावजूद पासबुक भाई की फ़ौजी क़मीज़ की सीने की जेब में ठूंस दी। उन्होंने उससे वचन भी ले लिया कि यह पैसा वह

कपड़ों और दूसरी चीजों पर ख़र्च करेगा, जो नया जीवन आरम्भ करने के लिए आवश्यक होती हैं।

यह सुखद कार्य सम्पन्न कर लेने के बाद उन्होंने सीमुर्ग़ से उसकी भविष्य की योजनाओं के बारे में पूछा। वे उसे कोई लाभदायक सलाह देने, पहले से यह जान लेने के लिए उत्कंठित थे कि किस मामले में वे स्वयं उसकी मदद कर सकते हैं और किस मामले में अपने सम्पर्कों और असर-रसूख़ से सहायक हो सकते हैं। जलील-मुअल्लिम भाई की ख़ातिर किसी से कुछ भी सिफ़ारिश करने को तैयार थे, ऐसे आदमी से भी, जिससे वे ख़ुद अपने लिए कुछ न मांगते।

जलील-मुअल्लिम ने सीमुर्ग़ से पूछा कि क्या उसका इरादा अगले वर्ष इंस्टीट्यूट में प्रवेश लेने का है, जैसा कि वह सेना में जाने से पहले सोचा करता था। यह भी पूछा कि क्या वह प्रवेश-परीक्षा आरम्भ होने से पहले कहीं काम करना चाहता है और अगर चाहता है, तो कहां। यह सब पूछकर वे सीमुर्ग़ के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे। उन्होंने भाई से उसके शादी करने के इरादे के बारे में अपने स्वभाव के कारण कुछ नहीं पूछा, क्योंकि जब उसकी इच्छा होगी, तो वह ख़ुद ही बता देगा।

सीमुर्ग़ ने कहा कि इंस्टीट्यूट में प्रवेश के बारे में वह अभी सोचेगा, लेकिन यह निश्चित है कि अगले वर्ष वह कहीं प्रवेश नहीं लेगा। अगर लेगा भी तो केवल पत्राचार पाठ्यक्रम में। ऐसा वह केवल इस कारण नहीं करेगा कि उसे भाई पर ख़र्च के लिए निर्भर करना पड़ेगा, बल्कि इस कारण भी कि उसे अब विद्यार्थी-जीवन में स्वतंत्रता का अभाव रहने से उसमें कोई विशेष रुचि नहीं रही है। वह उस उम्र से गुज़र चुका है और अब वैसे ही जीना चाहता है, जैसे बालिग़ आदमी को जीना चाहिए।

जलील-मुअल्लिम को सीमुर्ग़ के इरादे जानकर बहुत निराशा हुई, सच कहा जाये, तो उसकी उच्च शिक्षा प्राप्त न करने की इच्छा से, जिसका वे कब से सपना देखते आये थे, लेकिन उन्होंने उसके साथ बहस नहीं की। उन्हें पूरा विश्वास था कि बाद में वे भाई को मना लेंगे, क्योंकि अभी वह जवान है और जीवन में अपना सम्मानित स्थान बनाने के इच्छुक व्यक्ति के लिए शिक्षा के महत्त्व को नहीं समझता है।

सीमुर्ग़ ने बताया कि वह मोटर-चालक का काम करेगा, जिसका विशिष्ट प्रशिक्षण उसे सेना में दिया गया था। वह उसमें कुशलता प्राप्त कर चुका है और उसके पास प्रथम श्रेणी के चालक का लाइसेंस भी है, जो उसे किसी भी प्रकार का वाहन चलाने का अधिकार देता है, जिनमें 'एम्बुलेंस', मिलिशिया और अग्निशामक वाहन भी शामिल हैं।

जलील-मुअल्लिम की भौंहें सिकुड़ गयीं। उन्होंने अपने भाई के लिए ऐसे जीवन की कल्पना नहीं की थी। वे सदा यही सपना देखते रहे थे कि सीमुर्ग़ डाक्टर बनेगा। उन्होंने कभी सोचा भी न था कि माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद वह उनके पियक्कड़ पड़ोसी मनफ़ की तरह ड्राइवर ही बनेगा। लेकिन ईमानदारी से किये जानेवाले हर काम को आदर की दृष्टि से देखा जाना चाहिए, यह जलील-मुअल्लिम का दृढ़ विश्वास था। इसलिए वे फिर इस आशा के साथ कुछ नहीं बोले कि बाद में सीमुर्ग़ को अपने लिए कोई ऐसा कार्य-क्षेत्र चुनने के लिए मना लेंगे, जो उसका अच्छे पालन-पोषण करने, अच्छी शिक्षा देने, लोगों में अच्छी प्रतिष्ठा दिलानेवाले परिवार के सम्मान के अनुरूप होगा। अब यह सब सीमुर्ग़ पर निर्भर करेगा कि उसका नाम भी उतने ही आदर-सम्मान के साथ लिया जाता रहे, जैसे कि स्वयं जलील-मुअल्लिम का है।

सीमुर्ग़ ने अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में भी लगभग वही कहा, जो उसने अपनी शिक्षा की योजनाओं के बारे में अपना इरादा व्यक्त करते हुए कहा था। उसने कहा कि जब तक वह अपनी भावी पत्नी और बच्चों के ढंग से भरण-पोषण करने योग्य कमाने नहीं लगता, तब तक अपनी शादी का विचार भी दिमाग़ में नहीं लाना चाहता।

जलील-मुअल्लिम भाई की लम्बी अनुपस्थिति के बाद अपने पैतृक-घर में उसकी पहली रात के लिए शुभ-रात्रि की कामना करके सोने चले गये। नींद आने से पहले वे समय की क्षणभंगुरता, भाई के कोमल अण्डाकार चेहरेवाले किशोर से, जैसा कि वह सेना में जाने से पूर्व था, मुंह के दोनों ओर, दाढ़ी बने कपोलों पर दृढ़ इच्छा-शक्ति की द्योतक रेखाओं, समय-समय पर गम्भीर व कठोर होती भाव-भंगिमावाले बलिष्ठ युवक में परिवर्तित होने के बारे में सोचकर ठण्डी सांसें लेते रहे।

5-0300

सीमुर्ग़ ने न एंबुलेंस-ड्राइवर का काम चुना, न फ़ायर-इंजन का, न मिलिशियागाड़ी का और न ही टैक्सी-ड्राइवर का, जिसका उसे प्रथम श्रेणी के चालक का लाइसेंस प्राप्त होने के कारण पूरा अधिकार था। वह एक मालवाहक संस्था की ट्रक चलाने लगा, जो एक शहर से दूसरे शहर में माल ढोने का काम करती थी। वह मन लगाकर खूब काम करने लगा। सीमुर्ग़ घर से हफ़्ते-दस दिन बाहर रहता और थककर चूर, सफ़र के दौरान आंखों में काटी रातों के कारण दुबला और पीला होकर, पर प्रसन्नचित्त और बच्चों व भाभी के लिए सौग़ातें लिये लौटता। भाई के लिए वह नियम से कोई न कोई उपहार लेकर आता। वह भी यूं ही कोई संयोगवश मिली चीज़ नहीं, बल्कि बहुत सावधानी से चुनकर, जलील-मुअल्लिम की पसंद और इच्छाओं को ध्यान में रखकर।

सीमुर्ग़ का यह व्यवहार हर बार भाई के स्नेह से परिपूर्ण हृदय को स्पर्श कर जाता, हालांकि जलील-मुअल्लिम मन ही मन दुखी रहते थे कि उसने अपना पेशा चुनने के मामले में उनकी इच्छा का ध्यान नहीं रखा था। वे केवल कभी-कभार पूछ लेते थे कि क्या सीमुर्ग़ का काफ़ी अरसे तक इसी तरह बंजारे की ज़िंदगी बिताने का इरादा है। सीमुर्ग़ जब घर पर रहता, तो अपनी नाराज़गी के बावजूद जलील-मुअल्लिम उसके खाने-पीने और आराम का पूरा ध्यान रखते। वह बहुत जल्दी अपनी खोयी शक्ति पुनः संचित कर लेता और अगले दिन ही जलील-मुअल्लिम के साथ बगीचे में काम करने लगता या अपनी हर यात्रा में होनेवाले मनोरंजक अनुभव सुना-सुनाकर सब का दिल बहलाता रहता।

सीमुर्ग़ कहता कि उसे अपना काम बहुत अच्छा लगता है। इससे उसे नये-नये स्थान देखने, नये-नये लोगों से मिलने का अवसर मिलता है। इसमें क्या बुराई है? अगर वह आलसी नहीं है, चुस्त और अपने पेशे में माहिर है, तो इस काम में भी काफ़ी पैसा कमा सकता है।

सीमुर्ग़ अच्छा पैसा कमा रहा था और उसे अपने निकट मित्रों पर खुले हाथों से ख़र्च भी करता था। जलील-मुअल्लिम को पड़ोसियों से खबरें मिलतीं कि वे उनके भाई को अकसर रेस्तरानों में देखते हैं। वे अपनी निराशा को कुशलता से छिपाते हुए यही कहते कि उन्हें सब कुछ भली-भांति मालूम है, जैसे कि भाई की और सब बातें, जो

सीमुर्ग़ उनकी सहमति से ही करता है। सीमुर्ग़ कपड़े भी अच्छे पहनने लगा। उसे देखकर कोई भी ऐसा सोच सकता था कि चुस्त सूट में सजा-धजा यह लम्बा-चौड़ा, सुन्दर युवक कोई संवाददाता, टेलीविज़न उद्घोषक या किसी प्रथम श्रेणी की फ़ुटबाल टीम का खिलाड़ी है।

मालवाहक संस्था में काम शुरू करने के छः-सात महीने बाद, एक बार जलील-मुअल्लिम के साथ अकेले रहने का अवसर पाते ही सीमुर्ग़ ने अपनी जेब से साढ़े चार सौ रूबल निकाले और उन्हें उसका ख़याल रखने के लिए धन्यवाद देकर उनकी ओर बढ़ा दिये।

"मैंने तुम्हें पैसा उधार थोड़े ही दिया था," जलील-मुअल्लिम ने कहा, "यह तो तुम्हें मेरी सौग़ात थी।"

तब सीमुर्ग़ ने जेब से पासबुक निकालकर उसका वह पृष्ठ खोलकर दिखाया, जो यह सिद्ध करता था कि धारक ने पैसा ख़र्च नहीं किया है, बल्कि उसमें वृद्धि करके उसे साढ़े छः सौ रूबल कर दिया है।

"देखा आपने," सीमुर्ग़ ने कहा। वह सदा के समान प्रसन्नचित्त था और उसके होंठों पर भाई के लिए सदा की तरह मृदु, आदरपूर्ण व सुखद मुस्कान व्याप्त थी। "मैं अपने मामले में भी कंजूसी नहीं करता हूं। आप निश्चिन्त होकर अपना पैसा ले लीजिये। मेरी मदद करने के लिए आपका शुक्रिया। अगर आपको कभी पैसे की ज़रूरत पड़े, तो मुझसे कह भर दीजिये। मुझ पर इतनी मेहरबानी ज़रूर कीजिये।"

जलील-मुअल्लिम ने सीमुर्ग़ को शाबाशी देते हुए कहा कि वह सही रास्ते पर चल रहा है, जैसा कि जीवन में कुछ हासिल करने के इच्छुक हर व्यक्ति को करना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि उन्हें उस पैसे की, जो सीमुर्ग़ उन्हें लौटा रहा है, न आज ज़रूरत है, न भविष्य में होगी, क्योंकि उन्होंने उसे वह पैसा दिल से दिया था, वह उसे केवल इसलिए स्वीकार कर रहे हैं कि सीमुर्ग़ उन्हें अपना आखिरी पैसा नहीं दे रहा है।

जलील-मुअल्लिम ने अपने भाई की सफलता से हर्षित होकर सच्चे मन से यह सब कहा और अपनी विशालहृदयता के कारण इस बार अपनी यह इच्छा भी व्यक्त नहीं की कि वे सीमुर्ग़ को इससे कुछ कम

खतरनाक और संजीदा काम में लगा देखना चाहते हैं।

पर न जाने क्यों, जलील-मुअल्लिम को वह पैसा वापस लेते हुए, जिसे वे पिछले पूरे तीन सालों से बचाते रहे थे, विशेष प्रसन्नता नहीं हुई। उन्हें पूरा विश्वास था कि सीमुर्ग़ को उसकी बड़ी ज़रूरत होगी, पर पासबुक से मालूम पड़ता था कि उसने पैसा एक बार भी नहीं निकलवाया।

उन्हें याद आया कि उन्हें कैसे कम से कम चालीस बार बचत-बैंक जाना पड़ा था, ताकि परिवार का मुखिया होने के नाते भाई को उसके लौटने के पहले दिन ही उसके प्रति अपने स्नेह और ध्यान का प्रमाण सौंप सकें।

यह भी याद आया कि सीमुर्ग़ ने कितनी आसानी से उन्हें वह पैसा लौटाया था, शायद वह उसे इतनी ही आसानी से उसे मिला भी होगा। उन्होंने एक उच्छ्वास के साथ सीमुर्ग़ के जीवन में आये असाधारण, आश्चर्यजनक नये मोड़ की आशंका के अस्पष्ट पूर्वाभास को मन से निकाल देने की चेष्टा की। लेकिन अपनी दूरदर्शिता व बुद्धिमत्ता के बावजूद जलील-मुअल्लिम तब इसका अंदाज न लगा सके कि सीमुर्ग़ के जीवन में आये इस नये मोड़ का एक दिन उसके आत्मीयों के लिए क्या परिणाम होगा।

उन्हें अशुभ समाचार उस समय मिला, जब वे अपने कार्यालय में बैठे मन-ही-मन अपने डाकखाने के काम में आगे सुधार करने के उपायों पर विचार कर रहे थे।

उनका डाकखाना अच्छी तरह काम कर रहा था। पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक व अन्य डाक-सेवाओं के लिए आनेवाले लोग सन्तुष्ट थे। मंत्रालय में भी उसके काम का समुचित मूल्यांकन किया जाता था और अन्तर्विभागीय मीटिंगों में उदाहरण के रूप में उसे पेश किया जाता था, साथ ही जलील-मुअल्लिम के स्थायी नेतृत्व को जानता की सेवा में कर्मीवृंद द्वारा प्राप्त उल्लेखनीय सफलताओं का श्रेय दिया जाता था। लेकिन सफलता से जलील-मुअल्लिम को कभी घमण्ड नहीं हुआ। उन्हें डाकखाने में प्राप्त अनुभव से मालूम था कि अपने कार्य में आदर्श कुशलता प्राप्त करने के लिए प्रयासों की कोई सीमा नहीं होती और उसके निकट पहुंच जाने पर भी वह दुर्ग्राह्य सिद्ध हो सकती है। वे हमेशा अपने आपको याद दिलाते रहते थे कि इस सतत परिवर्तनशील

समय में अपनी उपलब्धियों पर सन्तोष करने का अर्थ पिछड़ जाना होता है। इसलिए वे काम के मामले में अपने साथ बिलकुल रिआयत नहीं करते थे।

ममेद बाबनली के आने से उनकी विचार-शृंखला भंग हुई। वह पिछले बीस वर्षों से पारसल-विभाग में काम कर रहा था। उसकी मुख-मुद्रा और अपने पीछे सावधानी से दरवाज़ा बंद करने के ढंग से जलील-मुअल्लिम फ़ौरन भांप गये कि कोई बुरी बात हो गयी है। लेकिन यह स्वाभाविक ही था कि अपनी सूक्ष्मदर्शिता के बावजूद वे उसकी गम्भीरता का अनुमान लगाने में असमर्थ रहे।

ममेद ने उनकी मेज़ के पास चुपचाप आकर नगर का सायंकालीन समाचारपत्र इस तरह तह करके रख दिया कि जलील-मुअल्लिम की दृष्टि तुरन्त मोटे टाइप में छपे "ट्रक-ड्राइवर निनानवे के फेर में" शीर्षकवाले लेख पर पड़ जाये। वे उपशीर्षक से समझ गये कि वह एक व्यंग्यात्मक लेख है, जिसे वे लगभग नियमपूर्वक पढ़ते थे।

लेख पढ़ते समय जलील-मुअल्लिम का रोम-रोम यह महसूस कर रहा था कि उन्होंने जीवन में किसी की सहायता के बिना, केवल अपनी मेहनत के बल पर, इतनी मुश्किलों से, इतने वर्षों में जो कुछ हासिल किया है, वह कैसे उनकी आंखों के सामने मिट्टी में मिला जा रहा है।

लेख सीमुर्ग़ के बारे में ही था।

सच कहा जाये, तो केवल सीमुर्ग़ के बारे में नहीं। उसमें दूसरे लोगों के नाम भी कम न थे। लेकिन जलील-मुअल्लिम को अपना कुल-नाम कई स्थानों पर नज़र आया। लेखक की शैली और हर लेख के अन्त में उसके द्वारा निकाले गये निष्कर्षों में उसकी सिद्धहस्तता जलील-मुअल्लिम को सदा प्रभावित करती थी और वे उससे पूर्णतः सहमत हुए बिना न रह पाते थे। लेखक इस बार भी अपनी शैली के प्रति पूर्णतः निष्ठावान रहा। उसने सरल सुगम भाषा में, अकाट्य प्रमाणों का सटीक उपयोग करते हुए कुछ बेईमान लोगों के गुट का परदाफ़ाश किया, जो मालवाहक संस्था के प्रबंधकों की अदूरदर्शिता और आपराधिक लापरवाही का अनुचित लाभ उठाकर हेर-फेर करते थे; फल व सब्ज़ियों की ग़ैरक़ानूनी ढुलाई करते थे और इसके बदले में, श्रम-क़ानून का उल्लंघन करते हुए अधिकतम निर्धारित दरों से भी कई गुना ज़्यादा पैसा अपनी जेबों में डालते थे।

लेखक ने अन्त में पूर्ण आत्मविश्वास के साथ कहा था कि दोषी लोगों के विरुद्ध क़ानूनी कार्रवाई की जायेगी और जनता से अपील की थी कि वह ऐसा वातावरण न बनने दे, जिसमें उल्लिखित व्यक्ति और उन सरीखे लूट-खसोट करनेवाले पनप सकें।

लेख पढ़कर जलील-मुअल्लिम के मन को गहरा आघात लगा। बहुत ही गहरा! स्पष्ट था कि वे ऐसे दुर्भाग्य के पात्र नहीं हैं, उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया है। उन्हें अपने आप पर तरस भी आया। जलील-मुअल्लिम जैसे व्यक्ति के साथ क्यों इतना क्रूर और अनपेक्षित व्यवहार किया जा रहा है, आखिर क्यों?

अब जलील-मुअल्लिम को पिछले महीने की उपेक्षणीय-सी प्रतीत होनेवाली वे घटनाएं याद आने लगीं, जिन पर उन्होंने अपनी व्यस्तता और भाई पर असीम विश्वास के कारण ध्यान ही नहीं दिया था।

केवल अब उनकी समझ में आया कि पिछले महीने में सीमुर्ग़ क्यों एक बार भी ट्रक पर बाहर नहीं गया। व्यंग्यात्मक लेख में खुल्लम-खुल्ला कहा गया था कि एक महीने से कुछ अधिक समय पहले उसका ड्राइविंग लाइसेंस ज़ब्त कर लिया गया है।

जलील-मुअल्लिम को इस बात से और ज़्यादा ठेस लगी कि भाई ने उन्हें इस घटना के बारे में कुछ नहीं बताया और अपने परिवार में हुई इस बात का पता केवल समाचारपत्र से लगा। वे अब यह अच्छी तरह समझ गये कि आज के सायंकालीन समाचारपत्र के एक ही वार से महल्ले में उनकी प्रतिष्ठा और सम्मान मटियामेट हो गया है और उनके शरीफ़ ख़ानदान के नाम पर बट्टा लग गया है।

जलील-मुअल्लिम ने सिर उठाया और ममेद बाबनली को अपने सामने खड़े पाया। वे ममेद की उपस्थिति के बारे में भूल ही गये थे और उनका सिर फिर झुक गया।

ममेद ने कुछ क्षण तक अपने अधिकारी के झुके सिर की ओर देखा और एक ठण्डी सांस ली। वे एक दूसरे से काफ़ी अरसे से परिचित थे। जलील-मुअल्लिम उन दिनों समाचारपत्रों का गट्ठर लिये घूमा करते थे, जिनमें मुख्यतः मोर्चे और पृष्ठ भाग की स्थिति के बारे में सूचनाएं छपी होती थीं। ममेद ने अस्पताल में अपने घावों का इलाज होने के बाद वहां से छुट्टी पाकर काम करना शुरू ही किया

था। ममेद हर वर्ष उस दिन शानदार दावत दिया करता था, जिसे वह अपने शब्दों में "चमत्कारी पुनर्जन्म" कहता था। ममेद किसी को भी यह नहीं बताता था कि कैसे एक तेज़ी से पीछे हटती चिकित्सा-टोली के एक अर्दली ने उसे संयोगवश अंधेरे में पड़े देख लिया था और उसके शरीर में जीवन के कोई लक्षण न दिखाई देने पर भी मोटर-बोट में डालकर मोर्चे के अस्पताल में पहुंचा दिया था।

उसने यह भी किसी को नहीं बताया था कि अचेत होने से पहले के कई घंटों में उस पर क्या गुज़री थी...

वह अपने दायें पैर पर लंगड़ाता बड़ी फुरती से नन्ही खिड़की से तराज़ूवाली मेज़ तक जाता, थके बिना पारसल पैक करता, दायें हाथ से, जिसमें केवल अंगूठा और तर्जनी ही बचे थे रसीदें काटता, उसका वह हाथ सामान्य मनुष्य के हाथ की तुलना में केकड़े के पंजे जैसा ज़्यादा लगता था।

अनुभवी सैनिक होने के कारण लोग अपने मोर्चे पर लड़ रहे घरवालों को गरम कपड़े भेजते समय ममेद से सलाह-मशविरा कर लेते थे। वह सदा उन लोगों की प्रशंसा किया करता था, जो मोर्चे पर युद्धरत आत्मीयों के लिए अपने आखिरी पैसों से चीज़ें खरीदकर भेजा करते थे। शुरू के सात-आठ महीनों में बाकू से पश्चिम दिशा की ओर पारसल लगातार भेजे जाते रहे, जिनमें से लहसुन, प्याज, सासेज, सुखाई गई मछली और दूसरे खाद्य-पदार्थों की गन्ध आती थी।

जलील-मुअल्लिम के साथ ममेद सदा अच्छे ढंग से पेश आता था। हां, कभी-कभार उनमें कुछ नोक-झोंक भी हो जाती थी, जो साथ में काम करनेवालों के बीच ज़रूर हो ही जाती है, लेकिन वे दोनों जल्दी ही सब भूल जाते थे। ममेद जलील-मुअल्लिम का उनकी आत्म-निर्भरता और अध्यवसाय के लिए आदर करता था, जो उनके लड़कपन में ही स्पष्ट दिखाई देता था। वह जीवन में किसी भी तरह अपना स्थान बनाने के उनके दृढ़निश्चय से भी बहुत प्रभावित था। जलील-मुअल्लिम के निदेशक नियुक्त किये जाने के बाद शुरू के दिनों में ममेद कभी-कभार उनके गम्भीर व राजसी हाव-भाव पर मन ही मन हंसता भी था, पर बाद में वह इसका अभ्यस्त हो गया।

इस समय ममेद जलील-मुअल्लिम के सामने मौन खड़ा उन पर तरस खा रहा था। जब उन्होंने अपना सिर उठाया, तो उसे आंखों

में किंकर्तव्यविमूढ़ता व पीड़ा दिखाई दी, जिसका अर्थ ममेद के लिए केवल उसकी सलाह और सहायता की मौन विनती ही था।

"सायंकालीन समाचारपत्रों का चन्दा अगले साल से ही लेना शुरू किया जायेगा," ममेद ने जलील-मुअल्लिम को सावधानीपूर्वक तैयार करते हुए धीरे-धीरे कहा। "मंत्रालय ने आश्वासन दिया है कि यह कार्य अगले साल से शुरू कर दिया जायेगा..."

"क्या करता है इस वक़्त मुझे चन्दे का?" जलील-मुअल्लिम ने चिड़चिड़े स्वर में पूछा। "क्या तुम सचमुच यह सोचते हो कि मैं इस समय चन्दे के बारे में सोच सकता हूं?"

"लेकिन ऐसा कोई नियम नहीं है कि एक आदमी कितनी प्रतियां खरीद सकता है," ममेद धीरे-धीरे बोलता रहा। "एक आदमी इस शनिवार के अंक की इस इलाक़े के लिए दी गयी सारी प्रतियां खरीद सकता है और दूसरे के हाथ एक भी नहीं लग सकती है, ऐसा होता ही है। इसके अलावा दूसरे इलाक़ों में जाकर भी सारी प्रतियां खरीदी जा सकती हैं, क़िस्मत से सारे समाचारपत्र-विक्रेता हमारे जान-पहचान के हैं। और गाड़ी भी मौजूद है।"

ममेद ने जलील-मुअल्लिम के चेहरे पर एक उड़ती-सी नज़र डाली और उसे उस पर आशा की ज्योति टिमटिमाती हुई दिखाई दी।

"मैंने अपने इलाक़े के लिए मिली सारी प्रतियां रोक ली हैं। मैंने समेदोव से कहा और वह कुल पांच हज़ार प्रतियां छोड़ गया है। दूसरे इलाक़ों के बूथों में कोई पैंतालीस मिनट में बिक्री शुरू होगी... हमें सारे इलाक़ों से कोई मतलब नहीं। हमें बस वक़्त पर सातवें मार्ग और बेशमारत्तेवा के बूथों पर पहुंचना है।"

बाक़ी सब जैसे सपने में हो गया। जलील-मुअल्लिम चुपचाप ममेद के पीछे-पीछे जाकर गाड़ी में बैठ गये। सब से पहले बचत-बैंक में जाकर उन्होंने दो सौ रूबल निकलवाये। फिर सब बूथों का चक्कर शुरू हुआ। गाड़ी को बूथ से थोड़ी दूर सम्भालकर जलील-मुअल्लिम उसके एक कोने में दुबके बैठे रहते। ममेद जाकर परिचित विक्रेता से कुछ बातें करता और समाचारपत्रों का एक गट्ठर लेकर लौट आता। जलील-मुअल्लिम ने कई बार ममेद से कहना चाहा कि वह अखबार बिक्री के लिए तुरन्त लौटा दे, क्योंकि वे अपने स्वार्थ के लिए अपने पद का दुरुपयोग नहीं करना चाहते।

जलील-मुअल्लिम को बाद में स्पष्ट याद आया कि वे ममेद को रोकना चाहते थे, पर रोका नहीं। वे बस बैठे-बैठे इस कष्टदायक यात्रा के दौरान ममेद की यही दलीलें सुनते रहे कि अपने जीवन में एक बार किसी भी नागरिक को किसी समाचारपत्र की दस हज़ार प्रतियां खरीदने का पूरा अधिकार है, जबकि वह उनकी क़ीमत तुरन्त अदा कर रहा हो, न कि सरकारी खाते से उनका भुगतान करवा रहा हो, जैसा कि कोई और चलता पुरज़ा कर सकता था।

ममेद ज़िंदादिली और शुद्धहृदय से बोले जा रहा था, मानो ये सब बातें उसके लिए कोई महत्त्व न रखती हों। कई बार तो जलील-मुअल्लिम को ममेद की दलीलें ठीक भी लगीं। वे कोई जोखिम नहीं उठा रहे थे, आखिर अपने पैसे से ही तो समाचारपत्र खरीद रहे थे। लेकिन उसके बाद कई दिनों तक यह विचार उनको बराबर कचोटता रहा कि उन्होंने भले ही किसी अपराध में भाग न लिया हो, पर किसी हद दर्जे के गंदे काम में भाग ज़रूर लिया था और अपने भावी जीवन में उसे भूलने का अधिकार प्राप्त करने के लिए उन्हें भगीरथ प्रयत्न करने पड़ेंगे।

जलील-मुअल्लिम दिन ढले घर लौट आये। ममेद की मदद से उन्होंने अखबार के गट्ठर बरामदे के दूर कोने में रख दिये और पत्नी व बच्चों को उन्हें छूने की सख़्त मनाही कर दी।

ममेद उनके साथ खाना खाने के बाद शाम को देर तक बैठा रहा और इस बात का पक्का यक़ीन हो जाने पर ही गया कि पड़ोसियों में से कोई भी वह लेख नहीं पढ़ पाया है। इसका प्रमाण यह था कि जलील-मुअल्लिम से उस सुहावने शनिवार की शाम को मिलने आनेवालों में से किसी ने भी उसके बारे में कुछ नहीं पूछा था।

ममेद कब का जा चुका था, बीवी-बच्चे कभी के सो चुके थे, पर जलील-मुअल्लिम बिजली जलाये बिना बरामदे की रेलिंग पर कोहनियां टिकाये बैठे थे। वे अपने आपको सीमुर्ग के साथ होनेवाली निर्णायक और अप्रिय बातचीत के लिए तैयार कर रहे थे। पर न जाने वह अभी तक कहां रुक गया है। वे काफ़ी देर तक उसकी बाट जोहते रहे और अन्ततः बॉयलरों की शान्तिप्रद, लोरी-सदृश गूंज और उसके साथ बगीचे से झींगुरों की कर्णप्रिय झिंगार सुनते-सुनते सो गये। दिन भर की थकान और उत्तेजक घटनाओं को बर्दाश्त कर पाना उनके

लिए असम्भव हो गया था।

किसी के हौले से उनका कंधा छूने से जलील-मुअल्लिम की नींद खुल गयी। उन्होंने आंखें खोलीं और बरामदे के मद्धिम प्रकाश में भाई का चेहरा नजर आया।

"सलाम, आगा-दादाश," सीमुर्ग़ ने धीरे से कहा।

जलील-मुअल्लिम लम्बी झपकी आने के कारण अधमुंदी आंखों से उसकी ओर देखते रहे। वे प्रकृति की कृपा से मनुष्य को कुछ क्षणों के लिए प्राप्त होनेवाली उस दुर्लभ सुखद स्थिति में रहे, जब उसकी चेतना विचारों से पूर्णतः मुक्त होती है और वह अत्यल्प समय के लिए अपने चारों ओर के संसार को कुछ सोचे या स्मरण किये बिना देखता है। जलील-मुअल्लिम को भाई को देखकर मृदुल शान्तिकारक सुख की अनुभूति हुई। वह सुख उन्हें सीमुर्ग़ से, हवा के मन्द, उष्ण झोंकों, निश्चल पत्तियों से छनकर आते बिजली के खंभे के मद्धिम प्रकाश के माध्यम से अपनी ओर प्रवाहित होता प्रतीत हुआ। हर्षानुभूति से उन्हें क्षणिक हंसी आ गयी, जो मानो उनके वक्षस्थल की गहराइयों में से निकली थी।

"आप इतनी गहरी नींद सो रहे थे," सीमुर्ग़ ने उनके कंधे पर से हाथ हटाये बिना कहा, "कि मेरा आपको जगाने का ही मन नहीं हुआ।"

"क्या काफ़ी पहले आ गये थे तुम?" जलील-मुअल्लिम ने पूछा।

"अभी-अभी आया हूं। मैं एक तरबूज़ लाया हूं। आप बैठे रहिये, मैं इसे अभी काटकर लाता हूं।"

वे मीठा, ठण्डा तरबूज़ खाने लगे। जलील-मुअल्लिम सोच रहे थे कि वे सीमुर्ग़ के साथ गम्भीर बात कैसे छेड़ें। उन्होंने हाथ धोये और सीमुर्ग़ के मेज़ साफ़ कर लेने के बाद बिजली जला दी। फिर वे कुछ भी कहे बिना सीमुर्ग़ को बरामदे में रखे अख़बार के गट्ठों के पास ले गये।

"ये कहां से आये?" सीमुर्ग़ ने गट्ठों को फटी-फटी आंखों से देखते हुए पूछा।

"आज शाम के ये सब अख़बार मैंने शर्मिंदगी से बचने के लिए सारे बूथों का चक्कर काटकर ख़रीदे हैं," जलील-मुअल्लिम ने जवाब दिया।

"क्यों?" सीमुर्ग़ ने पूछा। "आपको इतने सारे अख़बार ख़रीदने की क्या जरूरत थी?" जलील-मुअल्लिम को भाई के स्वर में आश्चर्य का भाव अनुभव हुआ। "आपने क्या उस व्यंग्यात्मक लेखवाला अख़बार ख़रीदा है? यह रहा। मैंने भी ख़रीदा है।"

सीमुर्ग़ ने जेब से उस समाचारपत्र की एक मुड़ी-तुड़ी प्रति निकाली, वैसी ही जैसी कि फ़र्श पर हज़ारों रखी थीं।

"क्या सचमुच मेरे लिए तुम्हें यह सब समझाना जरूरी है?" जलील-मुअल्लिम ने कटुता से कहा। उन्हें इस बात से ठेस लगी कि सीमुर्ग़ ने यह भी समझने की कोशिश नहीं की कि अपने ख़ानदान, सीमुर्ग़ और अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए उन्हें क्या-क्या करना पड़ा है। "हमें बात करनी चाहिए।"

उन्होंने बात की। सीमुर्ग़ ने कहा कि कुछ गम्भीर समस्याओं के कारण उसे अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी है। लाइसेंस उसे लौटा दिया गया है, पर काम से हटा दिया गया है। निस्सन्देह उसे मालूम था कि वह ग़ैरक़ानूनी कामों में हिस्सा ले रहा है, पर उनमें उसका सीधा हाथ नहीं रहा। वह केवल ट्रक पर फ़ालतू ढुलाई करता रहा और अपनी ज़बान बंद रखे रहा, पैसा उसे अच्छा मिलता रहा। उस पर मुक़दमा नहीं चलाया जायेगा, क्योंकि झूठे दस्तावेज़ बनाने में उसका हाथ नहीं था, साथ ही इस बात को भी ध्यान में रखा गया है कि उसका अतीत निष्कलंक था और उसे सेना से उसकी उत्कृष्ट सेवा के प्रमाणपत्र मिले हुए थे।

उसने यह भी कहा कि इस अप्रिय घटना को उसने अपने भाई से उन्हें ग़ैर समझने के कारण नहीं, बल्कि परेशान न करने के ख़याल से ही गुप्त रखा था।

"अब तुम समझे या नहीं कि मैंने तुम्हें जब ड्राइवर का काम करने से रोका था, तो ठीक ही किया था? याद है, मैंने कितना रोका था तुम्हें? मेरी सुनी होती, तो क्या आज यह शर्मिंदगी उठानी पड़ती?"

"कैसी शर्मिंदगी? मैंने न चोरी की है, न किसी का ख़ून, बस बुरे काम में जरूर फंस गया," सीमुर्ग़ बोला। "जो होना था, वह हुआ... आख़िर ऐसा किसी भी के साथ हो सकता है।"

"तुम्हें कम-से-कम मेरे बारे में तो सोचना चाहिए था," जलील-

मुअल्लिम ने कहा। "उन लोगों के बारे में भी, जो हमारे खानदान को जानते हैं।"

"आपका मतलब क्या पड़ोसियों से है?" सीमुर्ग़ ने कहा और उसके स्वर में पहली बार झल्लाहट का पुट अनुभव हुआ। "आग़ा-दादाश, आप इस वक़्त क्यों उनका ज़िक्र कर रहे हैं मुझ से? क्या मतलब है मुझे हमारे सारे जान-पहचानवालों से?"

वे काफ़ी देर तक बातें करते रहे, लेकिन जलील-मुअल्लिम ने महसूस किया कि सीमुर्ग़ उनकी बात अनादर या अन्यमनस्कता के साथ ही नहीं, बल्कि अजीब-सी मुख-मुद्रा के साथ सुन रहा है, जैसे उसे, जो वे कह रहे हैं, बहुत पहले से मालूम हो और अधिक रुचिकर न लग रहा हो। यह सच है कि अन्ततः सीमुर्ग़ भाई से सहमत हो गया और उसने उन्हें ड्राइवरी के अलावा कोई और काम ढूंढ़ने का वचन भी दिया। लेकिन सहमति उसने अनुत्साह, लगभग उपेक्षापूर्वक और अन्यमनस्कता से प्रकट की।

"क्या मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकता हूं?" जलील-मुअल्लिम ने पूछा और उसी क्षण यह प्रश्न करने के लिए और बाद में भी बहुत पछताये।

"आप?" सीमुर्ग़ ने अत्यन्त आश्चर्य के साथ पूछा। उसने सिर उठाकर छद्म मुस्कान के साथ अपने भाई को ग़ौर से घूरा। "आखिर आप मेरे लिए क्या कर सकते हैं?"

"कुछ सोचना पड़ेगा," जलील-मुअल्लिम ने ज़रा रुककर उत्तर दिया। "सोचना पड़ेगा।" उन्हें उपयुक्त शब्द नहीं सूझ रहे थे और वे सीमुर्ग़ के कटु स्वर के कारण अस्त-व्यस्त हुए अपने विचारों को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास करते हुए माथे पर हाथ मलते रहे। "कुछ सोचना पड़ेगा। सलाह करनी होगी..."

"किसी से सलाह करने की ज़रूरत नहीं है, आग़ा-दादाश," सीमुर्ग़ ने नम्र स्वर में कहा। "मैं कोई बच्चा तो हूं नहीं, खुद काम ढूंढ़ लूंगा। आप परेशान मत होइये, सब ठीक हो जायेगा। ठीक है न?" उसने उत्तर की प्रतीक्षा की, पर भाई ने केवल मौन साधे सिर हिला दिया। "मैंने कुछ सोच लिया है। मालूम करके एक-दो दिन में आपको सब बता दूंगा। अच्छा, अब आप भी सोइये।"

वह अपने कमरे में चला गया, लेकिन जलील-मुअल्लिम बिस्तर

पर जाने से पहले काफ़ी देर तक बरामदे में बैठे सुबह से अब तक जो कुछ हुआ था, सब याद करते रहे। उन्हें एक ऐसे व्यक्ति की तरह निराशा और किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता का अनुभव हो रहा था, जो दर्पण में अचानक अपरिचित, तुच्छ और आंखों में दयनीय भाववाला चेहरा देखकर आश्चर्य-चकित रह जाता है और साथ ही यह भी जानता है कि वह इस चेहरे से बचकर कहीं नहीं जा सकता।

सीमुर्ग़ ज़्यादा दिन बेकार नहीं रहा। केवल एक सप्ताह या उससे कुछ अधिक समय के लिए। वह घर से सुबह जल्दी निकल जाता और देर से लौटकर आता, फिर खाना खाते समय सहर्ष बताने लगता कि वह अपनी पसंद का एक ऐसा काम ढूंढ़ रहा है, जिसमें पैसा भी काफ़ी मिले, काम दिलचस्प भी हो, समय भी ज़्यादा न ख़र्च करना पड़े, क्योंकि वह अगले वर्ष सायंकालीन या पत्राचार पाठ्यक्रम में प्रवेश लेना चाहता है। वह यह भी बताता कि एक काम उसे क़रीब-क़रीब मिल ही गया था, जिसमें तनख़्वाह भी इतनी मिलती कि खुले हाथ से ख़र्च करने के बावजूद उसे महीने के अन्त तक ख़र्च कर पाना मुश्किल होता, वर्ष के अन्त में मेज़ पर बोनस भी लिफ़ाफ़े में रखा मिलता और उसे काम पर ले जाने के लिए कार भी घर आती। वह तो उस बढ़िया जगह के निदेशक के बार-बार मनाने पर तैयार भी हो गया था, पर उसकी एक शर्त मालूम होते ही उसने इनकार कर दिया। सीमुर्ग़ ने कुछ क्षणों के लिए मौन साधकर खाने में जुट जाने का स्वांग रचा। फिर भोली-भाली लैला ख़ानम यानी भाभी के यह पूछने पर कि वह आखिर कैसी भयानक शर्त थी, जिसके कारण उसने ऐसी नौकरी ठुकरा दी, उसने बताया कि वह किसी भी हालत में सफ़ेद दस्ताने पहनकर और काली टाई लगाकर काम करने को तैयार नहीं होगा और वहां ऐसा ज़रूरी है। लैला ख़ानम ने उसे मनाने की कोशिश की कि ऐसी मामूली सी बात के लिए उसे इतनी अच्छी नौकरी हाथ से नहीं जाने देनी चाहिए। लेकिन सीमुर्ग़ टस से मस न हुआ। उसने दलील पेश की कि आदमी को दूरदर्शी होना चाहिए। आज अगर कोई सफ़ेद दस्ताने पहनकर काम करने को तैयार हो जाता है, तो कल उसे बीयर के साथ धुएं में सुखायी कार्प मछली भी खाने को मजबूर किया जा सकता है, चाहे वह उसे पसंद हो या नापसन्द। लैला ख़ानम ने गुस्से में हाथ पर हाथ मारकर कहा कि उन्होंने कभी सोचा भी

नहीं था कि सीमुर्ग़ इतना तुनुकमिज़ाज और सिद्धान्तवादी हो सकता है। जलील-मुअल्लिम यदा-कदा मुस्कराते हुए उनकी ये बातें सुनते रहे, पर उन्होंने भाई के काम तलाशने के बारे में कोई सवाल नहीं पूछा।

एक शाम सीमुर्ग़ बहुत ख़ुशी-ख़ुशी घर आकर बोला कि उसे अपनी पसंद का काम मिल गया है और वहां किसी ने टाई और सफ़ेद दस्तानों का नाम भी नहीं लिया है।

"और तुम्हें ले जाने के लिए कार भी सुबह आया करेगी ?" लैला ख़ानम ने स्त्री-सुलभ प्रकृति के अनुसार ऊपरी टीम-टाम को सफलता और समृद्धि का लक्षण मानकर पूछा।

"कार के बारे में तो मैं पूछना भूल गया," सीमुर्ग़ ने खेदपूर्ण स्वर में कहा, "लेकिन कल बोट ज़रूर आयेगी और कभी-कभी हेलिकाप्टर भी। आप कभी हेलिकाप्टर में बैठी हैं, भाभी ?"

जलील-मुअल्लिम समझ गये कि सीमुर्ग़ मज़ाक़ नहीं कर रहा है।

"तुम्हें कहां काम मिला है ?"

"संयोग से, पर शायद मेरी क़िस्मत अच्छी है," सीमुर्ग़ ने हिचकिचाकर कहा। ऐसा लगा कि वह भाई को ख़ुश करना चाहता है। "कुछ दिन पहले ज़ऊर नगियेव से मेरी मुलाक़ात हुई, स्कूल पास करने के बाद पहली बार मिला उससे। आपको याद है, आग़ा-दादाश, वह हमारे यहां आया करता था।"

"वही, जिसका बाप केन्द्रीय मिलिशिया विभाग में काम करता था और जिसने बाद में अपनी बीवी को तलाक़ दे दिया था ?"

"हां, हां, वही... वह आजकल तेल संस्थान के पत्राचार-पाठ्यक्रम द्वारा शिक्षा पा रहा है। बहुत मेहनती लड़का है वह, गपोड़िया नहीं है। स्कूल पास करते ही वह नौकरी करने लगा था। आजकल वह ड्रिलर है और इंस्टीट्यूट पास करते ही उसे अपनी यूनिट का इनचार्ज बना दिया जायेगा। उसे पक्का आश्वासन मिल चुका है। वह तटवर्ती समुद्र में तेल के कुएं ड्रिल करता है। दस दिन समुद्र में काम करता है और फिर दस दिन घर पर रहता है।"

"समझ गया। मतलब यह कि वह समुद्री तेल क्षेत्र में काम करता है ?"

"कुछ ऐसा ही है," सीमुर्ग़ बोला, "पर वे नये डेरिक लगा

रहे हैं। उसने मुझे समझाया कि वे समुद्र में कैसे स्टील के नये द्वीप बनाते हैं और वहां ड्रिलिंग शुरू कर देते हैं।"

"सब समझ गया," जलील-मुअल्लिम बोले। "मुझे इसमें कोई अच्छाई नज़र नहीं आती। बहुत ख़तरनाक काम है यह। दिन-रात खुले समुद्र में रहना पड़ता है। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम वहां क्या करोगे। तुम क्या तेलविशेषज्ञ हो ?"

"मैं आपको सब समझा देता हूं," सीमुर्ग़ ने अधीरता से उनकी बात काट दी। "पहली बात तो यह है कि इसमें कोई ख़तरा नहीं है। ज़ऊर ने मुझे सब समझा दिया है। बुरी बात बस यही है कि जब उत्तरी हवाएं चलती हैं, तो काम ख़त्म होने के बावजूद कुछ दिन और समुद्र में रुके रहना पड़ता है, पर बदले में उतने ही दिन की छुट्टी भी मिल जाती है। दूसरी बात यह है कि उन्हें डीज़ल इंजन मेकेनिक की ज़रूरत हैं और यह काम मेरे लिए बायें हाथ का खेल है। फिर वहां तनख़्वाह भी शहर के मुक़ाबले दुगुनी मिलती है, ऊपर से लक्ष्य से अधिक उत्पादन के लिए हर महीने बोनस भी और साथ ही हर वर्ष वरिष्ठता को ध्यान में रखकर तनख़्वाह भी बढ़ा दी जाती है। और सबसे अच्छी बात तो यह है," सीमुर्ग़ बोला, "कि एक इंस्टीट्यूट है, समुद्री तेल-क्षेत्रों में ड्रिलिंग करनेवालों को दूसरों से पहले प्रवेश दिया जाता है उसमें। बस, परीक्षाएं पास करना ज़रूरी होता है, अंकों से कोई मतलब नहीं। इसके अलावा किसी भी स्वास्थ्य-स्थल का पास मिलता है, जहां का चाहो, वहीं का।"

"तुम्हारी मर्ज़ी है," जलील-मुअल्लिम ने कहा। "जब तुम काम पर लग ही गये हो, तो अब इसके बारे में बात करने में तुक ही क्या है। लेकिन मैं नहीं चाहता कि मेरा सगा भाई दिन-रात समुद्र में रहे, जैसे उसे शहर भर में कोई काम ही नहीं मिल सकता हो... लोग तो गांवों से आकर बाकू में काम ढूंढ लेते हैं। हर जगह पहले काश्तकार रह चुके लोग काम करते हैं और अकदमीशियन बन जाते हैं, पर तुम हो कि..." जलील-मुअल्लिम ने ग़ुस्से से हाथ झटका।

"सब ठीक हो जायेगा, आग़ा-दादाश," सीमुर्ग़ ने कहा। "मैं आज वहां देखने गया था, काम मुझे पसंद आ गया। पूरी आज़ादी है उसमें, पैसा भी अच्छा कमाया जा सकता है और तरक़्क़ी भी हो जाएगी।"

"पर चिकित्सा संस्थान में प्रवेश पाने की क्या तुम नहीं सोच रहे हो?" जलील-मुअल्लिम ने उदासीनता से पूछा।

"कैसे सोच सकता हूं मैं उसमें प्रवेश पाने की? मैं तो सिर्फ़ एक बार, जब मेरे हाथ में चोट लगी थी, अस्पताल में रहा था। तब दवाइयों की बू से ही मुझे उलटी होते-होते रह गयी थी। डाक्टर बनना मेरे बस की बात नहीं है।"

"तुमने हमें तो कभी नहीं लिखा कि तुम अस्पताल में रहे थे," लैला ख़ानम ने कहा।

"ऐसी कोई गम्भीर बात तो थी नहीं। मेरे हाथ की हड्डी उतर गयी थी। उसे ठीक से बिठा दिया गया और पांच दिन बाद मुझे अस्पताल से छुट्टी मिल गयी। जी भर गया वहां भयानक नज़ारे देखकर मेरा। नहीं, यह मेरे बस का काम नहीं।"

"यानी तुमने पक्का फ़ैसला कर लिया?"

"हां," सीमुर्ग़ ने जवाब दिया।

"ठीक है," जलील-मुअल्लिम ने कहा। "तब मैं क्या कह सकता हूं। ख़ुदा ख़ुश रखे तुम्हें। मेरी तो बस यही तमन्ना है कि तुम्हारे सारे काम ठीक-ठीक होते रहें।"

"यह मैं जानता हूं, आग़ा-दादाश।"

अपने नये काम पर सीमुर्ग़ इतना सांवला पड़ गया कि उसे पहचान पाना मुश्किल हो गया। शुरू के कुछ दिनों तक उससे तेल और समुद्र की गंध आती रही। वह बड़े उन्साह से अपने काम के बारे में बताता, जिससे उसके घरवालों व पड़ोसियों को बहुत-सी नयी और दिलचस्प जानकारी मिलती। सब से आश्चर्यजनक बात यह थी कि दो क़दम के फ़ासले पर समाचारपत्रों में और टेलीविज़न पर लगातार बताये जानेवाले उन्हीं समुद्री तेल क्षेत्रों में ऐसी घटनाएं घट रही थीं, जिन के बारे में सीमुर्ग़ के वहां काम करने से पहले उनको कुछ पता नहीं था। यह मालूम होने पर सब दंग रह गये कि उन कृत्रिम द्वीपों पर ही नहीं, बल्कि व्यापक समुद्री तेल क्षेत्र में पूरी कठोरता के साथ 'मद्यनिषेध क़ानून' लागू है और सर्वोच्च अधिकारी से लेकर मात्र एक दिन के लिए आनेवाले पत्रकार तक कोई भी उसे भंग नहीं कर सकता। यह सुनकर भी वे हैरान रह गये कि साधारण टेलीविज़न सेटों पर भी वहां बाकू और मास्को के ही नहीं, बल्कि आस्ट्राखां, क्रास्नो-

वोद्स्क, पितीगोर्स्क और अनेक अन्य अज्ञात विदेशी स्टेशनों के कार्यक्रम भी बिलकुल साफ़ देखे और सुने जा सकते हैं।

यह पूर्णतः स्पष्ट था कि सीमुर्ग़ अपने काम से सन्तुष्ट है और उसे छोड़ने का उसका कोई इरादा नहीं है। जलील-मुअल्लिम जानते थे कि सीमुर्ग़ केवल उन्हीं की ख़ातिर सुरक्षा नियमों और विशेष सुरक्षा सेवा को उपलब्ध कराये गये आधुनिकतम हेलिकाप्टरों व मोटरों के बारे में विस्तार से बताता है।

"आप किसी भी बात की बिलकुल फ़िक्र न कीजिये," सीमुर्ग़ ने कहा। "मेरा वहां कुछ नहीं बिगड़नेवाला। बहुत अच्छा काम है यह... मुझे लगता है, आप किसी बात से परेशान हैं, हैं न? ख़ुदा के वास्ते मुझे बताइये, मैं सब वैसे ही करूंगा, जैसे आप चाहेंगे।"

"मैं ख़ुश हूं," जलील-मुअल्लिम ने उत्तर दिया। "मुझे अपने लिए तो कुछ भी नहीं चाहिए। बस, तुम लोग तंदरुस्त रहो।" पिछले कुछ समय से वे हर बात के प्रति अपने आपको उदासीन पा रहे थे, जो उनके लिए अस्वाभाविक था। काम पर भी वे किसी विशेष उत्साह के बिना जाते थे। इसका यह अर्थ बिलकुल नहीं था कि वे अपने उत्तरदायित्वों के प्रति उदासीन हो गये थे, उनमें पहले जैसा जोश नहीं रहा था या लापरवाह हो गये थे। ऐसी कोई बात नहीं थी। पर उनके लिए अपने कार्य में अब पहले जैसी आकर्षण-शक्ति नहीं रही थी, जिसके कारण दुनिया देखा आदमी न केवल डाक-सेवा जैसे वास्तव में कठिन कार्य में, बल्कि दूसरे कार्यों में भी अपनी कुशलता का प्रदर्शन कर सकता है। अब वे समय पर तार या पत्रादि न पहुंचानेवाले या ग़लत पते पर पहुंचानेवाले सहकर्मी को नपे-तुले शब्दों में झिड़की देकर छोड़ देते थे। वे दोषी व्यक्ति को उदाहरणों सहित लम्बा-चौड़ा और ऐसा उपदेशात्मक भाषण नहीं देते थे कि उसकी छोटी-सी भूल के कितने गम्भीर परिणाम हो सकते हैं।

अब उन्होंने अपने सहकर्मियों की मीटिंगों के लिए पहले से भाषण तैयार करना भी छोड़ दिया था। हर कोई उनके संक्षिप्त और सभा से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित विषयों पर भाषण सुनकर आश्चर्यचकित रह जाता था।

जलील-मुअल्लिम दूसरे मामलों में भी काफ़ी बदल गये थे। उदाहरण के लिए अब वे डाकख़ाने के अंदर सिगरेट पी रहे किसी ढीठ

6-0300

लड़के को देखकर उसके पास से वितृष्णापूर्वक मुंह सिकोड़कर निकल जाते। लेकिन पहले वे ऐसे छोकरों को 'धूम्रपान निषिद्ध है' की पट्टी के पास ले जाकर दो-तीन जोरदार शब्दों में सबके सामने उनका जोश इतना ठण्डा कर देते कि उनके शब्द सुनने के बाद वह जीवन भर के लिए सिगरेट पीना ही छोड़ दे। ममेद के साथ भी उनके सम्बन्ध कुछ बदल-से गये थे। पहले ममेद के साथ बातें करने में उन्हें आनन्द आता था और वे उसे अपना पुराना साथी भी मानते थे, तो अब उसके साथ केवल अपने काम के बारे में ही बात करते थे और बाक़ी समय उससे कतराते रहते थे, हालांकि ममेद उनके अच्छे और बुरे दिनों का साथी ही नहीं, बल्कि मित्र भी था।

एक और बात, जो पहले उनमें कभी देखने में नहीं आती थी, वह यह थी कि अब वे बड़ी अधीरता से काम का दिन समाप्त होने और वापस अपने घर या बगीचे में शाम गुज़ारने की बाट जोहते थे।

घर लौटते समय वे रास्ते में अपने परिचितों से हमेशा की तरह दुआ-सलाम करते, उनसे हाल-चाल पूछते, उनके विचार सुनते और अपने बताते। घर के निकट उन्हें मनफ़ के घरवालों में से कोई न कोई ज़रूर नज़र आ जाता, बंदर की तरह सूरजमुखी के बीज कुतरती उसकी पत्नी या बेटी। वैसे दिलबर उन्हें विरले ही मिलती थी, पर जब भी मिलती, तो वह गम्भीरता से उनसे दुआ-सलाम करती थी। न उसके चेहरे पर पहले जैसी खुशनुमा मुस्कान होती, न बेशर्मी, कपड़े भी अब वह ढंग के, सीधे-सादे पहनती थी, शिष्टता की सीमा तक उसकी सुघड़-सुडौल पिंडलियों को दिखानेवाले। जलील-मुअल्लिम इन सब बातों को दिलबर पर उसके सहकर्मियों के लाभकारी प्रभाव का परिणाम मानते थे और उन्हें सन्तोष अनुभव होता था कि लड़की को औषधालय में काम दिलाकर उन्होंने जो बीज बोये थे, उनके अच्छे ही फल मिल रहे हैं।

जलील-मुअल्लिम दिन भर अपने बगीचे में काम करते, बड़ी खुशी से मधुमक्खियों की संभाल करते, उनकी जीवन प्रणाली देखते, पौधों को सींचते, ज़मीन खोदते, अंगूर की बेलों और दूसरे फलों के पेड़ों की फ़ालतू डालियां काटते, ताकि बगीचा सुन्दर लगे और उसे देखकर तन-मन खिल उठे।

सीमुर्ग़ जब घर पर रहता, तो वे उससे नाश्ते और दोपहर के

खाने के समय रोज़ाना मिलते। सब लक्षणों से यही पता लगता था कि सीमुर्ग़ का काम ठीक-ठाक चल रहा है।

सीमुर्ग़ ने अपने भाई से कई बार पूछा कि उन्हें पैसे की ज़रूरत तो नहीं है, देने का हठ भी किया, पर हर बार वे यही जवाब देते, जो वास्तव में सही भी था, कि उन्हें पैसे की ज़रूरत नहीं है, उनके पास काफ़ी है।

सीमुर्ग़ के पास शाम को अकसर मेहमान आते रहते थे। उनमें से अधिकांश उसके सहकर्मी या उसके हमउम्र हुआ करते थे। सीमुर्ग़ हर बार अपने भाई को भी न्योता देता था। वे शिष्टाचारवश एकाध घंटा वहां बैठकर उठ आते, ताकि वे उनकी उपस्थिति के कारण शर्मायें नहीं। बरामदे में अकसर उनकी हंसी सुनाई देती रहती। जलील-मुअल्लिम उनकी हर बात पर हंस पड़ने के सामर्थ्य से चकित रह जाते थे, भले ही उनकी राय में बात हंसने लायक़ हो या नहीं। शुरू में वे उसका कारण उनकी जवानी समझते थे, पर बाद में उनका यह विचार बिलकुल बदल गया। सीमुर्ग़ और उसके साथियों की उम्र में वे खुद कितना गम्भीर व संयत रहते थे, मित्र-मण्डली में कभी ऐसा चंचल व्यवहार करने से कतराते थे। वे इस अवश्यंभावी निष्कर्ष पर पहुंचे कि उनके पालन-पोषण में अवश्य कुछ ऐसे दोष रह गये हैं, जिन्हें अब दूर कर पाना असम्भव है।

जलील-मुअल्लिम इस बात से भी खीजने लगे कि सीमुर्ग़ के पास मित्र और सर्वथा अपरिचित लोग भी अनुचित समय पर सुबह, शाम और यहां तक कि रात को भी आते रहते हैं। उन्हें लगता कि शायद वे लोग अपने कृत्रिम द्वीपों के अनियमित काम के घंटों के आदी हो गये हैं। इसीलिए उन्होंने घर को सराय समझ लिया है।

जलील-मुअल्लिम काफ़ी समय तक मन ही मन घुटते रहे, लेकिन आखिर एक बार बातों ही बातों में उन्होंने सीमुर्ग़ से इसकी चर्चा कर ही दी।

सीमुर्ग़ ने कहा कि वह भी अरसे से इस विचार से चिन्तित है कि लोगों के अकसर आते रहने से भाई और उसके परिवार के आराम में खलल पड़ रहा है। उसने जलील-मुअल्लिम से लोगों के आने-जाने के लिए पिछला फाटक खोलने की अनुमति मांग ली, जिसे काफ़ी अरसे से, ज़रूरत न रहने के कारण उनके स्वर्गीय पिता ने ही तख्ते

लगाकर बंद कर दिया था। सीमुर्ग़ के कमरे का दरवाज़ा भी अहाते के दूसरे छोर पर उसी फाटक के सामने खुलता था।

जलील-मुअल्लिम मान गये। उन्हें आश्चर्य भी हुआ कि इतनी साधारण-सी बात उनके दिमाग में क्यों नहीं आयी। उन्होंने यह भी कहा कि उन्हें अहाते का सूना और उजड़ा पड़ा हिस्सा, जिसमें इतने सालों से कूड़ा-करकट और काठ-कबाड़ जम हो गया है, साफ़ करना चाहिए। सीमुर्ग़ ने उनकी बात मान ली और कहा कि वह उसे केवल साफ़ ही नहीं कर देगा, बल्कि उसमें पेड़-पौधे भी लगा देगा।

जलील-मुअल्लिम ने अपने भाई के इरादों को नेक बताया, पर उसके उत्साह पर मुस्कराकर बोले कि उसे इस झंझट में नहीं पड़ना चाहिए, क्योंकि पेड़-पौधे लगाने के लिए बहुत समय, मेहनत और ध्यान की ज़रूरत होगी। उन्होंने उसे याद दिलाया कि बाग़बानी में इतना कुशल और जानकार होने के बावजूद उन्हें अपना बगीचा आज की हालत में लाने के लिए कितने साल लगाने पड़े हैं।

सीमुर्ग़ हंसकर बोला कि वह जलील-मुअल्लिम को कोई कष्ट दिये बिना स्वयं ही अहाते को ठीक-ठाक कर लेगा, क्योंकि बड़े भाई के पास वैसे ही ढेरों काम रहते हैं।

सीमुर्ग़ अगले दिन ही दो मज़दूरों को ले आया। उन लोगों ने पिछले फाटक पर लगे तख़्ते उखाड़ दिये, कूड़ा-करकट, काठ-कबाड़ हटा दिया और तीन दिन में ही सीमुर्ग़ के बताये स्थान पर अनेक गड्ढे खोद डाले। फिर एक के बाद एक खाद से ऊपर तक भरे डम्पर अहाते में आये और खाद उलटकर चले गये।

सीमुर्ग़ ने बताया कि उसने बूचड़ख़ाने से खाद ख़रीदी है, जहां वे बड़ी ख़ुशी से उसे पांच रूबल प्रति ट्रक के हिसाब से बेचते हैं।

जलील-मुअल्लिम के देखते-देखते कुछ ही दिनों में अहाते का दूसरा हिस्सा नाना प्रकार के पेड़ों से, न कि किन्हीं सूखे से पौधों से, बल्कि तंदरुस्त और ढंग से तराशे हुए नौउम्र पेड़ों से लहलहा उठा। सीमुर्ग़ ने अपने एक परिचित कृषिविद् के ज़रिये सरकारी दर पर ये पेड़ ख़रीदे थे।

सीमुर्ग़ ने फलों के वृक्ष लगाये, जिनमें मुख्यतः वैसे ही थे, जैसे कि जलील-मुअल्लिमवाले हिस्से में थे – काले और सफ़ेद शहतूत, आड़ू, अनार आदि के। लेकिन उसने इनके अलावा अख़रोट भी लगाये,

जो अहाते के लिए नये थे। लगभग सभी पेड़ों ने जड़ें जमा लीं और उसी वसन्त में उनमें नयी डालियां निकल आयीं।

आस-पड़ोस की गलियों के लोग सीमुर्ग़ के बगीचे को देखने के लिए भी आने लगे। वे उसकी प्रशंसा करते और सीमुर्ग़ से पूछते कि आख़िर वह इतने कम समय में अहाते में यह हरा-भरा चमत्कार कर दिखाने में कैसे सफल हो गया। वे उससे पूछकर बूचड़ख़ाने और कृषि-विद् के टेलीफ़ोन नम्बर लिख ले जाते, यही नहीं, वे सीमुर्ग़ से सलाह-मशविरा भी करते कि अपने अहातों में उन्हें कौन-कौन-सी क़िस्मों के पेड़ लगाने चाहिए, जिसे सुनकर जलील-मुअल्लिम हैरान रह जाते।

जलील-मुअल्लिम के बगीचे में से निकलते समय शिष्ट पड़ोसी उन्हें भी बधाइयां देते, पर बाग़बानी के बारे में उनसे कोई सलाह न लेते।

कहने का तात्पर्य यह है कि सीमुर्ग़ पड़ोसियों की दृष्टि में कृषि व मृदा विज्ञान के पेचीदा मामलों में निर्विवाद विशेषज्ञ बन गया।

अब नये फाटक से सीमुर्ग़ के मित्र और पड़ोसी भी उसके पास आने लगे।

उस दिन जलील-मुअल्लिम अपने सामान्य समय पर घर लौटे थे। उनकी पत्नी बरामदे में मेज़ पर खाना लगा रही थी। बच्चे भी घर पर थे।

जलील-मुअल्लिम ने घर के कपड़े पहनकर, हाथ-मुंह धोये और खाना शुरू करने की प्रतीक्षा करते हुए अहाते में आ गये। इसी वक़्त उन्हें याद आया कि वे डाकख़ाने से सीमुर्ग़ के नाम एक पत्र लाये हैं। उन्होंने उसे सीमुर्ग़ को देने और साथ ही उसे खाना तैयार हो जाने की याद दिलाने का फ़ैसला किया।

जलील-मुअल्लिम पत्र लेकर सीमुर्ग़ के पास गये। बरामदे में ही उन्हें वह हंसी सुनाई दे गयी, जिससे उनका ख़ून खौल उठा। हंसी की आवाज़ निश्चय ही सीमुर्ग़ के कमरे से आ रही थी। वे फ़ौरन समझ गये कि हंसी किसकी है और आग-बबूला हो उठे। सीमुर्ग़ के कमरे का दरवाज़ा थोड़ा खुला हुआ था और अंदर से कोई मनोरंजक घटना सुना रहे सीमुर्ग़ की आवाज़ साफ़ सुनायी दे रही थी। जलील-मुअल्लिम देहलीज़ पर थोड़ा झिझककर रुके, क्योंकि उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि उन्हें क्या करना चाहिए – दुआ-सलाम करके अंदर चले

जायें या चुपचाप वापस लौट आयें। अंदर पलंग पर बैठी और अंगूर खाती दिलबर सीमुर्ग़ की ओर देखती हुई मुस्करा रही थी, जबकि वह उसके पैरों के पास एक चौकी पर बैठा उससे हंसते-हंसते बातें कर रहा था।

जलील-मुअल्लिम को देखते ही दिलबर ने मुस्कराना बंद कर दिया और उसके चेहरे पर भय के चिह्न व्याप्त हो गये। लेकिन सीमुर्ग़ ने उठकर भाई का अभिवादन किया और बैठने को कहा। जलील-मुअल्लिम ने भी सीमुर्ग़ से दुआ-सलाम किया, उसे पत्र दिया और यह कहकर वापस चले आये कि खाना ठण्डा हो रहा है। वे आहत और क्षुब्ध होकर लौटे, उन्हें लगा कि उनकी कनपटियों में कोई चीज़ चुभ गयी है और सिर में हथौड़े की-सी चोटें लग रही हैं।

खाने के दौरान जलील-मुअल्लिम ने सीमुर्ग़ के साथ लगभग कोई बात नहीं की और सीमुर्ग़ ने उनसे जो कुछ पूछा, उसका हां-हूं में ही उत्तर दिया।

सीमुर्ग़ तो ऐसे मज़ाक़ करता रहा, मानो कुछ हुआ ही न हो। उसके व्यवहार से यही अनुभव हो रहा था कि वह अपने आप को किसी बात के लिए भी दोषी नहीं मानता है।

सुबह काम पर जाते समय जलील-मुअल्लिम ने पत्नी से कहा कि वह उनकी ओर से सीमुर्ग़ से कह दे कि दिलबर के क़दम फिर कभी इस घर में नहीं पड़ने चाहिए और यह भी कि उसके व्यवहार से वे बहुत दुखी हैं, क्योंकि उसने दिलबर जैसी लड़की को घर में लाने की हिमाक़त की है, जहां उसके अलावा उसके बड़े भाई का परिवार भी रहता है। उन्होंने लैला खानम से सीमुर्ग़ को यह भी बता देने को कहा कि मनफ़ का खानदान कैसा है और दिलबर व उसकी मां को इस घर से कैसी बेइज़्ज़ती से निकाला गया था।

उस शाम लैला खानम ने जलील-मुअल्लिम को बताया कि सीमुर्ग़ ने शुरू में उन्हें कोई जवाब नहीं दिया, केवल ठण्डी सांसें लेता रहा, पर उनके हठ करने पर कि वे अपने पति को क्या जवाब दें, उसने कहा कि जब तक जलील-मुअल्लिम इसकी इजाज़त नहीं देंगे दिलबर फिर कभी उसके पास नहीं आयेगी। उसने यह भी कहा कि उसे आशा है, भाई से बात करने पर वे उसे इजाज़त दे देंगे, क्योंकि दिलबर भली लड़की है, बेवकूफ़ नहीं है और उनके मन में उसके खिलाफ़ कोई

बात नहीं हो सकती। आखिर किसी को उसके मां-बाप के लिए तो दोषी नहीं ठहराया जा सकता, खास तौर से दिलबर जैसी नाबालिग़ लड़की की उम्र में।

जलील-मुअल्लिम को बहुत निराशा हुई। वे सीमुर्ग़ को इस बात के लिए क़ायल करने के इरादे से कि दिलबर ऐसी लड़की नहीं है, जिससे बात की जा सके, दलीलें सोचने लगे। दलीलें उनके पास बहुत थीं और उन्होंने कुछ सबसे ज़्यादा वज़नी को ही चुना।

लेकिन सीमुर्ग़ इस बारे में बात करने को उनके पास आया ही नहीं। दिलबर भी उनके घर में फिर नहीं आयी।

जलील-मुअल्लिम निरन्तर इस बारे में सोचते हुए इसी निष्कर्ष पर पहुंचे कि सीमुर्ग़ खुद सब समझ गया है और उसने दिलबर के साथ अपने हानिकारक और जोखिम भरे सम्बन्ध भंग कर दिये हैं। वे तब तक ऐसा ही सोचते रहे, जब तक कि एक बार काम से लौटते समय वे दोनों उन्हें नज़र नहीं आ गये। वे रास्ते के नुक्कड़ पर खड़े बातें नहीं कर रहे थे, बल्कि मौन रहकर केवल एक दूसरे की ओर देख रहे थे। सभी लक्षण ऐसे दिखाई दे रहे थे कि उन्हें इस तरह खड़े रहकर एक दूसरे की ओर निहारना बहुत ही सुखद लग रहा है।

कुछ दिनों बाद सीमुर्ग़ ने जलील-मुअल्लिम से कहा कि वह उनके साथ एक ज़रूरी बात करना चाहता है। जलील-मुअल्लिम भाई के साथ अपने कमरे में गये, जिससे कोई उन्हें परेशान न करे। सीमुर्ग़ ने कहा कि वह दिलबर को दिलोजान से प्यार करता है और वह भी उसे प्यार करती है और इसलिए वह शीघ्रातिशीघ्र उससे शादी करना चाहता है।

सीमुर्ग़ ने उनसे आग्रह किया कि परिवार के मुखिया होने के नाते उन्हें इस काम में पहल करते हुए मनफ़ के पास उसकी बेटी दिलबर के साथ अपने छोटे भाई की शादी का पैग़ाम लेकर जाना चाहिए। उसकी बात सुनते समय जलील-मुअल्लिम समझ गये कि वह गम्भीरता से बात कर रहा है, पर उनका इस पर विश्वास करने का भी मन नहीं हुआ।

जलील-मुअल्लिम मेज़ से उठकर कमरे में चहलक़दमी करते हुए अपने आपको ग़ुस्से में कोई कटु शब्द कह बैठने से रोकने की कोशिश करते रहे। लेकिन उन्होंने जो सुना, उससे उन्हें गहरा आघात भी

लगा और साथ ही इस बात का भय भी हुआ कि अपने भाई को वे अब यह लज्जाजनक, बल्कि घातक क़दम उठाने से किसी तरह रोक नहीं पायेंगे। उनका गला तक रुंध गया। गला कुछ ठीक होने पर भी वे केवल फुसफुसाकर बोल पाये।

"तुम आखिर मेरे भाई हो," उन्होंने कहा। "तुम्हारे मन में दिलबर जैसी लड़की से शादी करने का ख़याल भी कैसे आया? तुम कैसे ख़ून के साथ अपने ख़ानदान का ख़ून मिलाने की सोच रहे हो? आख़िर तुम्हारे बच्चे भी होंगे। मुझसे यह बात करने के पहले तुमने कभी इस बारे में सोचा भी? सोचा भी था या नहीं?"

"मेहरबानी करके," सीमुर्ग़ बोला, "तैश में नहीं आइये, आग़ा-दादाश। आप समझने की कोशिश कीजिये कि मैं आपको कितना प्यार करता हूं। आप यक़ीन कीजिये मुझ पर। वह कोई बुरी लड़की नहीं है।"

"तुम मुझे ऐसी बातें कहने को मजबूर न करो, जो मुझे तुमसे नहीं कहनी चाहिए," जलील-मुअल्लिम ने कहा। "तुम्हें ऐसी लड़की से हरगिज़ शादी नहीं करनी चाहिए, तुम अभी बच्चे हो, ज़िंदगी के बारे में कुछ नहीं जानते। अगर तुम असली मर्द हो, तो। अपनी इज्ज़त का ख़याल रखो!"

"मैं उसे प्यार करता हूं," सीमुर्ग़ ने कहा।

"तुम्हें मालूम भी है या नहीं कि उसकी मां और बड़ी बहन दोनों ही फ़ाहिशा थीं? तुम कहीं यह तो नहीं सोचते हो कि वह उनसे बेहतर होगी? नहीं, ऐसा कभी नहीं होता। उस पर एक नज़र डालकर ही कोई यह बता सकता है कि वे सब एक ही की हैं।"

यह सुनकर सीमुर्ग़ का चेहरा फक हो गया, दांत भिंच गये।

"ऐसी बातें ज़बान पर मत लाइये, आग़ा-दादाश। मेहरबानी करके ऐसा मत कहिये। आख़िर तो मैं उसे प्यार करता हूं, उससे शादी करने जा रहा हूं," उसने कहा।

"तो फिर भूल जाओ कि तुम्हारा कोई भाई है," जलील-मुअल्लिम ने कहा। "हमेशा के लिए भूल जाओ। मैं तुम्हारी सब ग़लतियां माफ़ करता आया हूं, पर यह नहीं कर सकूंगा!"

शादी वैसे नहीं हुई, जैसे होनी चाहिये थी, क्योंकि परिवार के मुखिया, दूल्हे के बड़े भाई ने बहू का मुंह तक न देखना चाहा, उसके

माता-पिता से दुआ-सलाम भी न की।

जलील-मुअल्लिम के घनिष्ठ मित्रों व सम्बन्धियों ने उन्हें मनाने की कोशिश की, पर वे अडिग रहे। उन्होंने अपनी पत्नी से केवल यही कहलवाया कि सीमुर्ग़ उनके पिता द्वारा छोड़ा गया जो भी फ़र्नीचर लेना चाहे, ले ले और अपने कमरे के साथवाला एक कमरा भी और ले ले। सीमुर्ग़ ने फ़र्नीचर और कमरा लेने से भी इनकार कर दिया और कहलवा दिया कि अभी उसे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है और जब होगी, तब वह खुद कोई रास्ता निकाल लेगा। वह अपने भाई के साथ हुए झगड़े के कारण बहुत दुखी रहा। जलील-मुअल्लिम के पास दो बार आया। पहली बार अपनी पत्नी दिलबर के साथ और दूसरी बार अकेला। दोनों बार जलील-मुअल्लिम ने वहीं मौजूद लैला ख़ानम के ज़रिये भाई से कहलवा दिया कि वह उस हिस्से में फिर कभी न आये और भूल जाये कि उसका जलील नाम का कोई भाई हुआ करता था।

सीमुर्ग़ देहलीज़ पर थोड़ी देर खड़ा रहा और अपने बड़े भाई को भली-भांति जानने के कारण समझ गया कि उनका निर्णय अन्तिम है। उसका चेहरा उदास था। लेकिन जलील-मुअल्लिम यह न देख पाये, क्योंकि वे भाई की ओर ऐसे देख रहे थे, मानो वह कमरे में है ही नहीं और उससे बात भी लैला ख़ानम के माध्यम से कर रहे थे। लैला ख़ानम भी इस सारे क़िस्से से बहुत दुखी थीं और भाइयों के बीच हुई बातचीत के दौरान और बाद में अकेली भी ख़ूब रोयी थीं।

अगर कोई जलील-मुअल्लिम की शान्त मुख-मुद्रा को देखकर यह सोच लेता कि अपने इकलौते भाई से हुए उनके विवाद से उनके दिल को गहरा सदमा नहीं पहुंचा है, तो यह उसकी बड़ी भूल होती। इसका अर्थ यही होता कि वह अल्पज्ञ ऐसे व्यक्तियों के बारे में कुछ नहीं जानता है, जो अपना दुख प्रकट नहीं करते हैं, बल्कि मन में छिपाये रहते हैं, जैसा कि स्वाभिमानी पुरुष को करना ही चाहिए। जब कभी उनका कोई मित्र या सम्बन्धी, जिसके विचारों का वे सदा आदर करते थे, उनके पास आकर सीमुर्ग़ द्वारा जीवन-संगिनी के रूप में एक बुरी लड़की को चुनने, दूसरे की बगिया से एक कुरूप फूल चुनने की दुहाई देकर उनके साथ संवेदना या सहानुभूति प्रकट करता, तब भी जलील-मुअल्लिम भाई के साथ अपने व्यवहार के बारे में प्रकटतः कुछ न कहते,

बल्कि उस व्यक्ति की पूरी बात सुनकर बातचीत का रुख देश या आस-पड़ोस की राजनीतिक या समसामयिक घटनाओं की ओर मोड़ देते। जलील-मुअल्लिम कभी-कभी यह ख़याल आने पर चौंक भी उठते कि आख़िर वे अपने सीमुर्ग़ को देखे बिना, अपने यहां उसके साथ एक मेज़ पर बैठे बिना, उसकी आवाज़ और हंसी सुने बिना जी कैसे रहे हैं। लेकिन वे ऐसे विचारों को तत्क्षण दिमाग़ से निकाल देते, क्योंकि उनके भाई ने उनको बहुत गहरा आघात पहुंचाया था।

जलील-मुअल्लिम स्वयं यह अनुभव किये बिना ही एक उदास और ग़ैरमिलनसार व्यक्ति में परिवर्तित होने लगे। लेकिन ऐसे परिवर्तन वैसे ही अलक्ष्य होते हैं, जैसे कि समय के साथ किसी व्यक्ति के चेहरे पर झुर्रियां पड़ जाती हैं, उसकी आंखों की चमक जाती रहती है और निष्ठुर रासायनिक परिवर्तन के कारण दाढ़ी में सफ़ेदी चमकने लगती है, जो मृत्युपर्यन्त अपना रंग नहीं बदलती।

उधर अहाते के दूसरे हिस्से में जीवन अपनी सामान्य गति से चल रहा था। सीमुर्ग़ के पास अकसर उसके दोस्त आते और तब जलील-मुअल्लिम को सीख़-कबाबों के सोंधे धुएं की गंध भी महसूस होती। शुरू में रिवाज के अनुसार सीमुर्ग़ ने एक तटस्थ व्यक्ति–दिलबर के चचेरे भाई के हाथों कुछ सीख़-कबाब उनके पास भिजवाये, पर जलील-मुअल्लिम ने हर बार उन्हें लौटा दिया।

खाने के बाद सीमुर्ग़ का परिवार अपने यहां कंसर्ट आयोजित करता। सीमुर्ग़ स्वयं भी बचपन से ही तार बजाने में माहिर था। दिलबर का भानजा, जो सीमुर्ग़ की शादी के दिन से ही दिन-रात उनके यहां रहा करता था, खंजरी पर संगत करता।

दिलबर स्वयं भी पियानो पर गीत गाती। सीमुर्ग़ ने कुछ ही दिन हुए गहरे लाल रंग का पियानो ख़रीदा था और जब उसे दुकान से घर लाया गया था, तो देखने के लिए पड़ोसियों की भीड़ जमा हो गयी थी। दिलबर की आवाज़ बहुत सुरीली थी। मेहमान उसके गायन पर "माशा अल्लाह", "वल्लाह" कह-कहकर दाद देते और बीच-बीच में ख़ुद भी उसके साथ गा उठते। वैसे उनका कोई भी कंसर्ट कभी आधी रात के बाद नहीं चला। स्पष्ट था कि सीमुर्ग़ अपने भाई के आराम में कोई ख़लल न डालने की पूरी कोशिश करता था। ऐसे दिनों जलील-मुअल्लिम के घर में सब फुसफुसाकर बातें करते,

जबकि वे स्वयं गली की ओर खुलनेवाली खिड़की के पास उदास बैठे रहते। उन्हें बहुत बुरा महसूस होता कि उनके पुश्तैनी घर में उनके भाई के ससुरालवालों जैसे नीच लोग जमा होते हैं। गर्मियों में कंसर्ट लगभग हर शाम को होते रहते, मेहमानों के न आने पर भी, शायद व्यक्तिगत मनोरंजन के लिए।

जलील-मुअल्लिम धीरे-धीरे इसके आदी हो गये और संगीत की ओर उन्होंने उससे भी कम ध्यान देना शुरू कर दिया, जितना कि बॉयलरों की गूंज की ओर।

उन्हें एक और बात से आश्चर्य और बहुत निराशा हुई कि वे सभी लोग जो सीमुर्ग़ की आलोचना करते रहे थे, कुछ समय बाद यह सब भूल गये और आये दिन उसके पास सपरिवार पधारने लगे। यह अब बर्दाश्त के बाहर हो चला था।

जलील-मुअल्लिम को पूरा विश्वास था कि उनकी आंखों को धोखा नहीं हुआ था, जब उन्होंने अभियोक्ता हसानोव को भी सपत्नीक भाई के हिस्से में देखा था। वे जानते थे कि उनकी पीठ पीछे उनकी पत्नी और बच्चे भी यक़ीनन ही सीमुर्ग़ के यहां जाते हैं और उससे ही नहीं, बल्कि दिलबर के साथ भी गपशप करते हैं। इससे भी उन्हें बहुत निराशा और मानसिक क्लेश होता था।

कभी-कभी अहाते के दूसरे हिस्से से चीख़ने-चिल्लाने की आवाज़ें आतीं, जैसा कि सन् १८६१ में जलील-मुअल्लिम के दादा द्वारा बनाये गये इस घर में कभी सुनने में नहीं आया था। ये सीमुर्ग़ और उसकी पत्नी में हो रहे झगड़ों की आवाज़ें होती थीं।

गर्मियों की एक गहरी रात को उनके झगड़े के शोर से नींद खुल जाने पर जलील-मुअल्लिम ने ग़ुस्से में थूका और तख़्ते से उठकर घर के अंदर चले गये। पत्नी की नींद ख़राब न करने की कोशिश में वे चुपचाप उसके पलंग के साथ लगे अपने पलंग पर लेट गये और सोने का यत्न करने लगे...

... दिलबर उन्हें रास्ते के नुक्कड़ पर खड़ी नज़र आयी। वह चिलचिलाती धूप में उनकी ओर बढ़ी आ रही थी। किरणें उसके झीने कुरते को इस प्रकार बेध रही थीं, मानो वह उष्ण प्रकाश में पूर्णतः विवस्त्र हो। वैसी ही अपनी स्वाभाविक मनमोहक, प्रेमसिक्त मुस्कान के साथ उन्होंने दिलबर का आलिंगन कर लिया, वह भी शिथिल

होकर उनकी बांहों में सिमट गयी...

वे कमरे के प्रातःकालीन शीतल अंधकार में लेटे इस सपने को याद करके परेशान हो रहे थे, जो उन्हें कई महीनों से हर रात को दिखाई दे रहा था। कुछ क्षण बाद वे फिर सो गये, ताकि सुबह तक सब भूल जायें।

इस सपने के कुछ धुंधले अंश कभी-कभी सुबह की वेला में उनकी चेतना में कौंधकर उन्हें व्यथित कर डालते थे। उन्होंने कितनी ही कोशिश क्यों न की, पर उन्हें उन अंशों को एक सूत्र में पिरोने में सफलता न मिल पायी। ये सब चेष्टाएं वैसे ही व्यर्थ और निरर्थक थीं, जैसे किसी टेलीफ़ोन के तार के टुकड़े की सहायता से दो प्रेमियों के मध्य हुई बातचीत के अंशों को क्षण भर बाद ही पुनः सुनने की चेष्टा करना...

आखिर मौक़ा मिलते ही जलील-मुअल्लिम ने लमकन्ने कमाल व सभी परिचितों से विदा ली, चायवाले अज़ीज़ को बढ़िया चाय के लिए धन्यवाद दिया और बाहर निकल आये।

घर पर उन्हें अपनी पोलीक्लीनिक का डाक्टर मिला। उसे लैला खानम ने बुलवाया था। पिछले कुछ समय से उनके बाज़ू में दर्द हो रहा था। जलील-मुअल्लिम के आने तक डाक्टर उनका मुआयना कर चुका था। मझोले क़द और पके बालोंवाले डाक्टर ने अपने औज़ार बैग में रखे, फिर मेज़ के पास जाकर खून, वग़ैरह की जांच के लिए कुछ स्लिपें लिखीं। उसने भली-भांति समझा दिया कि जांच के लिए कहां और कब जाना चाहिए और वह जाने ही वाला था कि जलील-मुअल्लिम ने उसे रोककर उससे अपने साथ नाश्ता करने का अनुरोध किया। लमकन्ने कमाल के साथ हुई लम्बी-चौड़ी बातचीत के बाद जलील-मुअल्लिम को किसी बुद्धिजीवी के साथ बात करने की तीव्र इच्छा हो रही थी।

डाक्टर ने घड़ी पर नज़र डाली, थोड़ा सोचा और बोला कि नाश्ता तो वह कर चुका है, पर उनके साथ चाय बड़ी खुशी से पी सकता है। लैला खानम ने जल्दी से मेज़ पर पनीर, मक्खन, शहद आदि रख दिये।

नाश्ते के दौरान जलील-मुअल्लिम ने चिकित्सा व आधुनिक शहरी परिस्थितियों में रहनेवाले व्यक्ति के स्वास्थ्य से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण और सामयिक समस्याओं की चर्चा की। डाक्टर उनकी बात अपने कान पर हाथ रखकर ध्यान से सुन रहा था, क्योंकि वह कुछ ऊंचा सुनता था।

"मिसाल के तौर पर, डाक्टर साहब, मैं उन्हें यही समझाता हूं," जलील-मुअल्लिम ने अपने परिवार की ओर इशारा किया, "रोटी, मक्खन, पनीर सबसे पौष्टिक आहार है, पर वे आसानी से नहीं मानते। मैं कहता हूं, अगर तुम लोग लम्बी उम्र पाना चाहते हो, तंदरुस्त रहना चाहते हो, तो तुम लोगों को सुबह यही खाना चाहिए..."

डाक्टर ने प्रतिवाद किया कि काम का दिन शुरू होने से पहले सुबह भारी नाश्ता करने में कोई नुक़सान नहीं है, यानी मनुष्य को आवश्यक कैलोरी की खुराक खा लेनी चाहिए। जलील-मुअल्लिम ने मेहमान के साथ बहस करना उचित नहीं समझा।

"हो सकता है, यह ठीक हो," उन्होंने अपनी बात पर जोर दिये बिना सहृदयता से कहा। "लेकिन हमारे खानदान में, जहां तक मुझे याद है, दादा के ज़माने से ही यही खाते आ रहे हैं और वे सभी तंदरुस्त रहे, किसी को कभी कोई गम्भीर बीमारी नहीं हुई। और उम्र भी सबने लम्बी पायी।"

डाक्टर ने उनसे विदा ली और अपना बैग उठाकर फाटक की ओर चल दिया। सब घरवाले उठकर उसे फाटक तक छोड़ आये। गलियारे में डाक्टर ने एक बार फिर लैला खानम को चिन्तापूर्ण स्वर में याद दिला दिया कि वे जांच कराने में देर न करें, उन्हें चाय के लिए धन्यवाद दिया और सिर पर टोप पहनकर उनका हाथ चूम लिया।

जलील-मुअल्लिम को डाक्टर का ऐसा करना अच्छा नहीं लगा और वे फ़ौरन अपने कमरे में चले गये। डाक्टर ने मुड़कर देखा, तो घर के मालिक को गायब पाया। उसे शायद आश्चर्य भी हुआ, पर उसने कुछ नहीं कहा। उसके होंठों पर केवल एक क्षीण-सी मुस्कान खेल गयी। उधर जलील-मुअल्लिम उसके जाने के बाद सोच रहे थे कि देखने में सज्जन और शालीन-सा लगनेवाला यह अधेड़ आदमी अभी तक यह

नहीं जानता कि इसे परायी औरत से कैसे पेश आना चाहिए।

जलील-मुअल्लिम अहाते में उतर गये। सूरज शिखर पर पहुंच चुका था और उसकी तेज़ किरणों से सिर झुलसा-सा जा रहा था। वे कुछ समय तक अन्यमनस्कता से मधुमक्खियों को देखते रहे, जो अपने छत्तों में फूलों से मकरन्द ले जाने के नित्य-कर्म में व्यस्त थीं, लेकिन उन्हें इसमें कोई विशेष आनन्द नहीं आया। फिर जलील-मुअल्लिम चित्त शान्त करने व तनाव से मुक्ति पाने के इरादे से एक क्यारी की अभी तक कुछ गरम और नम मिट्टी को खोदने लगे, जिसमें उन्होंने सुबह ही पानी छोड़ा था। वे जूते उतारकर नंगे पैर काम में जुट गये। वे यही कल्पना करने का प्रयास कर रहे थे कि उनके शरीर में सुबह से संचित हुई विद्युत उनके तलुवों में से होकर ज़मीन में जा रही है, लेकिन इसमें भी उन्हें सफलता नहीं मिल रही थी।

सीमुर्ग़ के हिस्से से अभी तक आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। मनफ़ और उसकी पत्नी सीमुर्ग़ के यहां आये हुए थे। जलील-मुअल्लिम महसूस कर रहे थे कि वे मनफ़, उसकी बेटी, पत्नी, सीमुर्ग़ और स्वयं अपने आपसे भी कितनी अधिक घृणा करते हैं।

उन्हें कुछ भी मालूम नहीं था कि वह लोग किन-किन विषयों में बातें कर रहे हैं। लेकिन उनकी आवाज़ें और अपने पुश्तैनी घर में उनका घूमना-फिरना जलील-मुअल्लिम के लिए आग में घी का काम कर रहा था।

अत्यधिक घृणा और विद्वेष के कारण कांपते हुए जलील-मुअल्लिम क्रोधोन्मत्त होकर ताबड़तोड़ मिट्टी खोदे जा रहे थे। पसीना उनकी आंखों में जा रहा था और ऐसा लग रहा था कि क्रोध और चिलचिलाती धूप के कारण उनका दिमाग़ पिघला जा रहा है। कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि वे इससे बचकर कहां जायें। रात को भाई के हिस्से में हुए झगड़े की आवाज़ें फिर से उनके कानों में गूंज उठीं और लगा जैसे उनका दम घुटा जा रहा है।

उस क्षण अगर कोई उनसे बात करने लगता, तो उनसे कोई उत्तर सुनने को न मिलता, क्योंकि वे अपने जबड़े हिलाने की हालत में ही नहीं रहे थे। उन्होंने बेलचा ज़मीन पर पटक दिया। एक स्थान पर खड़े रह पाने में असमर्थ वे बगीचे में निरुद्देश्य चहलक़दमी करने लगे। उन्हें बॉयलरों की गूंज के सिवा न कुछ सुनाई दे रहा था और

न कुछ दिखाई दे रहा था। अचानक ऐसा लगा जैसे बॉयलरों का शोर उनके सिर में ही गूंज रहा है। गूंज का दबाव बढ़ने से प्रचण्ड तरंगें बाहर निकलने के लिए लगातार कनपटियों के भीतर टक्करें मारने लगीं।

उन्होंने ज़ोर से चीख़ना चाहा, चीख़ उनके अंतरतम से निकली, पर गले में अटक गयी। वे एक मधुमक्खी-पेटी से टकराकर रुके और तत्क्षण उन्हें लगा कि पीड़ा की एक प्रचण्ड लहर ने उनके चेहरे पर जैसे एक भयानक थपेड़ा मारा है।

उनके चेहरे की सारी चमड़ी, गरदन, कंधों और सीने में जैसे आग की लपटें भड़क उठीं और जीभ व तालू में तांबे का-सा कसैला स्वाद पैदा हो गया।

उन्होंने दोनों हाथों से अपने बदन से भनभनाती, जीती-जागती मधुमक्खियों की परत, पूरे झुण्ड को उखाड़ फेंका। उनके पूरे शरीर से फूट पड़ रही घृणा व विद्वेष की प्रचण्ड लहरों के कारण मधुमक्खियों की आत्मरक्षा की सहज प्रवृति जागृत हो उठी थी।

और तब वे अपने जीवन में पहली बार चीख़ उठे। चीख़ बड़ी भयानक थी और अहाते से बाहर काफ़ी दूर-दूर तक गूंज गयी थी।

जलील-मुअल्लिम अहाते के बीच में खड़े भाई से चिल्ला-चिल्लाकर वह सब कहने लगे, जो वे उसके बारे में सोचते आये थे। सीमुर्ग़ और उसके परिवार के बारे में भी। सीमुर्ग़ के सैनिक सेवा से लौटने के बाद इतने अरसे से जो कुछ उनके मन में दबा-घुटा रहा था, उन्हें यंत्रणाएं दे रहा था, उन्होंने वह सब कुछ चिल्ला-चिल्लाकर कह डाला।

जलील-मुअल्लिम चिल्लाते रहे और उनका परिवार – पत्नी व बच्चे – और भाई के हिस्से में भी सब लोग मौन, आश्चर्यचकित सुनते रहे। उन सब की आंखों और हृदयों में विषाद और भय छाया हुआ था...

जलील-मुअल्लिम ने वह सब कह डाला, जो उनके मन में घुट रहा था। फिर उन्हें अपनी तबीयत बिगड़ती महसूस हुई। वे घर में गये और ठण्डे पानी से नहाकर पलंग पर जा लेटे। उन्होंने चेहरे को उंगलियों से छूकर देखा और महसूस किया कि वह सूजता जा रहा है। फिर उन्हें लगा कि उनका दम घुटा जा रहा है। जलील-मुअल्लिम ने खिड़की के पास जाकर उसे पूरी तरह से खोल दिया। पलंग पर लौटते

समय उन्होंने शीशे में देखा, तो अपना चेहरा किरमिजी गूमड़ों से भरा नज़र आया। उन्होंने फिर लेटकर पत्नी से रुंधी आवाज़ में, पर सख़्ती से, नम तौलिया लाकर सिर पर रखने, उन्हें अकेला छोड़ देने और किसी डाक्टर को न बुलाने को कहा। फिर उनकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा और उन्होंने कसकर आंखें मूंद लीं। कुछ समय बाद उन्हें सीमुर्ग़ अपने ऊपर झुका हुआ नज़र आया। जलील-मुअल्लिम लड़खड़ाते हुए पलंग से उठे और दरवाज़े की ओर इशारा करते हुए भर्रायी आवाज़ में सीमुर्ग़ से कहा –

"निकल जा! अभी, इसी वक़्त! मैंने तुझे बहुत पहले से ही यहां आने को मना कर रखा है!"

"बस कीजिये! सुनिये, अब बस भी कीजिये!" सीमुर्ग़ हताशा से चिल्ला उठा। "आप तो मर रहे हैं!"

जलील-मुअल्लिम ने कुतूहलवश भाई पर नज़र डाली और देखा कि वह रो रहा है। वे सोच में डूब गये और अचानक अपने लिए भी अत्यन्त अप्रत्याशित स्वर में बोल उठे:

"हां, मैं मर रहा हूं।" वे कुछ और भी कहना चाहते थे, पर उन्होंने अचानक देखा कि सीमुर्ग़ की कनपटियां पक चुकी हैं, इससे उन्हें और भी अधिक आश्चर्य और दुख हुआ।

वे सोचने लगे कि सीमुर्ग़ के सिर के बाल सफ़ेद कैसे हो गये और यह न देख पाये कि भाई कब भागा-भागा डाक्टर को बुलाने चला गया। उन्हें कुछ पता न चला कि उसी डाक्टर ने, जो अभी दो घंटे हुए उनके यहां से गया था, विशेष सीरम न मिल पाने के कारण कैसे कांपते हाथों से उन्हें कैफ़ीन का इंजेकशन लगाया, कैसे आंसुओं से तर चेहरा लिये सीमुर्ग़ ने उनके गले में एक घूंट कॉफ़ी उतारने की कोशिशें कीं। उन्होंने कुछ महसूस नहीं किया, क्योंकि वे सीमुर्ग़ से यही कहते रहे कि वे उसे कितना प्यार करते हैं। उन्होंने उससे अपने और नज़दीक आने को भी कहा, ताकि वे उसे सीने से लगा सकें।

"मेरे ख़याल से ये कुछ कहना चाहते हैं," उनके दिल की ज़ोर-ज़ोर से मालिश कर रहे डाक्टर ने कहा।

जलील-मुअल्लिम के होंठ कई बार ज़रा कांपे। उन्हें अपने सारे परिवार से घिरे हुए इस तरह लेटे रहने से अत्यन्त शान्ति और सुख अनुभव हो रहा था। और वे बोलते ही रहे। उन्होंने कहा कि उन्हें

बहुत अफ़सोस है कि कुछ मामूली-सी बातों को लेकर वे इतने अरसे तक एक दूसरे से नहीं मिले, लेकिन यह सब ठीक हो सकता है। बस, सब सही-सलामत रहें, एक दूसरे को प्यार करते रहें, जैसा कि घरवालों को करना चाहिए। वे अचम्भे में पड़कर सीमुर्ग़ से पूछते रहे कि आखिर क्यों वे एक दूसरे को इतने अरसे तक इतनी निर्ममता से सताते रहे।

उन्हें अपनी स्मरण-शक्ति अत्यन्त स्पष्ट होती अनुभव हुई और उनकी सभी इंद्रियां भी अत्यधिक संवेदनशील हो उठीं, लेकिन अपने भाई का उत्तर वे नहीं सुन सके, क्योंकि सारे स्वर बॉयलरों के क्षण-प्रतिक्षण बढ़ते शोर में बिलीन होते जा रहे थे...

7-0300

अपशकुन या शकुन

अब फिर धुधुआने लगा, मरदूद! कितनी मनहूस होती है इसकी बोली! बर्दाश्त करना मुश्किल हो जाता है। कभी कराहता है, तो कभी इस तरह धुधुआता है कि कच्ची नींद खुल जाती है, रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अब फिर धुधुआने लगा। धुधुआता है, फिर गिटकिरी भरने लगता है। मुआ बाड़ के बाहर अंजीर के पेड़ पर बैठा है, पर लगता है जैसे यहीं, घर में धुधुआ रहा है। इसे उड़ाया न जाये, तो सुबह तक बोलता रहेगा। बिलकुल मन नहीं करता उठकर बाहर जाने को। यह क्या आदत पड़ गयी है इसे हर रात को यहां आने की, जैसे गायली में और पेड़ हैं ही नहीं। यह पत्थर ठीक है इसके लिए। देखता हूं, अब कैसे बोलता है, मरदूद! ओह! निशाना बस ज़रा-सा चूक गया, उसके पासवाली डाल पर लगा। डर के मारे फुफकार उठा, बदमाश! झट से उड़कर थोड़ी दूर जा बैठा। है शायद धूसर-सा, पर चांदनी रात में बिलकुल उजला लगता है। ज़रा देखूं तो, उड़कर कहां गया?

सिर्फ़ उल्लू ही नहीं, बल्कि अंगूर की बेलें, शहतूत के पेड़, बाड़ के पीले पत्थर और नीचे समुद्र के किनारे की चट्टानें तक सफ़ेद-सी लगती थीं। उल्लू के उड़ते ही मुझे लगा कि अगर वह न आया होता, तो रात को चारों ओर शान्ति व्याप्त रही होती। झींगुर तक चुप थे। मेरे पीछे किवाड़ चरमराया।

"तुम सो क्यों नहीं रहे हो?"

"उल्लू को उड़ा रहा था। मुआ, फिर आ गया था।"

"यह अपशकुन है," दादी ने आह भरी। "आयी बला टाल, ऐ खुदा!"

"कामील चाचा सनीचर को आयेंगे और इसे गोली मार देंगे, तब कोई बला नहीं आयेगी। मैं कह दूंगा उनसे।"

"खबरदार, जो ऐसा किया। उल्लुओं को नहीं मारते," दादी बोलीं। "गुनाह होता है यह।"

"तो फिर उसके आने से कौन-सी बला आ सकती है?"

"मुझे क्या तुम्हारे साथ उल्लुओं के बारे में बात करने के सिवा और कोई काम ही नहीं रहा? जाकर सो जाओ, वरना सुबह जल्दी नींद नहीं खुलेगी।"

"तो कल बताओगी न?"

"बता दूंगी, बता दूंगी। अब सो जाओ। रात के ढाई बज चुके हैं..."

बात यह थी कि मेरा मन सोने को नहीं कर रहा था। फिर लेटने में तुक ही क्या थी, जब मुझे डेढ़ घंटे बाद उठना ही था। मैंने और वासिफ़ ने कल मछली पकड़ने के लिए जाने की बात तय कर ली थी, हमें सुबह साढ़े पांच बजे किनारे पर मिलना था... फिर भी लेटना ही पड़ा। जब तक मैं सो नहीं जाता दादी को चैन नहीं आता... सुबह बस, उनसे यह पूछना नहीं भूलना था कि रात को उल्लू के आने से कौन-सी बला आ सकती है।

मेरी दादी दुनिया भर के सारे शकुन और अपशकुन जानती हैं। इसलिए क्योंकि वे बूढ़ी और खुदातरस हैं।

सुबह मैं जब निकलने ही वाला था, तो उन्होंने मुझे रोक लिया। कुछ भी बोले बिना उन्होंने मेरे पास आकर मेरी बंसी और बालटी छीन ली।

"मुझे भूख नहीं है।"

"मैंने भला तुमसे कुछ पूछा है?"

न जाने कब दूध गरम कर लिया था उन्होंने? कभी-कभी तो मुझे लगता जैसे वे कभी सोती ही नहीं हैं, बस थोड़ी देर झपकी लेती हैं और ज़रा-सी आहट होते ही जाग जाती हैं।

"कल तुमने बताने का वादा किया था न कि उल्लू के रात को आने से कौन-सी बला आ सकती है?"

"हां, कुछ अच्छा नहीं होता इससे। यह अपशकुन है। इसका मतलब है, या तो कोई मर जायेगा, या बीमार पड़ जायेगा। पर यह तो

पिछले हफ़्ते हर रात को ही आता रहा है।"

यह पक्की बात है कि मेरी दादी अगर कुछ कहती हैं, तो उन्हें उस पर पूरा विश्वास होता है। इसीलिए तो कल वे इतनी उदास थीं। उन्हें इसमें अब कोई सन्देह नहीं रहा था कि हमारे घर में कोई न कोई या तो मर जायेगा, या बीमार पड़ जायेगा। हम दोनों में से कोई एक। उनके उदास चेहरे पर नज़र डालते ही मुझे उन पर इतनी दया आयी कि मछली पकड़ने के लिए जाने की इच्छा ही नहीं रही। वह यह तो समझती ही थीं कि मैं नहीं मरूंगा, और अगर मैं नहीं... तो फिर और कौन? समझ में नहीं आता, आखिर क्यों वह मरदूद उल्लू उसी पेड़ पर आकर बैठता है।

"यह तो अंधविश्वास है," मैंने कहा।

"हां, ठीक ही है," दादी फ़ौरन मान गयीं। "अच्छा, तुम जाओ। वासिफ़ तुम्हारी बाट जोह रहा होगा।"

"अब मेरा जाने को मन नहीं करता," मैंने कहा। "तुम ज़रा मुझे समझाओ तो सही कि किसी मनहूस उल्लू के आने से, जो सिर्फ़ एक चिड़िया है, आदमी कैसे मर सकता है। हंसी आती है सुनकर!"

उन्होंने फ़ौरन मेज़ साफ़ करना बंद कर दिया और मुझे घूरने लगीं। अगर किसी और ने मुझे ऐसे घूरा होता, तो मैं उससे बोलचाल बन्द कर देता, पर यह तो कोई और नहीं मेरी सगी दादी मुझे घूर रही थी।

"अरे, वाह!" वे बोलीं। "कितने अक़्लमंद हो तुम! तो मैं अंधविश्वासी हूं? तीन साल पहले, जब शहलार बेग के घर के पास एक उल्लू रोज़ रात को आकर बैठने लगा था, तब तुम्हारे अब्बा भी मुझे अंधविश्वासी कहा करते थे।"

"लेकिन वे तो सख़्त बीमार और बिलकुल बूढ़े थे," मैंने कहा और तुरन्त अपनी इस बात पर पछताने भी लगा।

"बूढ़े थे तो क्या हुआ?.. उनसे ज़्यादा बूढ़े भी तो लम्बी उम्र पाते हैं। शहलार बेग शायद कुछ साल और जी सकते थे। उनकी मां उनके मरने के दस साल बाद मरी थीं।"

बिलकुल सच्ची बात है। सचमुच उनकी मौत के कुछ दिन पहले एक उल्लू उनके घर के पास हर रात को आकर बोलने लगा था। तो क्या हुआ? मेरी नज़रों में तो यह कोई पक्का सबूत नहीं है। शहलार

बेग तो बहुत बूढ़े थे और हर हफ़्ते शहर से एक डाक्टर ख़ास तौर से उन्हें देखने आता था। एक कारण तो यह था कि शहलार बेग सौ बरस से ऊपर के थे और आज़रबैजान में सारे शतायु लोगों के नाम सरकारी तौर पर रजिस्टर में दर्ज किये जाते हैं। दूसरा यह कि उन्हें भूतपूर्व क्रांतिकारी होने के कारण विशेष पेंशन भी दी जाती थी। वे सुबह से देर गये रात तक अपने घर की बालकनी में आरामकुरसी पर बैठे दिन काटते थे। वे इतने छोटे-से थे कि पूरी तरह आरामकुरसी में समा जाते थे। उनके सिर के सारे बाल और दाढ़ी भी सन-सी सफ़ेद थी। वे अपने घर के सामने से गुज़रनेवाले हर आदमी की ओर देखकर चाहे उसे जानते हों या नहीं, हमेशा सहृदयता से मुस्कराते थे। इलाक़े के सारे लोग उनका आदर करते थे और, मेरे ख़याल से, उन पर गर्व भी करते थे कि वे उनके बीच रहते हैं। सच पूछिये तो मैं पहले उनसे बहुत डरता था, शायद इसलिए कि वे अकसर गुस्सा हो जाते थे और तब अपनी बेटी और दोनों बेटों पर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगते थे। आम तौर पर वे उन पर तब चिल्लाते थे, जब उनके साथ ताश या नर्द खेलते होते थे। उनके दोनों बेटे अकसर अपने दोस्तों के साथ शहर से उनसे मिलने आते थे। वे सब अधेड़ उम्र के थे और शाम को मेज़ पर बैठकर ताश या दो तख़्तों पर एक साथ नर्द खेला करते थे। उन दिनों, जब कोई नहीं आता था और जो विरले ही होता था, वे अकेले ही अपनी पत्नी मरियम ख़ानम और बिनब्याही बूढ़ी बेटी ज़रीफ़ा के साथ खेला करते थे। मैं जब भी शहलार बेग के यहां जाता, वे मेरी ओर मुस्कराकर देखते थे। वे फ़ौरन मुझसे पूछते कि स्कूल में सब कुछ कैसे चल रहा है और समुद्र-तट पर तथा बस्ती में क्या हो रहा है। ऐसे जिज्ञासु थे वे। साफ़ ज़ाहिर होता था कि वे मुझसे शिष्टाचार के नाते बात नहीं करते हैं, बल्कि इसलिए कि मुझसे बात करके उन्हें सचमुच बहुत मज़ा आता है। वह शाम मुझे अच्छी तरह याद है, जब मैंने उन्हें आख़िरी बार देखा था। वे हमेशा की तरह आरामकुरसी पर बैठे थे। उनके लिए मेज़ पर खाना लगा हुआ था, पर वे खा नहीं रहे थे। वे किसी गहन विचार में डूबे हुए थे। उन्होंने मुझसे खाने को कहा, पर मैंने यह कहकर इनकार कर दिया कि अभी आध घंटा पहले ही खा चुका हूं। फिर उन्होंने मुझसे पूछा:

"तुम्हारा क्या ख़याल है, यह जानवर क्यों नहीं खा रहा है?"

उन्होंने बिल्ली पाकीज़ा की ओर इशारा किया, जो फ़र्श पर अपने खाने के कटोरे के पास बैठी थी, पर खाने के बजाय शहलार बेग को एकटक देख रही थी और बीच-बीच में दर्दभरी आवाज़ में म्याऊं-म्याऊं भी करती थी। "इस बिल्ली ने सुबह से कुछ नहीं खाया है। यानी इसे खाना पसंद नहीं है," उन्होंने मेरे जवाब का इंतज़ार किये बिना कहा। "ज़रीफ़ा! ज़रीफ़ा!" वे अचानक चिल्लाये। "तुमने बिल्ली के कटोरे में ऐसा क्या डाल दिया है, जो यह खा ही नहीं रही है?"

"वही जो हम खा रहे हैं," ज़रीफ़ा ने दरवाज़े पर आकर कहा। "शोरबे में गोश्त के टुकड़े और रोटी चूर कर डाली है।"

"अजीब बात है!" इसके बाद वे बिल्ली पर चिल्लाये। "खा! तू शायद सोचती है कि तुझे धोखा दिया गया है," उन्होंने न जाने मुझसे कहा, या खुद अपने आप से। फिर वे कराहते हुए उठे और अपने शोरबे की प्लेट उठाकर पाकीज़ा के पास गये। बड़ी मुश्किल से झुककर उन्होंने बिल्ली को शोरबा दिखाया, जो छलकते-छलकते बचा, और बोले: "देख, मेरी प्लेट में भी वही है, जो तेरे कटोरे में। देख!"

पाकीज़ा धीरे-धीरे उनसे दूर हट गयी और सीढ़ियों के पास उनकी ओर मुड़कर देखा और नीचे बग़ीचे में उतर गयी।

"देखा?" शहलार बेग ने अफ़सोस ज़ाहिर किया। "बिल्ली है। इससे क्या उम्मीद की जाये? कुत्ता होता, तो दूसरे ही ढंग से पेश आता।"

ज़रीफ़ा ने उनसे प्लेट लेकर वापस मेज़ पर रख दी। शहलार बेग धीरे-धीरे जाकर आरामकुरसी पर बैठ गये।

"यह बताओ," उन्होंने अचानक मुझसे पूछा। "तुम्हें बिलियर्ड खेलना आता है? कोई बात नहीं, सीख जाओगे," मेरे इनकार करने पर वे बोले। "बड़ी अजीब बात है, यहां दो आदमी बैठे हैं," उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया, "उनमें से एक बिलियर्ड खेलना खत्म कर चुका है, जबकि दूसरे ने अभी खेलना शुरू ही नहीं किया है। तुम्हें अजीब नहीं लगता?"

अपनी उस आखिरी शाम को मेरे जाने के बाद वे अपनी बेटी के साथ ताश खेलते रहे। उन्होंने खेलना बंद नहीं किया था कि तभी उल्लू आकर बोलने लगा। यह शायद वही उल्लू था, जो अब हमारे घर के पास अड्डा जमाने लगा था।

शहलार बेग को यहीं ग़ायली के क़ब्रिस्तान में दफ़नाया गया। उनके जनाज़े में इतने लोग आये थे कि लगता था जैसे सारा बाकू ग़ायली में जमा हो गया है। ज़रीफ़ा को छोड़कर और किसी ने आंसू नहीं बहाये। बेटे तक नहीं रोये। लेकिन सचमुच शोक छाया हुआ था, हालांकि दफ़नाने के बाद हुए भोज के वक़्त लोग शहलार बेग के साथ घटे तरह-तरह के दिलचस्प क़िस्से सुनाकर मुस्करा रहे थे। एक क़िस्सा मुझे बहुत पसंद आया था। उसे एक बुज़ुर्ग ने सुनाया था, जो शहलार बेग के साथ ताश खेलने आया करते थे।

मालूम पड़ा शहलार बेग पेशे से लैंड-सर्वेयर थे। तब तक मुझे इस नाम के पेशे की कोई जानकारी नहीं थी। उन्होंने पीटर्सबर्ग में इसकी शिक्षा पायी थी। क्रान्ति से पहले इंस्टीट्यूट पास करने के बाद वे बाकू के प्रान्तीय कार्यालय में उसी इमारत में काम करते रहे थे, जिसमें इस समय बाकू सोवियत है। वे बहुत अध्यवसायी और ईमानदार कर्मचारी थे, लेकिन हमेशा तंगदस्त रहते थे, क्योंकि उनका परिवार बहुत बड़ा था और कमानेवाले वे अकेले थे। बाकू के गवर्नर ने, जो उनके साथ बहुत अच्छा बरताव करता था, एक बार उन्हें अपने कार्यालय में बुलाकर कहा:

"प्यारे शहलार बेग, मैं जानता हूं कि आपका हाथ हमेशा तंग रहता है, इसलिए मैं आपकी कुछ मदद करना चाहता हूं।"

"मेरा इतना खयाल रखने के लिए मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूं," शहलार बेग ने तुरन्त हर्षित होकर कहा।

"इसीलिए मैं आपको बैलोव से च्योरनी तक के पूरे तेल-क्षेत्र का सर्वेयर-इंस्पेक्टर नियुक्त करना चाहता हूं," गवर्नर ने कहा।

"माफ़ कीजिये," शहलार बेग ने आश्चर्य व्यक्त किया, "पर इंस्पेक्टर की तनख्वाह तो उससे बहुत कम होती है, जो मुझे यहां मेयर के दफ़्तर में मिलती है।"

गवर्नर ने व्यंग्यपूर्वक मुस्कराते हुए उन पर नज़र डाली। शहलार बेग का चेहरा फक हो गया। वे बोले:

"आप मेरा मज़ाक़ उड़ा रहे हैं, हुज़ूर।"

"आप क्या अपने आपको मुझसे ज़्यादा अक़्लमंद समझते हैं? ठीक है, जैसी आपकी मर्ज़ी।" गवर्नर शहलार बेग से बहुत नाराज़ हो गया। इसी कारण उन्हें कुछ ही दिनों बाद नौकरी छोड़ देनी पड़ी।

मेरी समझ में नहीं आता था कि गवर्नर और शहलार बेग आखिर एक दूसरे से क्यों नाराज़ हुए, जब तक कि मेरे अब्बा ने मुझे सारी बात नहीं समझायी। क्रान्ति से पूर्व तक तेल-क्षेत्रों के सर्वेयर-इंस्पेक्टर का पद ऊपर की अच्छी आमदनीवाला पद माना जाता था और सब उसे पाने के फेर में रहते थे। क्योंकि सर्वेयर-इंस्पेक्टर पर ही यह निर्भर करता था कि नये तेल-क्षेत्रों के बीच सीमा-रेखा कहां से निकाली जायेगी।

तेल-क्षेत्रों के सभी लखपति मालिक सर्वेयर-इंस्पेक्टर को उसकी मुट्ठी गरम करके या दूसरे तरीक़ों से हर तरह खुश रखने की कोशिश करते थे और उस ज़माने में इसे रिश्वत नहीं माना जाता था। लेकिन स्पष्ट था कि यह रिश्वतखोरी ही थी, तभी तो शहलार बेग ने इनकार कर दिया था।

शहलार बेग की मृत्यु के बाद उनकी बेटी बंगले में अकेली रहने लगी। उसकी उम्र कोई तीस की थी, पर देखने में वह इससे ज़्यादा की लगती थी। वह बहुत दुबली-पतली थी और उसका पूरा चेहरा झुर्रियों से भरा था। वह हर वक़्त अपनी शादी की फ़िक्र में डूबी रहती थी और अकसर हमारे यहां आकर दादी के साथ फुसफुसाकर सलाह-मशविरा किया करती थी।

मैं बालटी और बंसी उठाकर दरवाज़े की ओर बढ़ गया। अब पूरी बात साफ़ थी। दादी यही सोचती रहेंगी कि उल्लू उन्हीं के कारण यहां आकर बोलता है। कहीं वे सचमुच मर गयीं तो?.. तभी मुझे एक तरकीब सूझी।

"ठीक है," मैंने कहा। "शहलार बेग की मौत का कारण जानकर मुझे अब विश्वास हो गया..."

"तुम अपने विश्वास की बात छोड़ो, वैसे भी सभी जानते हैं कि अगर उल्लू आने लगा है, तो उसका नतीजा कभी अच्छा नहीं निकलने का है।"

"लेकिन एक बात और भी तो होती है," मैंने कहा। "यह उल्लू हमेशा बाड़ के उधरवाले अंजीर के पेड़ पर बैठता है, ऐसा ही है न? वह ज़मीन हमारी थोड़े ही है। वहां से तो कामील चाचा का बंगला शुरू हो जाता है। इसका मतलब हुआ कि उल्लू के आने-जाने से हमारा कोई वास्ता नहीं है। और हमारे घर में किसी को कुछ नहीं होगा। ठीक है ना?"

दादी ने कोई जवाब नहीं दिया, सिर्फ़ हाथ हिलाया और झूठे बरतन उठाकर कुएं की ओर चली गयीं।

मैं बहुत जल्दी में था, इसलिए मुझे रशीद के बंगले की चहारदीवारी पर चढ़कर निकलना पड़ा। वहां से किनारा ज़्यादा पास पड़ता था। पत्थर ओस के कारण ठण्डे और भीगे हुए थे। मेरी पतलून और क़मीज़ भी भीग गये। दिन की शुरुआत बुरी नहीं हुई। मैं यह सोच रहा था कि मैं ही सबसे पहले उठा हूं, पर रशीद अपनी बालकनी में खड़ा अपने दोस्त से बात कर रहा था, शायद यह वही था, जिसके पास 'झिगुली' कार है। हां, यह वही था। उसकी कार भी वहीं खड़ी थी। रशीद की काफ़ी लोगों से जान-पहचान थी और वे अकसर उससे मिलने आते रहते थे। वह कहता था कि उसे सबसे ज़्यादा खुशी तब होती है, जब उसके घर का दरवाज़ा उसके दोस्त खोलते हैं।

रशीद वैसे भी यही कहता था कि दोस्ती ज़िंदगी में आदमी की बहुत ही मदद करती है। वह यही रट लगाये रहता था कि उसने जीवन में सब कुछ अपनी मेहनत से हासिल किया है। उच्च शिक्षा प्राप्त की और उसकी पत्नी आदीला भी उच्च शिक्षा प्राप्त है। रशीद किसी भी पड़ोसी से उसका परिचय होते ही फ़ौरन यह बता देता था। पैदा वह बाकू के एक छोटे-से क़सबे में हुआ था, पर उसे बाकू के केन्द्र में तीन कमरोंवाला फ़्लैट मिल गया था। फिर उसने समाज कल्याण मंत्रालय में एक ऊंचा पद भी प्राप्त कर लिया। उसका काम ऐसा है कि वह भले लोगों का काफ़ी भला कर सकता है। अच्छा फ़्लैट लिया, घर बसाया – सब अपनी मेहनत के बल पर। लेकिन रशीद यह भी कहता था कि जीवन में दोस्तों का महत्त्व और किसी से कम नहीं होता, क्योंकि वे सलाह भी दे सकते हैं और सहारा भी। और वह स्वयं भी सदा उनके काम आने की कोशिश करता है।

रशीद बहुत ही शिष्ट आदमी था। शुरू में उसकी इतनी शिष्टता पर आश्चर्य होता था, पर धीरे-धीरे सब आदी हो गये; बल्कि मैंने देखा कि दूसरे लोग भी पहले से कहीं ज़्यादा शिष्ट और विनम्र हो गये हैं।

रशीद ने इस बार भी मेरे साथ दुआ-सलाम करते ही तुरन्त मेरी दादी की सेहत के बारे में पूछा, मछली पकड़ने में हमारी सफलता की कामना की, हालांकि उसके दोस्त के चेहरे से जाहिर हो रहा था कि मेरे कारण उनकी बातचीत में बहुत ही दिलचस्प जगह पर विघ्न पड़

गया था। रशीद का वह दोस्त भी हाल ही में यहां आया था। उसने एक साल पहले बस्ती के दूसरे छोर पर एक बंगला ख़रीद लिया था।

रशीद और उसकी पत्नी बहुत घुल-मिलकर रहते थे, हालांकि वे स्वभाव से एक दूसरे से बहुत ही भिन्न थे। वे आपस में कभी नहीं झगड़ते थे और लोगों के सामने भी एक दूसरे को अपने ख़ास, प्यार भरे नामों से बुलाते थे। रशीद की पत्नी को लोग अकसर इंजेक्शन लगाने बुलाया करते थे। वह कभी इनकार नहीं करती थी, यहां तक कि रात को भी। वह कहती थी कि डाक्टर होने के नाते यह उसका कर्त्तव्य है। उसके कारण तो ख़ास तौर से मुझे पूरी तरह यह मालूम हो चुका था कि गायली में कौन-कौन-से लोग अच्छे हैं और कौन-कौन-से सबसे बुरे। उसकी जगह कोई और होता, तो घर-घर जाकर लोगों के इंजेक्शन लगाने को तैयार ही न होता, उसे चाहे कितने ही पैसे क्यों न दिये जाते। लेकिन रशीद की पत्नी को, मेरे ख़याल में, डाक्टर के नाते अपने कर्त्तव्य का ध्यान रखते हुए उन लोगों की अकृतज्ञता पर ध्यान न देने की आदत पड़ गयी थी।

रशीद अपनी पत्नी के बारे में यही कहता कि वह सचमुच देवी है। यह सुनकर आदीला हमेशा लाज से लाल हो उठती और फिर कभी ऐसा न कहने का आग्रह करती।

पर कामील चाचा का घर बिलकुल खंडहर हो गया है। उनकी सीढ़ियां ढह गयी-सी लगती हैं और उन पर घास भी उग आयी है। यों बंगला उनका अच्छा है। उनके यहां अंगूर की बेलें भी ढेरों हैं, सब में गुच्छे के गुच्छे लटके रहते हैं, अंजीर के पेड़ भी आठेक हैं और अनार के भी, पर घर उनका किसी काम का नहीं है। ग़नीमत है कि अभी उसकी छत से पानी नहीं चूता है। कामील चाचा बस घर की मरम्मत करने के मंसूबे बांधते रहते हैं, पर हर वसन्त में उन्हें किसी तरह वक़्त ही नहीं मिल पाता। रशीद ने एक या दो बार कामील चाचा को मकान और अहाते को ठीक-ठाक करने में मदद करने का सुझाव भी दिया। कहा कि इसमें उसका कुछ ख़र्च नहीं होगा, उसके यहां मरम्मत तो होनी ही है, एकाध कील ज़्यादा गाड़ने से उसे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ने का, पर उन्होंने इनकार कर दिया। रशीद को धन्यवाद देकर उन्होंने कहा कि समय निकालकर वे ख़ुद ही मरम्मत कर डालेंगे। कामील चाचा की जगह मैं होता, तो रशीद की मदद के

प्रस्ताव को कभी नहीं ठुकराता। रशीद हमारे बहुत-से पड़ोसियों की मदद करता रहा है। बस यूं ही, पैसों के बिना या बदले में कुछ लिये-दिये बिना, पड़ोसी के नाते। वह यही कहता भी है – बस दिल से मदद करना चाहता हूं।

जैसे ममेद को उसने ऊपर से कुछ लिये बिना सरकारी मूल्य पर कुएं के लिए बिजली का पम्प भी दिलवा दिया। एक ख़ास क़िस्म का पम्प। ममेद कई सालों से उसे कहीं भी नहीं ख़रीद पा रहा था। दूसरे पड़ोसी को भी उसने क्यू के बिना 'मोस्कविच' कार ख़रीदवाने में मदद दी। वह कहता है कि उसके हर जगह अच्छे-अच्छे दोस्त हैं। और वे लोग रशीद का आदर करते हुए ऐसे ईमानदार लोगों की मदद करने को तैयार रहते हैं, जो अपनी स्पष्टवादिता और सीधेपन के कारण कुछ हासिल नहीं कर पाते हैं।

रशीद शायद इसलिए भी कामील चाचा के घर की मरम्मत करवाने का सुझाव देता है कि उसे दूसरों के उजाड़ पड़े बंगले देखकर बुरा लगता है। वह ख़ुद ज़मीन के अपने टुकड़े की बहुत अच्छी तरह संभाल करता है। उसके यहां अंगूर की सारी बेलें एक क़तार में लगी हैं, अंजीर और शहतूत के पेड़ भी सलीक़े से कटे-छंटे हैं, वरना गायली में पहले कोई भी उनकी कटाई-छंटाई नहीं करता था, वे बस यूं ही ख़ुदा के भरोसे बढ़ते रहते थे। लेकिन रशीद ने यहां आते ही कृषिविद और माली को बुलवाया और उन्होंने उसकी सारी खेती-बारी को ठीक-ठाक कर दिया।

रशीद ने अपने टुकड़े में, घर के सामने नीले सरो का एक पेड़ भी लगाया। उसे देखने के लिए आधा गायली उमड़ पड़ा था। सब देखकर अचरज करते थे, कहते थे कि यह पेड़ यहां कभी पनपेगा ही नहीं, क्योंकि मिट्टी उसके माफ़िक नहीं है। लेकिन सरो ने अपनी जड़ें जमा लीं, वैसे फ़ायदा उससे बहुत ही कम हुआ। शायद वह किसी ख़ास क़िस्म का सरो था, क्योंकि सारे तटवर्ती इलाक़ों से मक्खियां आ-आकर उस पर जमा होने लगीं। वैसे किसी सीमा तक वह एक लाभकारी सरो था, क्योंकि उसके कारण आस-पास के सारे इलाक़े में एक भी मक्खी दिखाई नहीं देती थी, सब उसी पर जमा हो गयी थीं। पेड़ के पास जाओ, तो सारा पेड़ ही भनभनाता-सा लगता था। नीचे से लेकर ऊपर तक उसकी सारी शाखाओं पर मक्खियों की तह जमी रहती

थी, न छाल नज़र आती थी और न हरी पत्तियां। सब तरीक़े आज़माये गये, पर बेकार। दवाई छिड़कने के दो दिन बाद ही मक्खियां फिर आ जमा होती थीं। लगता था मक्खियां बहुत दूर-दूर के इलाक़ों से आती थीं, क्योंकि खुद मुझे भी पिछले कुछ समय से न समुद्र-तट पर कोई मक्खी नज़र आती थी और न ही घर में। पर मरी हुई मक्खियों के ढेर हर जगह दिखाई देते थे। रशीद के घर में तो उनके मारे पैर रखना भी दूभर हो गया था।

आखिर सरो को काटना पड़ा। रशीद के सिवा सभी को बहुत दुख हुआ, क्योंकि गायली में फिर मक्खियां नज़र आने लगीं, वैसे पहले से कम संख्या में, पर नज़र आने लगीं।

कामील चाचा को जब मालूम पड़ा कि सरो काट दिया गया है, तो उन्होंने रशीद से कहा कि उसने एक वैज्ञानिक खोज के बिलकुल निकट पहुंचकर एक बहुत गम्भीर भूल कर डाली। रशीद के स्थान पर वे होते, तो पहले यह निश्चित करते कि उस अद्भुत सरो में ऐसी क्या विशिष्टता थी और उसकी सूचना वैज्ञानिक पत्रिकाओं को भेजते। शायद इस तरह के सरो वृक्षों के कारण मानवजाति का मक्खियों से पिण्ड ही छूट जाता।

रशीद उनकी बात ध्यानपूर्वक सुनता रहा। साफ़ ज़ाहिर था कि यह बात उसे बिलकुल ठीक लगी थी और सोचे-समझे बिना पेड़ काट डालने पर पछता रहा था। यह बात उसके दिल में इसी तरह जमी रह जाती, अगर कामील चाचा ने बाद में यह न कह दिया होता कि रशीद ने यदि अपनी खोज पूरी कर ली होती, तो भविष्य में सारे देश में ऐसे पेड़ शतरंज की बिसात की तरह मक्खियों के लाइटहाउस के रूप में लगा दिये जाते, और रशीद को पेटेन्ट क़ानून के अंतर्गत उसकी इच्छानुसार प्रत्येक सरो या प्रति हज़ार मृत मक्खियों के हिसाब से नियमित रूप से धनराशि दी जाती। रशीद ने हुंकार भरी और समझ गया कि कामील चाचा मज़ाक़ कर रहे हैं। उसने कहा कि भाड़ में जाये ऐसी आमदनी। दुनिया भर का सारा पैसा तो कभी कमाया नहीं जा सकता है। उसके लिए तो वही काफ़ी है, जो वह अपनी मेहनत से कमाता है। मैंने तो सोचा था कि रशीद बुरा मान जायेगा। कुछ ऐसे लोग भी तो होते हैं, जो मामूली-सा मज़ाक़ भी नहीं सह पाते, पर रशीद ने इसका ज़रा भी बुरा नहीं माना।

यहां आ बसने के बाद उसने अपनी सारी जायदाद ठीक-ठाक कर ली थी। नयी छत डलवा ली और सीढ़ियां भी लगवा लीं। उसने चहारदीवारी की भी मरम्मत करवा ली, जो कई जगहों पर ढह गयी थी। एक ही दिन में पत्थर और सीमेंट मंगवाकर सब ठीक-ठाक करवा लिया। अब उसकी चहारदीवारी बिलकुल नयी-सी लगती है, लेकिन उस पर रंग नहीं करवाया गया। रशीद ने कहा कि वह कंजूस नहीं है, पर उसके पास फ़िज़ूलखर्ची के लिए पैसा नहीं है। ऐसी चहारदीवारी पर पैसा खर्च करना, जो सिर्फ़ सड़क से ही दिखाई देती है, बेवक़ूफ़ी होती।

वास्तव में वह कंजूस है भी नहीं। उसके घर में सारी चीज़ें मौजूद हैं। बड़ा फ़्रिज भी, बढ़िया फ़र्नीचर भी, वैसा बिलकुल नहीं जैसा कि यहां के बंगलों में होता है, रंगीन टेलीविजन भी है, स्नानघर में उसने फ़व्वारे के बजाय बाथटब लगवा रखा है। हमारे घर में तो फ़र्श लकड़ी का है, पर रसोई में सीमेंट का। रशीद ने कहा कि सीमेंट के फ़र्श से भरी गर्मियों में भी गठिया हो सकता है। उसने अपने रसोई के फ़र्श पर लिनोलियम लगवा लिया और कमरों में सजावटी लकड़ी का। उनके घर में मुझे जो सबसे ज़्यादा पसन्द है, वे हैं उनकी किताबें, सारा घर उनसे अटा पड़ा है। रशीद लगभग हर हफ़्ते शहर से किताबें लेकर आता है। वह दुनिया भर के सारे संस्करणों का ग्राहक है, जिनमें "विश्वकोशों" से लेकर ड्राइज़र और ओ-हेनरी तक के सम्पूर्ण खण्ड शामिल हैं।

बस यह मेरी समझ में नहीं आता है कि वह लाइनों में खड़ा होने के लिए इतना समय कहां से निकलता है। एक बार मैंने और पापा ने जाकर कुछ किताबों के लिए लाइन में नाम लिखवाया था। हमें तीन दिनों तक लगातार जाकर हाज़िरी देनी पड़ी थी, फिर इतवार को सुबह से दोपहर तक लाइन में खड़े रहना पड़ा था, तब जाकर हमें रसीद मिली थी। पहले मैं रशीद से पढ़ने के लिए किताबें लिया करता था। उसने खुद ही कहा था: "किताबें पढ़ने के लिए ही होती हैं, ले जाओ, जब चाहो, तब लौटा देना।" एक बार जब मैंने उसे दो किताबें एक साथ लौटायीं, तो रशीद ने उन्हें लेकर उलटा-पुलटा और अविश्वास के साथ मुस्कराकर पूछा: "मतलब यह कि तुमने ऐसी दो मोटी-मोटी किताबें एक हफ़्ते में पढ़ डालीं?" मैंने जवाब दिया: "बेशक, चाहो,

तो मैं इनका सारांश भी सुना सकता हूं।" तब उसने फ़ौरन मुस्कराना बंद करके कहा : "नहीं, कोई ज़रूरत नहीं इसकी, मुझे तुम पर विश्वास है। तुम कोई झूठ बोलनेवाले बच्चे थोड़े ही हो। शाबाश!" रशीद और आदीला ने एक दूसरे की तरफ़ देखा पर मैं समझ नहीं पाया कि उनका मतलब क्या था।

वैसे बेहतर होता अगर मैं निकर के बजाय पतलून पहन लेता, क्योंकि जब ठण्डी और गीली टहनियां टांगों को छूती हैं, तो बहुत बुरा लगता है। कोहरे के तो आज कहने ही क्या। गर्मियों में गायली में कोहरा विरले ही छाता है, पर कभी ऐसा कोहरा छाया हो कि इस जगह से हमारा घर भी नज़र न आये, मुझे यह याद नहीं आता। कामील चाचा के घर का दरवाज़ा थोड़ा खुला हुआ है। वे बाहर जाते समय उस पर कभी ताला नहीं लगाते। मैंने एक बार उनसे पूछा भी था कि अगर कोई उनका टाइपराइटर या राइफ़ल चुरा ले जाये, तो क्या उन्हें दुख नहीं होगा। वे हंसकर बोले कि सारे सामान के साथ अगर उनका टाइपराइटर भी चोरी चला जाये, तो उन्हें अपने ऐसे अभूतपूर्व दुर्भाग्य को देखने में काफ़ी मज़ा आयेगा। सच कहूं, तो हमारे पड़ोस में कभी किसी के यहां चोरी नहीं हुई, हालांकि आस-पास सभी तरह-तरह के पेचीदा ताले लगाते हैं। मैं यहां हर साल, क़रीब-क़रीब अपने जीवन की पहली गर्मियों से ही, आता रहा हूं। हमारे पड़ोसी भी अभी तक वही के वही हैं। नया कोई नहीं आया, केवल दो साल पहले आये रशीद के सिवा, जो शहलार बेग की मौत के बाद आकर बसा था।

तब ज़रीफ़ा अपने बंगले में अकेली रह गयी थी। शहलार बेग के अन्य बच्चे तब से एक बार भी वहां नहीं आये थे। या तो वे लोग बहुत व्यस्त रहते थे, या फिर उनके बंगले किसी और जगह थे। हो सकता है, उन्हें ज़रीफ़ा से बात करने में कुछ मज़ा ही न आता हो, हालांकि वह उनकी बहन तो थी, पर सगी नहीं। ज़रीफ़ा का जन्म शहलार बेग की दूसरी पत्नी मरियम ख़ानम से हुआ था, जब वे सत्तर साल के थे। ज़रीफ़ा बहुत ही अच्छी थी। लोग कहते हैं कि जरठ कुमारियां बड़ी गुस्सैल होती हैं, पर इस बारे में मैं कुछ नहीं कह सकता, क्योंकि मैं ज़रीफ़ा के सिवा और किसी जरठ कुमारी को जानता ही नहीं था। ज़रीफ़ा तो निश्चित रूप से भली और शिष्ट थी। वह

मुस्कराती भी किसी क़सूरवार की तरह, मानो बात भी कर रही हो और साथ ही किसी अज्ञात क़सूर के लिए क्षमा-याचना भी कर रही हो। उसकी संगत में मुझे कभी ऐसा महसूस नहीं हुआ कि वह मुझसे काफ़ी बड़ी है। वह मेरे साथ हमेशा वैसे ही बात करती थी, जैसे अपने दूसरे परिचितों के साथ, बिलकुल भी फ़र्क़ नहीं करती थी।

...उस दिन दादी, ज़रीफ़ा और मैं अंगूर तोड़ रहे थे। अंगूर तोड़ते हुए ज़रीफ़ा ने दादी को बताया कि कुछ लोगों ने उससे उन्हें अपना बंगला बेचने की बात की है और आज वे जवाब लेने आ रहे हैं। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। यों तो वह उसे बेचना नहीं चाहती थी, बेचते हुए मन को कुछ घबराहट होती थी, लेकिन साथ ही वह सोचती थी कि उनकी बात मान ले, क्योंकि पिता की मृत्यु के बाद रातों को उस पर उदासी हावी हो जाती है और फिर पैसा भी काम आ सकता है। दादी ने उसे जल्दबाज़ी न करने और सबसे पहले यह मालूम करने की सलाह दी कि वे ख़रीदार कैसे लोग हैं, कहीं धोखेबाज़ तो नहीं हैं। ज़रीफ़ा ने कहा कि वह दादी को उन ख़रीदारों से मिलाये बिना और दादी की राय लिये बिना कोई फ़ैसला नहीं करेगी।

...उस दिन हमने आदीला और रशीद को पहली बार देखा। वे दोनों दादी को बहुत अच्छे लगे। दादी को लोगों की पहचान है, यह सभी जानते हैं। जाने से पहले रशीद एक लिफ़ाफ़े में ज़रीफ़ा के पास पैसे छोड़ गया। उसने कहा कि उसे ज़रीफ़ा पर पूरा विश्वास है, इसलिए ये पैसे वह अपना अन्तिम निर्णय करने तक अपने पास ही रखे। उसने दादी और ज़रीफ़ा को बंगले की ख़रीदारी की क़ानूनी कार्रवाइयों के बारे में भी किसी प्रकार की परेशानी न होने देने का आश्वासन दिया। उसने कहा कि उपनगरीय आवास निदेशालय में उसकी जान-पहचान के लोग हैं। वैसे परिचित हों या नहीं, इसका कोई महत्त्व भी नहीं। कोई भी ईमानदार आदमी रशीद के परिवार को बंगला ख़रीदने की अनुमति दे देगा, जिसकी आवश्यकता उसे इसलिए है कि उसके बच्चे हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ नागरिक बनें।

रशीद के जाने के बाद ज़रीफ़ा और दादी ने रक़म गिनी। रक़म उनकी आशा से भी कहीं अधिक निकली।

मेरे ख़याल में उस दिन से रशीद दादी को और भी ज़्यादा भाने

8-0300

लगा, जिस दिन ज़रीफ़ा बंगला छोड़कर जा रही थी। रशीद और आदीला उस दिन सुबह न सिर्फ़ ट्रक लेकर आये, बल्कि उसने ज़रीफ़ा का सामान लदवाने में ड्राइवर की मदद भी की और उसे ढुलाई के लिए पेशगी भी दे दी। ज़रीफ़ा को विदा करते समय रशीद ने उससे कहा कि वह पहले की तरह बंगले को अपना ही समझे, जब भी वह आना चाहेगी, उसका यहां हार्दिक स्वागत होगा और एक अलग कमरा रहने को दिया जायेगा। उसके ये शब्द सुनकर ड्राइवर और मेरे सिवा दादी, ज़रीफ़ा, आदीला और रशीद – सभी लोगों की आंखों में आंसू आ गये।

एक महीने बाद जब हमें पता चला कि ज़रीफ़ा की शादी हो गयी है, तो हम सब हैरान रह गये। दादी ने कहा कि बंगला बेचना सबके लिए लाभदायक ही सिद्ध हुआ। इसका मतलब केवल यही हो सकता था कि दादी को लोगों की अच्छी पहचान है। रशीद वास्तव में सज्जन और भला आदमी है। इस क़िस्से को दो साल हो चुके हैं। लेकिन सब रशीद के इतने आदी हो चुके थे जैसे कि वह यहां इससे भी बहुत पहले से रह रहा हो।

गर्मियों की छुट्टियों के बाद जब मेरे दोस्त बताते हैं कि वे कहां-कहां गये, तो मुझे उनसे ईर्ष्या भी होती है। कितने दिलचस्प ढंग से जीते हैं लोग। सिर्फ़ मेरे पास ही सुनाने को कुछ नहीं होता। हर साल मेरी गर्मियों की छुट्टियां गायली में ही बीतती हैं। वही पड़ोसी, मेरी दादी और मैं, बस। यह अच्छी बात है कि पापा ने अगले साल मुझे अपने साथ पहाड़ों में भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण पर ले चलने का वादा किया है। वे इस साल मुझे ले जाने को तैयार नहीं हुए, क्योंकि मैं अभी छोटा हूं। जैसे कि एक साल में मैं बहुत बड़ा हो जाऊंगा पर सब संभव है। वैसे लोग उम्र के साथ-साथ बहुत बदल जाते हैं। मेरी दादी को ही देखिये, कितनी बुढ़ा गयी हैं, हर तरह के शकुन-अपशकुन में विश्वास करने लगी हैं। क्या बुढ़ापे में सचमुच सब ऐसे ही हो जाते हैं? देखना है, मैं कैसा हो जाता हूं बुढ़ापे में।

बाप रे, कैसा घना कोहरा है! यहां से समुद्र भी नजर नहीं आ रहा है। इन चट्टानों से समुद्र तक मुश्किल से पचास मीटर का

फ़ासला होगा, इससे ज़्यादा नहीं, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं। पर आज सफ़ेद धुंध के सिवा और कुछ नजर ही नहीं आ रहा है। वासिफ़ शायद खीज रहा होगा कि मैं क्यों इतनी देर कर रहा हूं। वह चट्टान पर बैठा मेरा इंतज़ार कर रहा होगा। वह मेरे बिना अकेला कभी मछली पकड़ना शुरू नहीं करेगा। हमारा एक और दोस्त है आक़िफ़। अभी वह यहां नहीं है, दस दिन बाद आयेगा। हम तीनों यहां लगभग सारा वक़्त साथ रहते हैं और किसी को अपने तिगड्डे में शामिल नहीं करते। यहां से समुद्र भी दिखाई नहीं दे रहा है। केवल लहरों का शोर और आउटबोर्ड मोटर की आवाज़ सुनाई दे रही है। मैं पक्के तौर पर कह सकता हूं कि तो शिकार-चोरों की मोटरबोट है या मछली-इंस्पेक्टर की। दूसरा कोई समझदार आदमी ऐसे मौसम में समुद्र में थोड़ा ही जायेगा। और ऐसे कोहरे में शिकार-चोरों को खुली छूट मिल जाती है। यहां लहरों के साथ चिरे पेटोंवाली बहुत-सी स्टर्जियन मछलियां किनारे पर आ जमा होती हैं। इसका मतलब यही होता है कि शिकार-चोरों ने उनके पेटों को चीरकर अण्डे निकाल लिये हैं, क्योंकि वे तो बहुत महंगे बिकते हैं, पर मछलियों को पानी में फेंक दिया है, ताकि वे नाव में फ़ालतू जगह न घेरें। इतनी मछली बरबाद हो जाती है। आखिर वासिफ़ आ गया।

"तुम्हें कभी अक़्ल आयेगी या नहीं?"

मैंने उसे तुरन्त सारी बात समझा दी, दादी तथा उल्लू के बोलने से जुड़े उनके अंधविश्वास के बारे में भी बता दिया।

"यह बिलकुल पक्की बात है," वासिफ़ बोला, "इसका नतीजा कभी अच्छा नहीं हो सकता। तुम देख लेना, ज़रूर कोई बुरी बात होकर रहेगी, उल्लू रात को आकर यूं ही नहीं बोलता है। यह अपशकुन है। और अगर घर में सांप नज़र आ जाये, तो फ़ौरन कटोरे में दूध रख देना चाहिए। वरना बहुत बुरा होता है।"

"मैं तो सोचता था कि सिर्फ़ दादी ही अंधविश्वासी है, पर मालूम पड़ता है, तुम भी बेतुकी बातों में विश्वास करते हो," मैंने कांटे पर केंचुआ लगाते हुए कहा।

"बेतुकी बातों पर? पिछले साल खानुमा चाची के घर में एक सांप घुस आया था, वे उसे देखते ही चीख उठीं और तब तक चीखती रहीं, जब तक कि उनका बड़ा बेटा ममेद भागता हुआ वहां नहीं

आ गया और उसने अपनी दुनाली बन्दूक़ से सांप पर एक साथ दो गोलियां न दाग़ दीं। मैंने ख़ुद देखा था, अगर उसके दोनों टुकड़े मिलाकर रखे जाते, तो उसकी लम्बाई डेढ़ मीटर से कम न निकलती। उसके बिलकुल बीच में से दो टुकड़े हो गये थे।"

"तो क्या तुम सोचते हो कि ममेद चाचा को सांप के ख़ानुमा चाची के काट लेने तक इंतज़ार करना चाहिए था?"

"बड़ी ज़रूरत पड़ी थी सांप को उन्हें काटने की! सब ठीक हो जाता, अगर ख़ानुमा चाची उसके सामने दूध रख देती। इसीलिए अगले दिन सुबह से ही गड़बड़ होने लगी। पहले ख़ानुमा चाची के हाथ में एक बिच्छू ने डंक मार दिया, जब वे सुखाने के लिए अंजीर चुन रही थीं। उनका पूरा हाथ सूजकर लट्टे जैसा हो गया। वे पूरे हफ़्ते कराहती रहीं। हाथ हिला तक नहीं पाती थीं, ऐसे वक़्त जब उन्हें अंजीर साफ़ करने और उसका मुरब्बा तैयार करने के लिए हाथ की सख़्त ज़रूरत थी। ख़ुद ममेद भी उसी दिन पाख़ाने में गया और उसी वक़्त ऐसे निकलकर भागा, जैसे किसी ने उस पर खौलता पानी फेंक दिया हो। वह वहां बैठा ही था कि ईंटों के बीच की दरार में से एक सांप ने सिर निकाला और उसकी ओर रेंगने लगा। एक सैकंड की देर हो जाती, तो सारा खेल ख़त्म हो जाता उसका! अब दो साल से वह पहले दुनाली लेकर वहां जाता है और हर दरार में एक डण्डी ठूंस-ठूंसकर देखता है। और तुम हो कि इसे बेतुकी बातें कहते हो। फिर उसके दो दिन बाद ही ममेद की बेटी के ख़सरा निकल आया।"

"ख़सरा तो सभी बच्चों के निकलता है। मैं जब पांच साल का था, तो मेरे भी ख़सरा निकला था, इससे क्या? हमारे घर में तो कोई सांप नहीं आया।"

"बस करो अब। तुम्हारी गप्पों में उलझकर तो हम एक भी मछली नहीं पकड़ पायेंगे आज।"

चलो, कम-से-कम तिरंदा तो दिखाई दे रहा है। वैसे यह जगह ज़्यादा ऊंची नहीं है। हमारी चट्टान से पानी कोई ढाई-तीन मीटर नीचे होगा, उससे ज़्यादा नहीं। उल्लू, सांप... इस वासिफ़ से तो बहस करना ही बेकार है, मेरी दादी जैसा ज़िद्दी है और हर शकुन-अपशकुन में विश्वास करता है। हालांकि, देखा जाये, तो कुछ लक्षण सच भी निकलते हैं। जैसे दादी डूबते सूरज के रंग से सही-सही बता

देती हैं कि अगले दिन कैसा मौसम होगा और उनका कहा कभी ग़लत नहीं निकलता। हमारे बंगले में बनी चींटियों की बांबी को देखकर वे बता सकती हैं कि इस साल जाड़ा कैसा पड़ेगा। इस साल वही हुआ। उन्होंने बंगले से जाते वक़्त कहा था कि बाकू में उत्तरी ध्रुव जैसी सर्दी पड़ेगी और तब शहर में दो दिन तक कोई भी काम पर नहीं जा सका था, बर्फ़ की इतनी मोटी तह से ढक गया था सब कुछ – सड़कें, हवाई अड्डा आदि, आदि। कहते हैं, कारों में फंसे लोगों को निकालने के लिए फ़ौजी दस्तों को बुलाना पड़ा था... ख़ैर, मौसम या फ़सल जैसी चीज़ों के मामले में तो ऐसे लक्षणों पर कोई विश्वास कर भी ले, लेकिन ऐसी बातों में विश्वास करना, जिन पर लोगों का जीवन निर्भर करता हो, कुछ समझ में नहीं आता। बड़ी हंसी आती है यह सुनकर कि किसी मरदूद उल्लू के आने या बोलने से कामील चाचा को कुछ हो जायेगा। लेकिन दादी और वासिफ़ को इस पर विश्वास है। मैं जानता हूं कि उनका कुछ नहीं बिगड़ेगा, फिर भी यह याद आने पर मुझे अचानक बहुत बुरा महसूस होने लगा कि ख़ुद मैंने ही पहले यह कहा था कि उल्लू हमारे बंगले पर नहीं, उनके बंगले पर आता है। यह सोच-सोचकर कि मैंने ऐसी बात कही, मुझे लगा जैसे मैं ग़द्दार हूं। मैं यह बहुत अच्छी तरह जानता हूं कि कोई बुरी बात नहीं होगी, पर फिर भी बुरा लगता है, जैसे उस सुबह मैंने कामील चाचा को धोखा दे दिया हो या उनके साथ ग़द्दारी की हो।

"कार्प!" वासिफ़ ने चिल्लाकर मछली समेत डोरी को खींच लिया। कार्प कैसे हो सकती है? मैंने उसे हवा में छटपटाते देखते ही पहचान लिया था कि वह आम ब्रीम मछली है। कार्प तो यहां सौ साल में भी हाथ नहीं आनेवाली।

"ब्रीम ही सही!" वासिफ़ बोला। "कम-से-कम आधा रूबल तो मिल ही जायेगा इसका।" उसने कांटे से मछली उतारकर बालटी में डाल दी।

आधा रूबल मिलने की बात करके वह डींग हांक रहा था। इतनी-सी मछली के शायद हमें बीस कोपेक से ज़्यादा मिलने की आशा नहीं थी। हां, अगर बंगलेवाला कोई सनकी मिल जाये, तो और बात है, जो मोलभाव किये बिना हमें मुंह मांगे दाम दे दे। एक बार वासिफ़ को पांच ब्रीम और दसेक बुलहेड मछलियों के तीन रूबल मिल गये

थे, जबकि उसने मांगे सिर्फ़ दो थे। मछलियां हमेशा वासिफ़ ही बेचता है। हमने बारी-बारी से बेचने की कोशिश करके भी देखा, लेकिन कुछ फ़ायदा नहीं हुआ। पहले दिन, जब मेरी बारी थी, मेरे पास दो लोग आये, शायद मियां-बीवी थे। बीवी बालटी में ज़िंदा मछलियां देखते ही मेरे पास आ गयी और बोली: "अहा, कितनी अच्छी मछलियां हैं! क्या भाव दोगे?" मुझे पता नहीं क्या सूझी, बोला: "ये बेचने के लिए नहीं हैं।" औरत बोली: "माफ़ कीजिये, मैंने सोचा, आप बेचना चाहते हैं।" और वे चले गये। उस दिन से मछलियां सिर्फ़ वासिफ़ बेचता है, पकड़ते हम तीनों हैं। आक़िफ़ को भी वह बेचने नहीं देता, क्योंकि वह कभी मोल-भाव नहीं करता, उसको लोग जितने पैसे देते हैं, उतने में ही फ़ौरन बेच देता है। हम पिछली गर्मियों से मछलियां बेचने लगे हैं। शुरू में हम खुद ही सीखों पर उनके कबाब सेंककर खा जाते थे, बहुत स्वादिष्ट लगते थे, फिर हम ऊब गये और हमने मछलियां बेचने की ठान ली। पिछली गर्मियों में हमने पैंतीस रूबल जोड़ लिये। पैसे हमने खर्च नहीं किये, वे वासिफ़ के पास रखे हैं। हमने हिसाब लगाया कि अगर हमारा धंधा ऐसे ही चलता रहा, तो अगले साल हम एक नाव खरीद लेंगे, बेशक नयी नहीं, पुरानी, लेकिन अच्छी हालत में। वासिफ़ ने एक नाव देख भी रखी है और उसके मालिक से सौदा भी तय कर लिया है। हम उसमें सवार होकर मछलियां पकड़ा करेंगे। वासिफ़ कहता है कि अगर हम अक़्लमंदी से मछलियां पकड़ते रहेंगे, लालच नहीं करेंगे, तो इससे ज़्यादा फ़ायदेमंद धंधा ढूंढ़े नहीं मिल सकता। खास तौर से जब स्टर्जियन और सामन का भाव इतना चढ़ा हुआ है, स्टर्जियन के अण्डों की तो बात ही छोड़िये। जब हमारे पास अपनी नाव हो जायेगी तो सचमुच मज़ा आ जायेगा। लेकिन अगर मछली-इंस्पेक्टर हमें पकड़ ले तो मुसीबत भी आ सकती है। मगर ऐसा शायद ही हो, क्योंकि यहां तो सबको एक दूसरे के बारे में सब कुछ मालूम होता है। मछली-इंस्पेक्टर की मोटरबोट रवाना होने के आधा घंटे पहले ही हमें इसका पता चल जाता है, क्योंकि मछली-इंस्पेक्टर ममेद चाचा और उनके दो भाई हमसे थोड़े फ़ासले पर ही रहते हैं और अपनी मोटरबोट तक पहुंचने के लिए वे हमारे बंगले के सामने से ही गुज़रते हैं। तब दादी हर बार उन बदमाशों को पकड़ने में, जो कुछ किलो अण्डों के लालच में इतनी सारी मछलियों

को बरबाद कर देते हैं, उसकी सफलता की कामना करती हैं। यह देखिये, एक और चिरे पेटवाली स्टर्जियन किनारे पर आ लगी, दो मीटर से कम लम्बी नहीं होगी...

आखिर एक तो फंसी! बहुत ही नन्ही-सी, मछली नहीं, छुछमछली कहिये, कुछ भी हो, अच्छी लगती है! पहली मछली पकड़ना सबसे मुश्किल होता है। अब एक के बाद एक फंसने लगेंगी!..

मुझे कुछ मालूम नहीं पड़ा कि वह आ कहां से टपका। वह मेरे पास खड़ा होकर तिरेंदों को देख रहा था। अगर उस दिन कोहरा न छाया होता, तो, बेशक, हमने उसे दूर से ही देख लिया होता। पर यह तो जादू-सा हो गया – क्षण भर पहले वहां कोई नहीं था, और अब वहीं जहाज़ियोंवाली कलफ़ लगी क़मीज़ और सफ़ेद पतलून पहने आदमी मेरी बग़ल में खड़ा है। मैंने सिर्फ़ लड़कियों को ही ऐसी क़मीज़ें पहने देखा था, आम आदमी किसी हालत में भी वैसी क़मीज़ पहनने को तैयार न हो। उसने हमसे दुआ-सलाम की, मैंने जवाब में सिर हिलाया और वासिफ़ भी कुछ बुदबुदाया।

"मछली पकड़ रहे हो?" ग़ायली में समुद्र के किनारे सफ़ेद पतलून डाटे घूमनेवाला आदमी और पूछ भी क्या सकता था। क्या उसे फ़ौरन नज़र नहीं आया कि हम क्या कर रहे हैं?

मैंने सोचा कि ऐसा सवाल पूछने पर वासिफ़ उसे वहां से फ़ौरन भगा देगा, पर उसने ऐसा नहीं किया।

"हां," वासिफ़ ने जवाब दिया, "थोड़ी बहुत।" वासिफ़ को ऐसी प्यारी आवाज़ में बात करते सुनते ही मैं समझ गया कि उसने अपने मन में कुछ ठान ली है।

"क्या मैं भी तुम लोगों के पास बैठकर मछली पकड़ सकता हूं?" भला ऐसे सवाल कोई पूछता है, हमने यह चट्टान खरीद थोड़े ही रखी है।

"तुम क्या अकसर मछली पकड़ते हो?" वासिफ़ ने पूछा।

"इस साल में अभी तक तो नहीं पकड़ी।"

"तुम्हें शायद मछली पकड़ना आता ही नहीं है, क्यों?"

"इसमें आने की बात ही क्या है?" वह मुस्कराया। "यह कोई मुश्किल काम नहीं है।"

"बेशक, मुश्किल काम नहीं है," वासिफ़ ने तुरन्त सहमति व्यक्त

की और मुझे आंख मारी। "चलो, हम और तुम एक बात तय किये लेते हैं। अगर तुमने मछली पकड़ी, तो वह तुम्हारी हो जायेगी। अगर नहीं तो..."

मैं यही सोच रहा था कि वह अपनी कलफ़ लगी पतलून डाटे ओस से नम हुए लकड़ी के गट्ठर पर बैठेगा भी या नहीं। पर वह बैठ गया।

"और अगर नहीं पकड़ी, तो क्या होगा?" वह शायद इसी आस में मुस्करा रहा था कि वासिफ़ उसे कोई अच्छी चीज़ देने का वादा करेगा।

"तब हम दोनों तुम्हारे एक-एक धौल जमा देंगे, शायद दो-दो भी। ठीक है?" दूसरा कोई होता, तो वासिफ़ के फ़ौरन एक मुक्का जड़ देता या कम-से-कम वहां से चला ही जाता, पर उसे तो जैसे कोई परवाह ही न थी, उसने तो मुस्कराना भी बंद नहीं किया।

"ठीक है।" उसने वासिफ़ से उसकी फ़ालतू बंसी ले ली, मानो कुछ हुआ ही न हो और मेरे केंचुओं के डिब्बे की ओर हाथ बढ़ाया। "एक ले सकता हूं?" मेरे हां में सिर हिलाने तक उसने केंचुआ नहीं लिया।

आखिर यह आ कहां से टपका? हम तो यहां आनेवालों और रहनेवालों सभी को जानते हैं। उसने केंचुए को ढंग से कांटे पर लगाया और उसे पानी में फेंकने से पहले उस पर थूका भी। फिर चुप बैठा रहा। चुप रहकर ठीक ही कर रहा है वह। वासिफ़ उसके धौल जमाने के बहाने के इन्तज़ार में ही बैठा था। साफ़ नज़र आ रहा था कि उसके धौल जमाने में वासिफ़ किसी अपशकुन-शकुन का विचार नहीं करेगा। लेकिन इन अपशकुन-शकुन का चक्कर अजीब होता है। कोई मेरी दादी या वासिफ़ जैसे लोगों को उनमें विश्वास करते देखे, तो हैरान हुए बिना न रहे। पर सबसे अहम बात यह है कि उनके बारे में जितना ज़्यादा सोचिये, उतना ज़्यादा ही यह याद आता जाता है कि उनमें से कुछ तो सच निकल ही आते हैं, भले ही संयोगवश, और यही तो हैरानी की बात है। मुझे याद है कि दादी ने रशीद की पत्नी आदीला से कहा था कि एक महीने बाद उसके लड़का ही होगा। दूसरे बच्चे के बाद रशीद और आदीला बेटा होने की आस ही छोड़ चुके थे। उस समय दादी की बात पर किसी ने भी विश्वास नहीं किया

था। आदीला के तब तक तीन लड़कियां हो चुकी थीं।

आदीला जब हमारे यहां चलनी उधार मांगने आयी थी, तो दादी ने उसके पेट पर बड़े ग़ौर से नज़र डाली थी, फिर उसे पहलू से भी देखा और उन्होंने उससे एक क़दम आगे रखने को भी कहा था। अब कुछ याद नहीं आता कि उसने दायां क़दम आगे बढ़ाया था या बायां, पर दादी ने कहा था: "बेटी, तेरे लड़का होगा। इसमें ज़रा भी शक नहीं है।" आदीला ख़ुशी से फूली नहीं समायी थी, पर फिर भी उसने विश्वास नहीं किया था। जब रशीद ने यह बात सुनी, तो उसने कहा था कि ये सारे शकुन-अपशकुन अंधविश्वास हैं, जिन पर किसी बुद्धिजीवी को ध्यान नहीं देना चाहिए। आदीला ने भी पूरे महीने विश्वास नहीं किया, पर उसके लड़का ही हुआ। रशीद ने कहा कि पुत्र का जन्म मात्र एक सुखद संयोग है। मैं भी उससे सहमत था। कामील चाचा ने कहा था कि यह संयोग नहीं, बल्कि प्रकृति का नियम है। रशीद सरीखे लोगों को प्रकृति में सन्तुलन बनाये रखने के लिए अवश्य ही अपने सदृश्य सन्तान उत्पन्न करनी पड़ती है। वे समझ नहीं पाये कि यह सन्तुलन कैसा होता है, क्योंकि उनकी पत्नी नाईला ने बच्चे के, यानी मेरे सामने, ऐसी बातें करने के लिए उन्हें टोक दिया था। निश्चय ही, मुझे इस घटना की याद इसलिए नहीं आयी कि मैं उल्लू के बारे में सोच रहा हूं। शकुन-अपशकुन तरह-तरह के होते हैं, पर वे होते तो शकुन और अपशकुन ही हैं। क्या पता दादी ने आदीला के पेट का आकार देखकर अंदाज लगा लिया हो कि उसके क्या होगा और उससे एक क़दम आगे रखने को यूं ही कह दिया हो। तो यह मात्र संयोग ही था? हां इसका शकुन-अपशकुन से कोई वास्ता नहीं था। इसलिए मुझे उस मरदूद उल्लू के बारे में कुछ सोचना ही नहीं चाहिए। और कामील चाचा के बारे में मैं भी बेकार ही परेशान हो रहा हूं। मैंने तो यह बात सिर्फ़ दादी को तसल्ली देने के इरादे से कही थी। आखिर मैं तो पक्के तौर पर जानता हूं कि उल्लू के आने या बोलने से किसी का कुछ नहीं बिगड़ेगा। हर किसी को जो मुझे जानता है, मालूम है कि अगर कोई बला आनी ही होती, तो मैं कभी भी उसे अपने से कामील चाचा पर न टाल देता। बस! अब मैं इस बारे में आगे कुछ नहीं सोचूंगा।

"मेरा केंचुआ निकल गया। मैं एक और ले सकता हूं?" उसने मुझसे कहा। मैंने अपने जीवन में किसी को इतनी शिष्टता से बात करते नहीं सुना था। लगता था जैसे वह केंचुआ नहीं, अपनी मां से लगातार तीसरी बार आइसक्रीम मांग रहा हो। वैसे उसकी जगह कोई और होता और उसे भरी गर्मी में जहाज़ियोंवाली कलफ़दार क़मीज़ और पतलून पहना दी जाती, तो वह भी इतनी ही शिष्टता दिखाता। 'ले ले, भाई, चाहे पूरा डिब्बा ले ले, मेरा इसमें क्या बिगड़ता है?' मैंने सोचा।

"ले लो," मैंने कहा।

केंचुए को कांटे पर लगाते हुए वह बार-बार मेरी ओर देखता रहा। साफ़ ज़ाहिर था कि बस मेरे इशारे की देर है और वह मुझसे बात छेड़ देगा। बेशक, उससे बात की जा सकती थी। मैं उसे ग़ौर से देखने लगा। उसका बड़ा चेहरा देखने में कुछ बुरा नहीं है, जैसे कि कुछ के होते हैं और मन करता है, उनके पास जाकर बिना बात के पूरे ज़ोर से एक तमाचा जड़ दूं... बल्कि कहना चाहिए कि देखने में वह अच्छा है। लगता था जैसे मेरे मुंह से एक शब्द निकलने की देर है कि उसका चेहरा खिल उठेगा। मैं उससे बात करता, पर वासिफ़ को मछली पकड़ते वक़्त किसी का बात करना बिलकुल बर्दाश्त नहीं होता। वैसे इसे कोई भला मछली पकड़ना कह सकता है? पूरा एक घंटा गुज़र गया और मैं अभी तक एक मरियल-सी बुलहेड के सिवा कुछ नहीं पकड़ पाया हूं। ठीक है, थोड़ी देर और बिना बात किये काम चला लेंगे। फिर यह भी हो सकता है कि वह कुछ न पकड़ पाये? वासिफ़ के उसके धौल जमाने के बाद वह शायद किसी से बात ही न करना चाहे।

शाम को कामील चाचा आयेंगे, तो उनसे मिलने जाऊंगा। उन्हें मेरे आने पर खुशी होती है। अब भी और पहले भी, जब उनकी पत्नी नाईला यहां रहती थी। वैसे नाईला भी मेरे आने पर हमेशा खुश होती थी, शायद वह अभी भी मुझे याद करती होगी, मैं भी तो उसे याद करता हूं। उसके जाने के बाद काफ़ी बुरा लगता है, फिर भी ग़ायली में मेरे लिए सबसे अच्छी जगह कामील चाचा का घर ही है। हम दोनों काफ़ी देर तक कोई बात ही नहीं करते हैं। वे टाइपराइटर खटखटाते रहते हैं। बहुत पुराना टाइपराइटर है उनका,

बिलकुल पुरानी काली पिस्तौल जैसा लगता है, लेकिन काम अच्छा करता है। और मैं तख़्ते पर लेटा पत्रिकाएं पढ़ता रहता हूं,जो वे शहर से लेकर आते हैं। वे शायद आज भी काम करेंगे, पर मैं हर हालत में उनसे कहूंगा कि वे एक मिनट का समय निकालकर उस उल्लू के आते ही उसे गोली से उड़ा दें। वैसे उल्लू के आने से कुछ होने-वाला नहीं है, पर आदमी का मूड ज़रूर कुछ खराब हो जाता है। और इसकी किसी को ज़रूरत नहीं है, खास तौर से इस समय, जब कामील चाचा वैसे ही उदास रहते हैं। अब तो यह कल्पना करना भी कठिन है कि गर्मियों के आरम्भ में वे कितने प्रसन्नचित्त रहते थे, जब वे पहली बार अपने बंगले में अपनी पत्नी के साथ आये थे। मुझे याद नहीं आता कि नाईला के आने से पहले कभी किसी के यहां आने पर इतनी हलचल मची हो। सब सिर्फ़ उसी के, उसकी आकृति और उसके हेयर-स्टाइल के बारे में, बल्कि उसकी चाल के बारे में ही बातें किया करते थे। आदीला ने फ़ौरन सब औरतों के सामने कहा था कि वह किसी भी क़ीमत पर नंगी टांगें दिखानेवाला ऐसा स्कर्ट पहनने को तैयार न होगी भले ही इनकार करने पर उसे फांसी ही क्यों न दे दी जाये। सच पूछिये, तो आदीला की जगह मैं होता, तो मैं भी कभी तैयार न होता, क्योंकि उसकी टांगें मैं कई बार समुद्र-तट पर देख चुका हूं। उन टांगों पर चलने को तो कोई, जितना जी चाहे, चल तो सकता है, पर नाईला के स्कर्ट जैसे स्कर्ट की मदद से ग़ैरों को छोड़िये, अपनों को दिखाने लायक़ भी वे टांगें बिलकुल नहीं हैं। मैंने उस व्यक्ति की कल्पना करनी चाही, जो आदीला को ग़ायली के बंगलोंवालों के सामने अपनी टांगें दिखाने से इनकार करने के लिए गोली मारना चाहता हो, लेकिन कोई तसवीर मेरी आंखों के आगे न उभरी, क्योंकि उसी क्षण दादी ने कुछ ऐसी बात कही कि मैं उसकी टांगों के बारे में बिलकुल ही भूल गया। उन्होंने कहा कि उनके ज़माने में नाईला जैसी औरत को किसी भी शरीफ़ खानदान के घर की देहलीज़ पर क़दम भी न रखने दिया जाता और न कोई शरीफ़ औरत उसके साथ बात करने को ही तैयार होती। सबने तुरन्त दादी के साथ अपनी सहमति व्यक्त की और उसके बाद फ़ौरन अपने-अपने घर चली गयीं, क्योंकि काफ़ी रात हो चुकी थी।

पागल हो गये हैं क्या ये लोग? क्या सचमुच लोग इतनी जल्दी

बदल जाते हैं? शहर से बस हमारी गायली जैसी बस्ती में, जहां बंगलेवाले अपने जैसों को छोड़कर और किसी के साथ उठते-बैठते नहीं हैं, सिर्फ़ दो-तीन महीने के लिए आने की देर है कि लोग मिनी-स्कर्ट देखकर हाय-हाय करने लगते हैं, जबकि बाकू में छः महीने पहले यह फ़ैशन आने पर भी किसी के दिमाग़ में ऐसी बात नहीं आती है। बाकू में ही क्या, बिलिगिआ और मर्दाकिआनी में भी कोई मिनी-स्कर्ट पहननेवाली लड़की की ओर आंख तक उठाकर नहीं देखता, न ही अप्शेरोन के किसी अच्छे तट पर। अगर हमारे सारे पड़ोसी पूरे एक साल यहां से कहीं बाहर गये बिना रहें, तो पता नहीं क्या हो। अफ़सोस की बात है कि यह असम्भव है, नहीं तो बहुत मज़ा आता यह देखकर कि ये लोग कैसे हो जाते हैं। क्या सचमुच उन्हें मिनी-स्कर्ट के सिवा और कुछ भी नज़र नहीं आया? मैंने जैसे ही कामील चाचा को सूटकेस लिये पगडण्डी से आते देखा, फ़ौरन उनकी तरफ़ भागा। "सलाम," नाईला ने कहा और अपना हाथ मेरी ओर बढ़ाया। "तो तुम ऐसे हो।" मैं उससे कुछ नहीं कह सका, न ही उसकी तरफ़ दूसरी बार नज़र उठाकर देख सका। उस दिन मैं बस उन दोनों के बीच चुपचाप कामील चाचा के घर की ओर चलता रहा। मुझे लग रहा था जैसे मेरा गला रुंधा जा रहा हो। सांस लेने में इतनी मुश्किल हो रही थी कि मेरी आंखों में आंसू आ गये।

उस दिन से गायली में सब बदल गया। पहले कभी मुझे सुबह यूं ही घूमने की सूझती भी नहीं थी, पर अब हम तीनों साथ घूमते थे। मुझे मालूम हुआ कि सुबह-सवेरे समुद्र-तट पर यूं ही घूमना, रात भर मछलियां पकड़ने के बाद लौट रही मछुओं की लम्बी नावों को देखना या शाम को सूरज को डूबते देखने में कितना आनन्द आता है। नाईला के आने से पहले हम कभी इस तरह सैर को नहीं निकलते थे।

यह सच है कि न जाने क्यों मैं हर बार उदास हो उठता था, पर ज़्यादा नहीं, लेकिन यह उदासी भी सुखद लगती थी। अगर मैं कहीं जाता भी था, तो सिर्फ़ काम से, रोटी ख़रीदने, या दूधवाले के पास, या मछली पकड़ने, यूं ही घूमने निकलने का ख़याल ही नहीं आता था। अपनी सारी ज़िंदगी मैंने यहां गुज़ार दी, पर मुझे इस बारे में कुछ मालूम ही नहीं था, यह बड़ी हैरानी की बात है। लेकिन सबसे अच्छा तब लगता, जब हम शाम को घर लौटते। हम बत्तियां

न जलाते, पूनम के चांद से इतना उजाला रहता था कि हमें जुगनूं तक नज़र नहीं आते थे। नीचे बस चट्टानों पर छपाके मारती लहरों का मन्द शोर सुनाई देता और बगीचे में झींगुरों की झीं-झीं। सैर के बाद हम इतने थक जाते थे कि बालकनी में बस यूं ही चुपचाप बैठे रहते थे, किसी में दोबारा उठने की ताक़त न रहती। सबसे पहले नाईला ही उठती थी, पर उसके क़दमों की आहट मुझे एक बार भी सुनाई नहीं देती थी, जब वह संगीत का कोई रिकार्ड लगाती थी।

मैं सुबह तक उन्हें नाचते देख सकता था। इतना सुन्दर डांस करते थे वे कि कोई भी दाद दिये बिना नहीं रह सकता था: जब वे एक दूसरे के सामने रुकते, तो भी बहुत अच्छा लगता। साफ़ नज़र आता था कि वे डांस कर रहे हैं और रुके केवल इसलिए हैं, कि ऐसा क्षण आ गया है, जब उनके लिए तुरन्त न रुकना और एक दूसरे की ओर न देखना असम्भव हो गया है। नाईला के आगमन के बाद ही मुझे मालूम पड़ा कि कामील चाचा भी काफ़ी सुन्दर हैं और तभी से मैंने फ़ैसला कर लिया कि बड़ा होकर मैं उन जैसा ही बनूंगा – वैसा ही लम्बा, फुरतीला और पुष्ट कंधों व हाथोंवाला... वे बहुत सुन्दर ढंग से डांस करते थे और उन्हें देखकर मुझे बहुत आनन्द आता था। मैं उनके यहां से तभी जाता, जब दादी मुझे पुकारने लगतीं। रात को कभी-कभार नींद खुलने पर मुझे टाइपराइटर की खटखट सुनाई देती थी। कामील चाचा पहले भी बहुत काम करते थे, पर नाईला के आने के बाद से उतना नहीं कर पाते थे। सुबह जब मैं उनके यहां जाता, तो अकसर मुझे उनकी आंखें बिलकुल लाल और होंठ बिलकुल सफ़ेद नज़र आते। लेकिन घूमने वे हर हालत में जाते थे। वे दोपहर में दो-तीन घंटे सोते थे या सैर से लौटने के बाद शाम को झपकी लेते थे। वे हमारे किसी भी पड़ोसी के यहां नहीं जाते थे और न ही कोई उनके यहां आता था।

ऐसी बात नहीं थी कि उन्हें कोई पसंद नहीं करता था या उनकी इज्ज़त नहीं करता था। वे बस मितभाषी थे और बहुत काम करते थे, बस यही बात थी। लेकिन वैसे एक बात मैंने यह देखी कि रशीद और आदीला के यहां आने के बाद से कामील चाचा के साथ लोगों का बर्ताव कुछ ख़राब हो गया था। न जाने कब से, पर धीरे-धीरे हमारे सारे पड़ोसियों की दोस्ती रशीद के साथ बढ़ने लगी, वे सब

मामलों में उसी के पास सलाह करने के लिए जाने लगे। धीरे-धीरे उन्होंने कामील चाचा के यहां जाना और उन्हें अपने यहां बुलाना बिलकुल बंद कर दिया, यहां तक कि जन्म-दिन और शादी जैसे मौक़ों पर भी। कारण यही था कि वे अकेले ऐसे आदमी थे, जो रशीद के साथ न सिर्फ़ दोस्ती ही बढ़ाते थे, बल्कि हमारे दूसरे पड़ोसियों की तरह उससे बातचीत भी नहीं करते थे। वे उसके साथ रुखाई से बात करते थे, मानो वह कोई ग़ैर हो, और वह भी तब, जब रशीद ही उनके साथ पहले कोई बात छेड़ता। मैं महसूस करता था कि रशीद को यह बिलकुल पसंद नहीं आता है और उसे इससे ठेस भी लगती है। जब वे मिलते, तो साफ़ महसूस होता था कि रशीद की समझ में नहीं आ रहा है कि कामील चाचा क्यों, अकारण ही उसके साथ ऐसा व्यवहार करते हैं। आदीला को भी यह अच्छा नहीं लगता था। वह सबसे कहा करती थी कि कामील चाचा ज़िंदगी में कुछ नहीं बन पायेंगे, फिर कोई ऐसा आदमी कुछ बन भी कैसे सकता है, जब वह कमर कसकर मेहनत करने के बजाय अपने दिमाग़ में यही बात बिठा ले कि वह लेखक है और दिन-रात बेकार का काम करता रहे।

यह सुनकर रशीद ऐसे मुंह बनाने लगता था, मानो उसके पेट में दर्द हो रहा हो, फिर आदीला के चुप होते ही फ़ौरन उससे कहता कि उसे कामील चाचा के बारे में ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए और इस बात से कोई मतलब नहीं रखना चाहिए कि दूसरे लोग कैसे जीते हैं। क्या पता, कामील चाचा वास्तव में एक अच्छे लेखक बन जायें।

"वे तो शराबी ही बन सकते हैं या उससे भी कहीं बदतर," आदीला हर बार कहती। "खुद ही देख लोगे कि किस की बात सही निकलती है, मेरी या तुम्हारी।"

"तुम बेकार ऐसी बातें कहती हो," रशीद ठण्डी सांस लेकर कहता। "मैं तुम्हारे साथ बहस नहीं करूंगा, पर हमें ऐसी बातें करने की क्या जरूरत है। तुम भी बिगड़ने लगती हो और मैं भी। वे भले ही मेरे लिए ग़ैर हों, पर मेरा दिल उनकी खातिर दुखता है। फिर वे किसी का बुरा भी नहीं करते हैं, सिर्फ़ अपना नुक़सान करते हैं। चलो, कोई और अच्छी बात करें।"

समझ में नहीं आता कि आदीला क्यों कामील चाचा से इतनी नफ़रत करती है। जबसे नाईला आयी है, आदीला सिर्फ़ उसी की

बातें करती रहती है। हर बंगले में जा-जाकर खुसर-फुसर करती है। समझ में नहीं आता कि ये खबरें वह लेकर कहां से आती है! कहीं कामील चाचा के घर को दूरबीन लगाये तो नहीं देखती रहती? सब जानते हैं कि मेरी दादी को इधर की उधर लगाना पसंद नहीं है, न वे ऐसी बातें कभी सुनती हैं, न कहती हैं। पर आदीला ने तो दादी को भी कोई ऐसी बात बता दी है। मैं रोटी खरीद कर आया, तो देखा – दादी आदीला की ओर ऐसे देखे जा रही हैं, मानो उसने उन्हें सम्मोहित कर लिया हो, और वह जल्दी-जल्दी कहती जा रही थी:

"शादी! कैसी शादी? खुदा का शुक्र समझिये कि उन्होंने रजि-स्ट्री करा ली!" फिर मुझ पर नज़र पड़ते ही वह फ़ौरन चुप हो गयी। मैं उसके सामने मेज़ पर बैठ गया और उसके जाने का इंतज़ार करने लगा।

"वाह, कितने संवला गये हो तुम धूप में! और लम्बे भी। लेकिन, मेरे खयाल में कुछ दुबले भी हो गये हो! कहीं मुझे ही तो ऐसा नहीं लगता है?"

"शायद आप ही को ऐसा लगता है," मैंने कहा।

"पर तुम हमारे यहां क्यों नहीं आते हो? हमें तो हमेशा खुशी होती है तुम्हारे आने पर।"

"आऊंगा कभी," मैंने कहा और तुरन्त पछताया। मुझे कहना चाहिए था: 'क्योंकि तुम्हारे यहां अच्छा नहीं लगता!' या कहना चाहिए था: 'बहुत बुरा लगता है!' अफ़सोस की बात है कि मुझे फ़ौरन यह बात नहीं सूझी, खैर कोई बात नहीं, अभी कुछ और पूछेगी, तो यही जवाब दूंगा। कुछ ऐसा कि उम्र भर याद रखे। खिड़की में से क्या देख रही है यह? क्या बहुत दिलचस्प नज़ारा है कोई?!"

"वे आ गये! यहीं आ रहे हैं।" आखिर ऐसी क्या बात है, जो एक दूसरे को देखकर ये दोनों इतने खुश होते रहते हैं। यह तो खुशी के मारे झूम ही उठी है, वह भी कुरसी पर बैठी-बैठी। यह हर कोई नहीं कर सकता। यह क्या कहा इसने? अपने कानों पर विश्वास नहीं होता। 'मुन्ना'! बड़ी मुश्किल से मतली आते-आते रुकी। वह आ रहा है उसका 'मुन्ना'। इसे आखिर यहां से क्या चाहिए? बेहतर होगा, वक़्त रहते खिसक जाऊं यहां से। कामील चाचा शायद जाग गये होंगे।

मामलों में उसी के पास सलाह करने के लिए जाने लगे। धीरे-धीरे उन्होंने कामील चाचा के यहां जाना और उन्हें अपने यहां बुलाना बिलकुल बंद कर दिया, यहां तक कि जन्म-दिन और शादी जैसे मौक़ों पर भी। कारण यही था कि वे अकेले ऐसे आदमी थे, जो रशीद के साथ न सिर्फ़ दोस्ती ही बढ़ाते थे, बल्कि हमारे दूसरे पड़ोसियों की तरह उससे बातचीत भी नहीं करते थे। वे उसके साथ रुखाई से बात करते थे, मानो वह कोई ग़ैर हो, और वह भी तब, जब रशीद ही उनके साथ पहले कोई बात छेड़ता। मैं महसूस करता था कि रशीद को यह बिलकुल पसंद नहीं आता है और उसे इससे ठेस भी लगती है। जब वे मिलते, तो साफ़ महसूस होता था कि रशीद की समझ में नहीं आ रहा है कि कामील चाचा क्यों, अकारण ही उसके साथ ऐसा व्यवहार करते हैं। आदीला को भी यह अच्छा नहीं लगता था। वह सबसे कहा करती थी कि कामील चाचा ज़िंदगी में कुछ नहीं बन पायेंगे, फिर कोई ऐसा आदमी कुछ बन भी कैसे सकता है, जब वह कमर कसकर मेहनत करने के बजाय अपने दिमाग़ में यही बात बिठा ले कि वह लेखक है और दिन-रात बेकार का काम करता रहे।

यह सुनकर रशीद ऐसे मुंह बनाने लगता था, मानो उसके पेट में दर्द हो रहा हो, फिर आदीला के चुप होते ही फ़ौरन उससे कहता कि उसे कामील चाचा के बारे में ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए और इस बात से कोई मतलब नहीं रखना चाहिए कि दूसरे लोग कैसे जीते हैं। क्या पता, कामील चाचा वास्तव में एक अच्छे लेखक बन जायें।

"वे तो शराबी ही बन सकते हैं या उससे भी कहीं बदतर," आदीला हर बार कहती। "ख़ुद ही देख लोगे कि किस की बात सही निकलती है, मेरी या तुम्हारी।"

"तुम बेकार ऐसी बातें कहती हो," रशीद ठण्डी सांस लेकर कहता। "मैं तुम्हारे साथ बहस नहीं करूंगा, पर हमें ऐसी बातें करने की क्या ज़रूरत है। तुम भी बिगड़ने लगती हो और मैं भी। वे भले ही मेरे लिए ग़ैर हों, पर मेरा दिल उनकी ख़ातिर दुखता है। फिर वे किसी का बुरा भी नहीं करते हैं, सिर्फ़ अपना नुक़सान करते हैं। चलो, कोई और अच्छी बात करें।"

समझ में नहीं आता कि आदीला क्यों कामील चाचा से इतनी नफ़रत करती है। जबसे नाईला आयी है, आदीला सिर्फ़ उसी की

बातें करती रहती है। हर बंगले में जा-जाकर खुसर-फुसर करती है। समझ में नहीं आता कि ये ख़बरें वह लेकर कहां से आती है! कहीं कामील चाचा के घर को दूरबीन लगाये तो नहीं देखती रहती? सब जानते हैं कि मेरी दादी को इधर की उधर लगाना पसंद नहीं है, न वे ऐसी बातें कभी सुनती हैं, न कहती हैं। पर आदीला ने तो दादी को भी कोई ऐसी बात बता दी है। मैं रोटी ख़रीद कर आया, तो देखा – दादी आदीला की ओर ऐसे देखे जा रही हैं, मानो उसने उन्हें सम्मोहित कर लिया हो, और वह जल्दी-जल्दी कहती जा रही थी:

"शादी! कैसी शादी? ख़ुदा का शुक्र समझिये कि उन्होंने रजिस्ट्री करा ली!" फिर मुझ पर नज़र पड़ते ही वह फ़ौरन चुप हो गयी। मैं उसके सामने मेज़ पर बैठ गया और उसके जाने का इंतज़ार करने लगा।

"वाह, कितने संवला गये हो तुम धूप में! और लम्बे भी। लेकिन, मेरे ख़याल में कुछ दुबले भी हो गये हो! कहीं मुझे ही तो ऐसा नहीं लगता है?"

"शायद आप ही को ऐसा लगता है," मैंने कहा।

"पर तुम हमारे यहां क्यों नहीं आते हो? हमें तो हमेशा ख़ुशी होती है तुम्हारे आने पर।"

"आऊंगा कभी," मैंने कहा और तुरन्त पछताया। मुझे कहना चाहिए था: 'क्योंकि तुम्हारे यहां अच्छा नहीं लगता!' या कहना चाहिए था: 'बहुत बुरा लगता है!' अफ़सोस की बात है कि मुझे फ़ौरन यह बात नहीं सूझी, ख़ैर कोई बात नहीं, अभी कुछ और पूछेगी, तो यही जवाब दूंगा। कुछ ऐसा कि उम्र भर याद रखे। खिड़की में से क्या देख रही है यह? क्या बहुत दिलचस्प नज़ारा है कोई?!"

"वे आ गये!.. यहीं आ रहे हैं।" आख़िर ऐसी क्या बात है, जो एक दूसरे को देखकर ये दोनों इतने ख़ुश होते रहते हैं। यह तो ख़ुशी के मारे झूम ही उठी है, वह भी कुरसी पर बैठी-बैठी। यह हर कोई नहीं कर सकता। यह क्या कहा इसने? अपने कानों पर विश्वास नहीं होता। 'मुन्ना'! बड़ी मुश्किल से मतली आते-आते रुकी। वह आ रहा है उसका 'मुन्ना'। इसे आख़िर यहां से क्या चाहिए? बेहतर होगा, वक़्त रहते खिसक जाऊं यहां से। कामील चाचा शायद जाग गये होंगे।

"सलाम! कैसी सेहत है आपकी?" रशीद ने भीतर आकर मेरी दादी से पूछा। "आपकी उम्र में तो बुढ़ापे का नाम तक जबान पर लाना बुरा लगता है! कैसा बुढ़ापा! यही तो वक़्त है आपकी ज़िंदगी का, जब आपको बेटे-पोतों से घिरी रहकर खुश होना चाहिए और आप हैं कि बुढ़ापे की दुहाई दे रही हैं! और तुम भी तो, मेरे प्यारे दोस्त, सयाने हो गये हो! मेहमान ने दरवाज़े पर क़दम रखा है और तुम घर से खिसकने लगे! भला कोई ऐसा भी करता है?"

"कामील चाचा मेरा इंतज़ार कर रहे हैं।"

"उनसे मेरा सलाम कहना। वे मुझे बहुत अच्छे लगते हैं, बहुत ही क़ाबिल, अक़्लमंद और शान्त आदमी हैं, बिलकुल गऊ हैं..."

कहीं मैंने यह ग़लत तो नहीं सुना? लगता तो नहीं। आदीला का चेहरा भी आश्चर्य से लटक गया है।

"...कितने अफ़सोस की बात है कि मेरी उनकी पत्नी से जान-पहचान नहीं हुई। यह अच्छी बात नहीं है। बग़ल में रहते हैं, पड़ोसी हैं, पर अभी तक एक दूसरे से मिले भी नहीं। मैं मानता हूं कि कुछ क़सूर मेरा भी है, पर कामील का भी क़सूर है इसमें। बेशक उनकी बीवी से मैं मिला नहीं, लेकिन वे मुझे एक भली और नेक इनसान नज़र आती हैं। तुम यही कहना उनसे कि रशीद चाचा कहते हैं कि वे एक भली और नेक इनसान हैं। याद रखोगे ना?"

"पहनती-ओढ़ती भी अच्छा हैं वे," आदीला बोली। "पर यह समझ में नहीं आता कि उन्हें इतनी झंझट में पड़ने की क्या ज़रूरत है, जब यहां की आबोहवा में वे बिलकुल नंगी भी घूम सकती हैं। उन्हें भी अच्छा लगेगा और दूसरे मर्दों को भी।"

"तुम ऐसी बातें इसलिए कहती हो," रशीद ने प्यार से कहा, "कि तुम्हारा दिल बड़ा और साफ़ है। तुम दिल खोलकर लोगों का भला करने को तैयार रहती हो... इसीलिए तुम सब लोगों को अपने पैमाने से नापती हो... लेकिन ऐसा करना हमेशा तो अच्छा नहीं होता है। कभी-कभी आदमी को सहन भी करना चाहिए, ख़ास तौर से नौजवानों के मामले में। उनका अपना पैमाना है, हमारा अपना! एक बात मैं तुम्हें और बताना चाहूंगा, तुम मुझे जानती हो, मैं कभी ग़लती नहीं करता। शरीफ़ मां-बाप की बेटी चाहे जैसे भी कपड़े क्यों न पहने,

वह हरगिज़ ख़राब नहीं हो सकती। ख़ास तौर से ऐसे बाप की इकलौती बेटी!.."

"कैसे बाप की?" आदीला ने जानना चाहा। "उसकी, जिसने शादी के बिना बेटी को घर से जाने दिया और दो महीनों में एक बार भी उससे मिलने का ख़याल तक दिमाग़ में नहीं लाया?! जैसा बाप, वैसी सन्तान।"

"बहुत बेसब्र हो तुम," रशीद ने खेदपूर्वक कहा। "सब ठीक हो जायेगा! बाप अपनी इकलौती बेटी के छोटे-मोटे क़सूर हमेशा माफ़ कर देता है। शादी हुई या नहीं हुई, इससे फ़र्क़ ही क्या पड़ता है? बच्चे सही-सलामत रहें, यही सबसे अहम है। आने के लिए उन्हें फ़ुरसत नहीं मिल पाती है। वे बहुत बड़े सरकारी अफ़सर हैं। अगर वे अपने निजी कामों से हर जगह जाने लगें, तो फिर दूसरे लोग क्या करेंगे? तुमने कभी यह भी सोचा?"

"आख़िर कौन है उसका बाप? बड़े आये सरकारी अफ़सर!.."

"ऐसी बातें मत कहो," रशीद ने आदीला से कहा। "मेहर-बानी करके फ़ालतू बातें मत करो। मैं कहता हूं, वह बड़े सरकारी अफ़सर हैं, तो इसका मतलब है कि वे हैं, मैं वही कहता हूं, जो अच्छी तरह से जानता हूं..."

मैंने रशीद के पीछे से खिसकने की कोशिश की, पर उसने देख लिया और मुझसे बोला:

"मेरे ख़याल में मुझे भी तुम्हारे साथ कामील के यहां चलना चाहिए। बंगले आख़िर इसीलिए तो होते हैं कि लोग पहले से ख़बर किये बिना एक दूसरे के यहां यूं ही आयें-जायें। मैं उन्हें शाम को अपने यहां आने की दावत दूंगा, साथ बैठकर टेलीविज़न देखेंगे। आजकल 'वसन्त के सत्तरह क्षण' सीरियल फ़िल्म दोहरायी जा रही है। अच्छी फ़िल्म है। उस पर राजकीय पुरस्कार आख़िर यूं ही तो दिया नहीं गया है। तुम भी आ जाना... उसके हीरो के बढ़िया अभिनय की ख़ातिर भी उसे दूसरी बार देखा जा सकता है। तुम्हारी उम्र के लड़कों के लिए वह ख़ास तौर से फ़ायदेमंद है।"

मैंने देखा कि ज्यों-ज्यों हम कामील चाचा के घर के नज़दीक पहुंचते गये, त्यों-त्यों रशीद अधिक ऊंची आवाज़ में और स्नेहपूर्वक बोलने लगा। सीढ़ियों पर बातें करते-करते वह मेरे गले में इस तरह हाथ

9-0300

डालकर मुझ पर झुक गया, मानो मैं बहरा होऊं या मुझे गुमचोट लगी हो।

मैं यक़ीनी तौर पर यह कह सकता हूं कि रशीद को देखते ही कामील चाचा किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गये थे। उन्होंने उससे दुआ-सलाम तो की, पर बैठने को नहीं कहा और मेरी तरफ़ आश्चर्य से इस तरह देखा, मानो कहना चाहते हों: 'किसे ले आये तुम?' कामील चाचा ने रशीद को नाईला से मिलाया, पर उसके घर रंगीन टेलीविज़न देखने जाने से इनकार कर दिया, बोले, हम सब को शाम को लाइटहाउस के इनचार्ज के यहां जाना है। रशीद तुरन्त कामील चाचा की बड़ाई करने लगा कि वे हमें नयी-नयी जगहों की सैर कराने के लिए अपने साथ ले जाते हैं और फिर उसने बताना शुरू किया कि अपनी जवानी में और अब भी उसे सागर-तट पर टहलना, लाइटहाउसों में जाना, प्रकृति की गोद में रहना कितना अच्छा लगता है... हम तीनों का मूड फ़ौरन ख़राब हो गया, क्योंकि अपने क़िस्से सुनाने शुरू करने से पहले रशीद एक कुरसी पर जम गया, हालांकि किसी ने भी उससे बैठने को नहीं कहा था। अब हमें यह साफ़ मालूम हो गया कि उसका यहां से जल्दी जाने का कोई इरादा नहीं है।

लगता है वासिफ़ को जहाज़ियों की क़मीज़ पहने अजनबी के धौंस जमाने का मौक़ा नहीं मिलेगा – उसके कांटे में मछली फंस गयी है, वह भी इस तरह कि तिरेंदा सिर्फ़ कांपा ही नहीं, बल्कि झटके से पानी में डूब गया। तिरेंदे हमारे अपने बनाये हुए हैं। कॉर्क की लम्बी भूरी पट्टियों से उनके छोरों पर दो छेद करके वासिफ़ उन्हें बनाता है। यहां के मछुआरे उन्हें अपने जालों में बांधा करते हैं। वासिफ़ कहता है कि कॉर्क से बने तिरेंदे फ़ैक्टरियों में बने तिरेंदों से कई गुना बेहतर होते हैं, क्योंकि उनकी प्लास्टिक की बू से मछलियां डर जाती हैं। तिरेंदा पानी में पूरी तरह डूब गया, लगता है कोई बड़ी मछली फंसी है। मछली ने चारा पकड़ लिया है। सरकण्डे की बनी बंसी झुक गयी, बस अब फंसने ही वाली है कांटे में। बिलकुल ठीक किया! उसने बंसी पटककर डोरी पकड़ ली है और उसे खींच रहा है। बस अब समुद्री शैवाल का बड़ा-सारा गुच्छा निकलेगा और जहाज़ी क़मीज़वाले के ज़ोरदार धौल पड़ेगी। वासिफ़ बेशक तैयार हो चुका है। अरे, यह क्या? पानी में से आधे धड़ तक नुकीली थूथनी बाहर निकली हुई है... वासिफ़ मदद करने को लपककर उसके पास जा पहुंचा। "धन्यवाद," वह बोला, "मैं अकेला ही खींच लूंगा इसे बाहर।" बड़ा शिष्ट है, पूरा ज़ोर लगाकर खींच रहा है, पर धन्यवाद कहना नहीं भूला। स्टर्जियन मछली है! ऐसे बाहर आ रही है, जैसे लिफ़्ट में सवार हो! कहीं कांटे से छूटकर न भाग जाये! आ गयी! यह रही! स्टर्जियन का बच्चा है कोई पांच किलो का। कुछ समझ में नहीं आता। इस इलाक़े में कभी किसी ने बंसी से स्टर्जियन नहीं पकड़ी है, इतना मुझे पक्का मालूम है। मेरे दोस्तों ने ही क्या, किसी बड़े ने भी नहीं। दो-तीन बार कार्प तो फंसी है, पर स्टर्जियन कभी नहीं! वासिफ़ का चेहरा फक हो गया, लपककर उसने स्टर्जियन के लिए बालटी में पानी बदल दिया। लेकिन यह जहाज़ियों की क़मीज़वाला तो जैसे रोज़ ही स्टर्जियन पकड़ता है। पहले उसने कांटा निकाला, फिर मछली की पूंछ पकड़-कर उसे उठाया, बहुत शान्ति से, बिना हड़बड़ाये। फिर उसने मुझ पर नज़र डाली, मानो कह रहा हो: लो, देख लो, जी भरकर! मछली क्या मच्छ है! इसमें कोई शक नहीं, थूथनी उसकी शार्क जैसी लगती है और धड़ हलके मटमैले रंग का, मानो किसी धातु की बनी हो। मच्छ को देखकर हैरानी होती है: हम यहां लगभग रोज़ाना ही आते हैं सुबह, पर ऐसी मछली एक बार भी नहीं फंसी। थोड़ा बुरा भी लगने लगा। पर वह जहाज़ियों की क़मीज़वाला तो मेरी तरफ़ देखे जा रहा है, मानो मुझसे बधाई पाना चाहता हो।

"बहुत बड़ी पकड़ी, नब्बे सेंटीमीटर से कम लम्बी नहीं होगी, शायद एक मीटर ही निकले!"

"बहुत भारी है, मुझे तो डर था कि कहीं डोरी न टूट जाये इसे खींचते वक़्त! बड़ा दुख होता, अगर टूट जाती तो," उसने अन्तिम शब्द मेरी ओर प्रश्नात्मक दृष्टि डालते हुए कहे। मैं उसकी बात का जवाब देना चाहता था, पर मौक़ा नहीं मिला।

"डोरी टूटेगी कैसे, जब वह नाइलॉन की बनी है। यह तो हर बेवक़ूफ़ भी जानता है।" डोरी को लेकर यह वासिफ़ इतना नाराज़ क्यों हो रहा है? "बोलना भी ज़रा धीरे चाहिए। तुमने पकड़ ली

मछली, तो दूसरों को भी पकड़ने दो। बेहतर होगा, चुप ही रहो!" मैं होता, तो कभी चुप न रहता। मैंने तो सोचा था कि वह अपनी स्टर्जियन लेकर चला जायेगा। अब देखता हूं ज़रा, वासिफ़ क्या कहता है। लेकिन वह तो नहीं गया, बस उसने मेरी ओर आश्चर्य से देखा, वासिफ़ की ओर नहीं, मेरी ओर, मानो मैं ही उस पर चिल्लाया होऊं।

हमने स्टर्जियन को मुंह के बल बालटी में डालकर तिरपाल के गीले टुकड़े से ढक दिया। मछली ने पूंछ के झटके से उसे एक ओर फेंक दिया। हमें बालटी पर कुछ पत्थर रखने पड़े, तब जाकर वह कुछ शान्त हुई।

मैंने फिर कांटा घुमाकर दूर फेंका और बैठा-बैठा सोचने लगा – अगर मैं भी एक स्टर्जियन फांस लूं तो कैसा रहे! मुझे आज तक कभी स्टर्जियन पकड़ने की इच्छा नहीं हुई थी, इच्छा तो क्या, कभी ख़याल भी नहीं आया था कि वह ऐसे पकड़ी जा सकती है। मैं तो हर छोटी बुलहैड या स्प्रैट पकड़ने पर बहुत खुश होता था, पर आज तो मुझे भी स्टर्जियन पकड़ने की इच्छा होने लगी... शायद पकड़ ही लूं। इस जहाज़ियों की क़मीज़वाले ने कोई जादू-टोना किये बिना मेरे सामने ही एक पकड़ी तो है... वह फिर मेरी तरफ़ देख रहा है:

"एक केंचुआ और ले लूं?"

तो क्या यह हर बार मुझसे पूछता ही रहेगा?

"धन्यवाद।" यह इतना शिष्ट क्यों है? हद से ज़्यादा। डिब्बे में से एक केंचुआ उठाकर वह उसे देर तक देखता रहा। मैंने सोचा, कहीं उसे कष्ट देने के लिए उससे क्षमा-याचना तो नहीं कर रहा है, फिर उसने केंचुए को कांटे पर लगा दिया। वासिफ़ तुरन्त उठकर उसके पास जा पहुंचा। मैंने सोचा कि अब तो वह बात करने के लिए उसके धौल जमा ही देगा। लेकिन वासिफ़ ने पास आकर अपनी बंसी उसकी ओर बढ़ायी और बोला:

"चलो बंसियां आपस में बदल लें?"

"किसलिए?"

"यूं ही।"

"नहीं। मुझे यह पसंद नहीं है।"

"तो फिर धौल लगाऊं क्या? बंसियां किसकी हैं? यही बहुत समझ कि मैं तुझे अपनी बंसी लेने दे रहा हूं।"

उसने बंसी वासिफ़ को दे दी और मेरी तरफ़ देखा। मेरी तरफ़ क्यों देखता है, बेहतर होगा वासिफ़ की तरफ़ देख।

"चल, जगह भी बदल लें! उठ!"

"क्या जगह भी तुम्हारी है?"

"हां मेरी है। चल, भाग यहां से।"

मेरी समझ में नहीं आता कि यह अपनी मछली लेकर चला क्यों नहीं जाता? कहीं यह डरता तो नहीं कि वासिफ़ इसे स्टर्जियन ले जाने को मना कर देगा? निश्चित है, वह उसे नहीं ले जाने देगा। या फिर उसे एक तिहाई ही देगा। कहेगा, बराबर बांटने का नियम है। हम आपस में हमेशा सब बराबर बांट लेते हैं, लेकिन यह तो हमारे तिगड्डे में शामिल नहीं है। फिर भी वह नहीं गया। वासिफ़ मेरे पास आ बैठा। अब देखना है, नयी जगह और नयी बंसी से उसकी क़िस्मत बदलती है या नहीं। वासिफ़ अब सोच रहा है कि यह बंसी शुभ है, क्योंकि उससे स्टर्जियन पकड़ी जा चुकी है। क्या यह कोई शकुन होता है? वासिफ़ से पूछना पड़ेगा। वैसे आज ऊब चुका हूं मैं शकुनों और अपशकुनों के बारे में सोच-सोचकर। यह अच्छी बात है कि मैं उनमें विश्वास नहीं करता। और कभी करूंगा भी नहीं, नहीं तो देखिये, यह उल्लूवाला क़िस्सा मेरे दिमाग़ से किसी तरह निकल ही नहीं रहा है। इससे ज़्यादा बेवक़ूफ़ी की बात शायद और कुछ हो ही नहीं सकती। यह अंधविश्वास है। अतीत के अंधे युग का अवशेष है।

हमने इतिहास में पढ़ा था कि पुराने ज़माने में लोग पुच्छल तारों से डरा करते थे। कहते थे, उनके कारण विपत्तियां आती हैं। यह अच्छा है कि आजकल इस अपशकुन में कोई विश्वास नहीं करता। पिछले साल, जब पुच्छल तारा दिखाई दिया था, मैंने किसी के मुंह से विपत्ति आने की भविष्यवाणियां नहीं सुनी थीं। और ऐसा कुछ हुआ भी नहीं था। भला मैं सुबह दादी को यह बात बताना क्यों भूल गया?! यह एक पक्का सबूत होता, विज्ञानसम्मत तथ्य, पर मैंने इसके बजाय कामील चाचा का ज़िक्र छेड़ दिया। हां, याद आ गया। वैसे इसमें कोई बुरी बात नहीं है, मैं यह अच्छी तरह जानता हूं, लेकिन न जाने क्यों मुझे बुरा लगता है, मानो मैंने उनके साथ कोई बुराई या अन्याय किया हो। मैं जानता हूं कि ये विचार मूर्खतापूर्ण हैं, पर कर कुछ नहीं पाता, बस सोचता ही रहता हूं। औरों के बारे में मैं कुछ नहीं कह

सकता, पर अपने आपको मैं किसी बारे में सोचने से रोक ही नहीं पाता। कभी-कभी कोई अच्छी बात सोचने को दिल करता है, पर दिमाग में तरह-तरह की बुरी बातें ही आती रहती हैं। मिसाल के तौर पर कामील चाचा को ही लिया जा सकता है। वे किसी चीज़ के बारे में नहीं सोचना चाहते हैं, तो नहीं सोचेंगे, वे अपने आपको मजबूर कर सकते है। उनका काम करने का ढंग भी कैसा है? मैं उनके उस काम की बात नहीं कर रहा हूं, जो वे इंजीनियर की हैसियत से करते है, वहां उन्हें तनख्वाह आखिर यूं ही थोड़े ही मिलती है, बल्कि उस काम के बारे में, जो वे घर पर, टाइपराइटर पर करते हैं। वे किसी टाइपिस्ट लड़की की तरह तो काम करते नहीं हैं, जो कोई भी काम उसे दिया जाये, बिना सोचे-समझे खटाखट टाइप किये चली जाती है। वे कुछ टाइप करने से पहले थोड़ी देर सोचते हैं। उनकी जगह मैं होऊं, तो कभी अपने आपको सोचने के लिए मजबूर न कर सकूं, ऊब जाऊं।

वे दिन-रात सोच-सोचकर टाइप करते हैं, पर कोई उसे छापता नहीं। उनके पास अपनी रचनाओं की पांच-छः फ़ाइलें जमा हो चुकी हैं, लेकिन उनमें से लगभग सभी प्रकाशन-गृहों ने अस्वीकार कर दी हैं। पर वे फिर भी काम किये जा रहे हैं। हर शाम को शुक्रवार और शनिवार को तो पूरी-पूरी रात और सुबह तक। पहले वे अपनी रचनाएं अकसर नाईला को पढ़कर सुनाया करते थे, फिर धीरे-धीरे ऐसा कम होता गया और अन्त में बंद ही कर दिया। मुझे याद है, ऐसा किस दिन हुआ। उस दिन, जब मैं उनके घर के पास पहुंचा, तो मैंने उन्हें ज़ोर-ज़ोर से पढ़ते हुए सुना। उनका पढ़ने का ढंग बहुत अच्छा है। मुझे बहुत अच्छा लगा। उनकी आवाज़ भी अच्छी है, रेडियो और टेलीविज़न के उद्घोषकों से बहुत अच्छी। वे बैठे हुए थे और नाईला उनकी गोद में बैठी सुन रही थी।

नाईला कामील चाचा की गोद में और उनके गले में एक हाथ डाले बैठी थी, इसके बावजूद वे सदा की तरह सधे और शान्त स्वर में पढ़ रहे थे। ज़ाहिर है, मैंने कुछ न देखने का ढोंग किया। नाईला ने फ़ौरन उठकर मुझे चाय दी। मैंने चाय पीने से इनकार कर दिया और कामील चाचा से कहा कि वे मेरी ओर ध्यान न दें। मुझे भी सुनने की इच्छा हो रही थी। उन्होंने सहमति में सिर हिलाया और

मेज़ से पन्ने उठाकर फिर पढ़ना शुरू कर दिया। मुझे सुनना दिलचस्प लग रहा था। सबसे अद्भुत बात तो यह थी कि उसमें किसी भी साहसिक कार्य या घटनाओं का ज़िक्र नहीं था, फिर भी न जाने क्यों, सब रोचक लग रहा था। मुझे उसमें से युद्ध के दौरान एक व्यक्ति के साथ घटी घटना याद रह गयी। मुझे तब तक मालूम न था कि युद्ध के वर्षों में बाकू में उक्राइन से बहुत सारे शरणार्थी आये थे और उक्राइन के फ़ासिस्टों से मुक्त किये जाने तक उन्हें वहां हर घर में रखा गया था। एक परिवार को उस व्यक्ति के घर में रखा गया था, मुझे अब याद नहीं रहा कि उसका नाम क्या था और पेशे से वह कौन था। एक बार शाम को जब वह काम से घर लौट रहा था, तो अचानक उसे सड़क के नुक्कड़ पर बियर बिकती नज़र आ गयी। उन दिनों बाकू के लिए यह बहुत ही विरली बात थी। काम के बाद थककर निढाल हो जाने और भूखे होने के बावजूद वह लाइन में लग गया। लाइन बहुत लम्बी थी, इसलिए मौक़ा पाकर वह पास की एक दुकान में भागकर गया और एक बड़ी बोतल ख़रीदकर ले आया, जिसमें ढाई लीटर बियर आ सकती थी। वह काफ़ी देर से घर लौटा। उस उक्राइनी के सिवा, जो उनके यहां रह रहा था, बाक़ी सब लोग सोये हुए थे। उक्राइनी को बियर देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ। उसने कहा कि दो साल से वह बियर का स्वाद तक भूल चुका है। उन दोनों ने मिलकर पूरी बोतल पी डाली और वह उन्हें बुरी तरह चढ़ गयी। सिर्फ़ ढाई लीटर बियर! वे इतने कमज़ोर हो गये थे और पीने के बिलकुल आदी नहीं रह गये थे। पीते समय उक्राइनी उस व्यक्ति को यह सुनाता रहा कि युद्ध छिड़ने तक उसका परिवार कैसे रह रहा था, उनका घर और बगीचा कैसे थे और वह क्या काम करता था। इतनी रात होने के बावजूद वे दोनों बैठे बातें करते रहे कि युद्ध कितना भयानक होता है, उसके कारण लोगों को कितने कष्ट भोगने पड़ चुके हैं और कितने अभी भोगने पड़ेंगे। सोने से पहले उक्राइनी ने उससे पूछा कि बियर कितने की आयी है और उसे अपने हिस्से के पैसे दे दिये। उसके बाद लड़ाई के दौरान और उसके समाप्त होने पर भी उस व्यक्ति के साथ अनेक दिलचस्प घटनाएं घटीं। एक बार तो वह मरते-मरते बचा। मुझे सारी घटनाएं याद नहीं रहीं। शरणार्थी काफ़ी अरसे पहले अपने-अपने घर लौट गये, लेकिन फिर भी वह व्यक्ति समय-समय पर यह

सोचता रहा कि युद्ध मनुष्यों को [illegible], साथ ही उसे न जाने क्यों यह भी याद आता रहा कि उसने उस समय उक्राइनी से ब्रियर के पैसे लिये थे। मुझे लगा कि उसे सचमुच बहुत अफ़सोस होता था, हालांकि कहानी में इस बारे में एक भी शब्द नहीं कहा गया था। कामील चाचा एकाएक पढ़ते-पढ़ते रुक गये, क्योंकि नाईला ने उन्हें टोक दिया था। उसने उनसे कोई प्रश्न पूछा, शायद कहानी में कोई बात उसकी समझ में नहीं आयी थी। कामील चाचा को प्रश्न शायद बेतुका या बुरा भी लगा। मैं तो आखिर उन्हें अच्छी तरह जानता था। उनका चेहरा तुरन्त उतर गया और उन्होंने उसी समय उत्तर भी नहीं दिया। फिर उन्होंने कहा कि यह सब बकवास है, वे खुद बहुत ही स्वार्थी हैं और हमें बेकार की बातें सुनने के लिए मजबूर करते हैं। नाईला ने बुरी तरह घबराकर उनकी तरफ़ देखा, मैं फ़ौरन उठ खड़ा हुआ और बोला कि मेरे घर जाने का वक़्त हो गया है, हालांकि दादी ने मुझे आवाज़ नहीं दी थी। जब मैं सीढ़ियों से नीचे उतर रहा था, तो मैंने नाईला को पूछते सुना :

"तुम्हें क्या मुझसे इसलिए प्यार हो गया था कि मैं साहित्य के बारे में कुछ जानती हूं?"

कामील चाचा ने क्या जवाब दिया, मैं सुन नहीं पाया।

अगले दिन हम तीनों ने समुद्र में नहाने के लिए जाने की ठानी। हम घर से बाहर निकले ही थे कि रशीद ने हमें आवाज़ दी। वह भी हमारे साथ जाना चाहता था। पीछे ही पड़ गया है यह! यह अच्छा हुआ कि उसका ज़्यादा देर इंतज़ार नहीं करना पड़ा, क्योंकि उसका पूरा परिवार तैयार था। रशीद एक बहुत बड़ा बैग लिये था, आदीला बच्चे को गोदी में उठाये थी, दूसरे बच्चों के हाथों में भी कुछ पोटलियां और एक बड़ा-सा छाता था। रशीद वह छाता हर रविवार को सागर-तट पर लेकर जाता था। उनका पूरा परिवार उसकी छाया में लेटा रहता था। छाता सुन्दर था, तट पर सबका ध्यान उसकी ओर जाता था, हमारे बंगलोंवाले पड़ोसियों का नहीं, वे तो उसके आदी हो चुके थे, शहर से रविवार को तट पर आनेवाले लोगों का। छाता अगर इतना सुन्दर न होता, तो उसे साथ लेना ही बेकार होता, क्योंकि हमारे तट पर लोहे के खम्भोंवाले चार शेड बने हुए थे और वे लगभग हमेशा खाली पड़े रहते थे। बेशक, मैं इसके खिलाफ़ नहीं

था कि गायलीवाले सभी लोग इस तट पर आयें, लेकिन हमारे ही साथ आना तो ज़रूरी नहीं था न। रशीद किसी को कुछ कहने का मौक़ा नहीं देता, एक मिनट के लिए भी चुप नहीं होता। उसने मुझसे कुछ पूछा, तो मैंने उसे दो या तीन बार जवाब दिया और फिर उससे कुछ दूर खिसक गया। पर नाईला और कामील चाचा लगभग सारे समय चुप रहे। तट पर वे लोग अकसर मज़ाक़ करते रहते थे, कामील चाचा कुछ मज़ेदार क़िस्से सुनाते रहते थे, पर आज वे दोनों ही चुप बैठे थे।

वैसे सागर-तट के लिए सबसे अच्छा मौसम था उस दिन। जैसे किसी ने खास तौर से आसमान में बादल लटका दिये थे। धूप उनमें से वैसे ही छनकर आ रही थी, जैसे दूधिया शीशे में से आती है। तपन थी, पर ज़्यादा तेज़ नहीं, चमड़ी नहीं झुलस रही थी, चश्मे के बिना आंखों को सुहावनी लग रही थी। मैंने किनारे के पानी में हाथ डालकर देखा, वह गुनगुना था। कितना अच्छा हो, अगर किनारे से दूर भी पानी ऐसा ही गुनगुना हो।

मैं पहले से ही समझ गया था कि आज तट पर जाने का कोई फ़ायदा नहीं होगा। नाईला मुड़कर किनारे पर आ गयी। कामील चाचा उसके पीछे से देखते-देखते जेलीफ़िश के कारण पानी से निकल आये। नाईला जेलीफ़िश से डरती है, उसे उनसे घिन भी होती है। वे बहुत चिकनी और लसलसी होती हैं, और जब उनकी भरमार हो जाती है, तो लगता है, जैसे किसी ने मीटजेली बनाकर समुद्र में उलट दी हो। मैं और कामील चाचा उनकी ओर ध्यान नहीं देते, हालांकि बुरा लगता है, पर जेलीफ़िश को छूते ही नाईला के तो सारे बदन में झुरझुरी होने लगती है।

इन गर्मियों में पिछले साल के मुक़ाबले बहुत ही ज़्यादा जेलीफ़िश थीं। पहले गायली में ही क्या, सारे कास्पियन सागर में एक भी जेलिफ़िश नहीं थी। वे दो साल पहले यहां पहली बार दिखाई दी थीं। मेरे ख़याल में लोगों को तब थोड़ी खुशी भी हुई थी कि अब दुनिया के दूसरे अच्छे सागरों और महासागरों की तरह हमारे कास्पियन में भी जेलीफ़िश हो गयी हैं। लेकिन यह तब की बात है, जब हफ़्ते भर में एक या दो जेलीफ़िश नज़र आती थीं। पर किसी ने भी आशा नहीं की थी कि उनकी संख्या हर साल बराबर बढ़ती ही जायेगी और

इतनी हो जायेगी कि वे किनारे पर भी उ[illegible]गी। बस, तेज तूफान आने के बाद ही वे कई दिनों तक नजर नहीं आती हैं।

मैंने कामील चाचा से पूछा कि ये जेलीफिश कहां से आयी है और क्या इनसे किसी तरह छुटकारा नहीं पाया जा सकता। उन्होंने बताया कि वे शायद संयोगवश ही यहां आ पहुंची है। बोल्गा-दोन नहर से गुजरनेवाले किसी जहाज के पेंदे में वे चिपक गयी होंगी, या फिर काले सागर या भूमध्य सागर से आनेवाले जहाज के साथ यहां आ पहुंची होंगी। यहां की परिस्थितियां उनके लिए अनुकूल सिद्ध हुईं और उन्होंने शीघ्र ही अपने को उनके अनुसार ढाल लिया। जेलीफिश जहां से आयी है, वहां शायद कुछ मछलियां और डोल्फिनें उनको नष्ट करने लगी होंगी, लेकिन यहां तूफान को छोड़कर, जो उन्हें नष्ट नहीं करता, केवल कुछ समय के लिए खुले समुद्र में खदेड़ देता है, उन्हें अपना कोई ऐसा शत्रु नहीं मिला। अब उनकी संख्या तब तक निरन्तर बढ़ती ही जायेगी, जब तक कि जीवविज्ञानी उसे नियंत्रण में रखने का कोई उपाय नहीं खोज लेते।

कामील चाचा ने कहा कि ऐसे चमत्कार लोगों में भी देखने में आते हैं। पहले मैंने सोचा कि वे मजाक कर रहे हैं, फिर देखा कि वे तो गम्भीरता से बता रहे हैं कि लोगों में भी कुछ ऐसी किस्म के होते हैं, जो दूसरे लोगों की अपेक्षा अपने लिए बेहतर वातावरण ढूंढ लेते हैं और शीघ्र ही स्वयं को उसके अनुसार ढाल लेते हैं। उदाहरण के लिए, कोई आठ वर्ष पहले, जब उन्होंने इंस्टीट्यूट में प्रवेश लिया और बाद में जब उसमें पढ़ रहे थे, तब कोई भी विद्यार्थी किसी के भी यह कहने पर उस पर कभी विश्वास न करता कि कोई प्रोफ़ेसर प्रवेशार्थियों या अपने विद्यार्थियों की परीक्षाएं लेते समय उनसे रिश्वत लेता है। ऐसे प्रोफ़ेसर तब वास्तव में थे ही नहीं, फिर न जाने कहां से आ गये। शुरू में इक्के-दुक्के ही थे, फिर पता चला कि बहुत-से इंस्टीट्यूटों में रिश्वत ली जाती है। अगर अधिकारी उनके साथ सख्ती से पेश न आये होते, तो पता नहीं इसके क्या परिणाम निकलते। कामील चाचा ने कहा कि देखने में इन रिश्वतखोरों और सामान्य लोगों में कोई अन्तर नहीं दिखाई देता था, जब तक कि उनका भंडाफोड़ नहीं किया गया। इससे पहले वे मीटिंगों, सम्मेलनों में अपने भाषणों में बहुत अच्छी-अच्छी बातें किया करते थे। मुझे तुरन्त टेलीविजन पर दिखाये गये एक भूतपूर्व रिश्वतखोर प्रोफ़ेसर पर चलाये गये मुकदमे का दृश्य याद आ गया। वह कामील चाचा के इंस्टीट्यूट में ही पढ़ाता था। उसके सामने अभियोग पक्ष के वकील और गवाहों ने सब सिद्ध करके दिखा दिया, पर उसके चेहरे पर तो शिकन भी नहीं आयी थी। सुनवाई खत्म होने पर वह खड़ा होकर बोला कि ऐसा कुछ नहीं हुआ, वह पूर्णतः निर्दोष है, उसे बेकार परेशान किया गया है, वास्तव में वह जीवन भर युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के अपने कर्तव्य का ही पालन करता रहा है। कामील चाचा ने बताया कि ऐसे लोग हर जगह मौजूद हैं, सिर्फ़ इंस्टीट्यूटों में ही नहीं, लेकिन सज्जनता का ढोंग रचने में वे इतने माहिर हो गये हैं कि उन्हें पहचान पाना साल-ब-साल ज्यादा मुश्किल होता जा रहा है। देखने में वे आम आदमी जैसे नजर आते हैं, कपड़े भी आम आदमी जैसे पहनते हैं, टाई डाटे रहते हैं, थियेटर जाते हैं, समाचारपत्र पढ़ते हैं, दूसरे सभी लोगों की तरह। रशीद बोला कि सभी जानते हैं कि वह एक नेक आदमी है, उसने कभी अपने जीवन में किसी मक्खी को भी चोट नहीं पहुंचायी है, पर उन नीच लोगों को, जिनका कामील चाचा ने जिक्र किया था, वह खुद गोलियों से भून डाले। उन्हें दीवार से पीठ सटाकर खड़ा होने को मजबूर करके एक-एक को गोलियों से भून डाले। कामील चाचा हंसकर बोले कि उन्हें गोली मार देने से हालत नहीं सुधरेगी।

"तो फिर कैसे सुधर सकती है?" रशीद ने पूछा। उसे आश्चर्य हुआ कि कामील चाचा ऐसे लोगों को गोली मारने को तैयार नहीं हैं।

"अगर मैं जानता होता," कामील चाचा मुस्कराये, "तो मैं दूसरा ही काम करने लगता, राजनीतिज्ञ हो जाता या प्रशासनिक अधिकारी... कुछ कह नहीं सकता।"

रशीद ने बैग खोला, तो मालूम पड़ा कि वह सफ़री फ़्रिज है। फ़्रिज में से अंगूरी शराब की बोतल और मुसम्मी के रस के कुछ डिब्बे निकालकर उसने सबको छाते तले बिछी दरी पर बैठने को कहा। शराब में मुसम्मी का रस मिलाकर पीने में बहुत मजा आया। रशीद ने बारी-बारी से वहां उपस्थित सभी लोगों के स्वास्थ्य व सौभाग्य की कामना करते हुए जाम पिये। फिर उसने जाम उठाकर कहा कि वह उस दिन के सपने देख रहा है, जब नाईला के पिता यहां आकर अपनी बेटी और दामाद के साथ एक मेज़ पर परिवार के सदस्यों की तरह

बैठेंगे और तब वह अपने आपको दुनिया का सबसे सुखी आदमी महसूस करेगा। नाईला और कामील चाचा ने एक दूसरे की ओर देखा, पर इस बारे में उन्होंने रशीद से कुछ नहीं कहा।

मैंने देखा कि इसके बाद सब लोग नाईला के साथ पहले के मुकाबले काफ़ी अच्छा बर्ताव करने लगे हैं। पड़ोसी उसे अपने यहां बुलाने लगे और खुद भी अकसर उनके यहां जाने लगे। लेकिन जो सच है, वह तो मानना ही पड़ेगा, उनके प्रति आदीला और रशीद का व्यवहार ही सबसे पहले बदला था। आदीला अब नाईला को स्नेहपूर्वक से "प्यारी नेलिन्का" कहकर बुलाने लगी और उसे देखते ही खुशी से मुस्कराने भी लगी, चाहे उससे पहले उसका मूड सामान्य ही रहा हो। वे अकसर गप-शप करती रहतीं, पर बात भले ही किसी भी बारे में होती रही हो, अन्त में आदीला उसे सलाह देना शुरू कर देती। मैं जैसे ही आदीला के मुंह से सुनता: "अगर मैं तुम्हारी जगह होती ...", तो फ़ौरन समझ जाता कि अब सलाहों का दौर शुरू होनेवाला है। कामील चाचा की तुलना में रशीद चालीस मिनट पहले शहर से लौटता था और वह इस समय का उपयोग भी नाईला के लाभ में करने की कोशिश करता था। लेकिन वह अधिकतर उनके काम के बारे में बातें करता था। वह नाईला को सलाह देता था कि वह अपनी छुट्टियों के बाद भवन-निर्माण वर्कशाप में काम करना छोड़ दे, क्योंकि वहां भविष्य में तरक़्क़ी की सम्भावनाएं बिलकुल नहीं हैं, और किसी डिज़ाइन इंस्टीट्यूट में काम करे, जहां उन्नति के ज़्यादा अच्छे अवसर हैं। वह कामील चाचा के बारे में भी चिन्तित रहता था। नाईला से हर समय कहता रहता था कि उसे लेखन के उनके अल्पकालिक शौक़ को लेकर परेशान नहीं होना चाहिए। उनका यह शौक़ जल्दी ही खत्म हो जायेगा और तब, रशीद उसे पक्का आश्वासन देता था, कामील कोई बहुत अच्छे काम में लगकर बहुत सफलता प्राप्त करेंगे। रशीद कहता कि वह कामील चाचा की महत्त्वाकांक्षा को समझता है। आजकल सभी लोग प्रसिद्ध लेखक या कलाकार बनना चाहते हैं, लेकिन दुर्भाग्यवश ऐसा विरले ही हो पाता है, क्योंकि इसके लिए आदमी में प्रतिभा होनी चाहिए। खुद रशीद को ही लीजिये। उसमें प्रतिभा नहीं है, पर वह अपना दिल छोटा नहीं करता। उसका अपना परिवार है, अपना काम है और उसके लिए यही काफ़ी है। शायद कामील चाचा

भी कभी-न-कभी समझ जायेंगे और तब सारी मुश्किलें आसान हो जायेंगी। जब बुद्धि के अलावा आदमी के पास उच्च शिक्षा भी हो, तो उसके बारे में परेशान होने की कोई ज़रूरत ही नहीं है। मुझे नाईला को रशीद से यह कहते सुनकर बहुत अच्छा लगा कि उसे इस बात की कोई परवाह नहीं कि कामील चाचा क्या काम करते हैं।

नाईला अब अकसर हमारे यहां आने लगी। शुरू में वह केवल दिन में आती रही, जब कामील चाचा काम पर शहर में होते, पर बाद में अकसर शाम को भी आने लगी, जब वे अपने टाइपराइटर पर काम करने लगते। शायद किसी आदमी को घंटों काम करते और चुप्पी साधे देखकर ऊब होने लगती है।

दादी ऐसी बातचीत में न के बराबर हिस्सा लिया करती थीं। यह एक अजीब बात थी, क्योंकि वैसे वे बहुत बातूनी थीं। जब नाईला और आदीला हमारे यहां होतीं और बातें कर रही होतीं, तो दादी अपने घर के कामों में लगी रहतीं, उनसे कुछ कहा जाता, तो कभी-कभार एकाध शब्द कह देतीं, वैसे ज़्यादातर कुछ-न-कुछ करती ही रहतीं – अंजीर सुखाती रहतीं या खाना पकाती रहतीं। नाईला, जब भी हमारे यहां आती, दादी उसके साथ काफ़ी नम्रता के साथ पेश आतीं, उसमें कोई मीन-मेख नहीं निकल सकता था, पर वैसे नहीं, जैसे कि वे अपने दूसरे परिचितों के साथ करती थीं। नाईला ने उनसे दो-तीन बार फ़िसिंजान* बनाने को कहा और दादी हर बार फ़ौरन उसे पकाने को तैयार हो गयीं। मैंने देखा कि वे उसे अच्छे से अच्छा बनाने की कोशिश करतीं। नाईला ने उनको बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। दादी कहतीं: "जब जी चाहे, खुशी से आ जाया करो," वैसे ही, जैसे वे कहा करती थीं। लेकिन इसके बावजूद मुझे पक्के तौर पर मालूम था कि नाईला उन्हें ज़्यादा पसंद नहीं थी, केवल शिष्टाचारवश वे उसके साथ विनम्र रहती थीं, या शायद मेरे कारण। उन्हें मालूम था कि मेरी उन लोगों के साथ दोस्ती है, इसीलिए वे उनके साथ अच्छा व्यवहार करना चाहती थीं। लेकिन मेरी समझ में नहीं आता था कि नाईला जैसी औरत मेरी दादी को आखिर क्यों पसंद नहीं है। उनके पास इसका कोई आधार भी नहीं था, तिस पर जब नाईला

---

* एक प्रकार का पुलाव।

उनके साथ अच्छा व्यवहार करती हो, उनके यहां जाने पर हमेशा उनकी सेहत के बारे में पूछती हो। आदीला को भी नाईला अब अच्छी लगने लगी है, लेकिन मेरी दादी को नहीं। आखिर क्यों?

कहीं उसके कपड़ों के कारण तो नहीं?

दादी अपने ख़यालों में खोयी बालकनी में बैठी थीं। वे दिन में कई बार इस तरह बैठकर सुस्ताती हैं। काम कैसा भी क्यों न कर रही हों, उसे छोड़कर थोड़ी देर को ऐसे ही बैठ जाती हैं, मानो अचानक उनकी सारी ताक़त चली गयी हो। इस समय भी वे कहीं दूर नज़रें टिकाये बैठी हुई हैं। लगता है, जैसे किसी का इंतज़ार कर रही हों या समुद्र को निहार रही हों, पर वास्तव में वे कुछ देख नहीं रही हैं, बस अपने ही ख़यालों में खोयी हुई हैं। उनसे कुछ पूछिये, तो चौंक उठेंगी, मानो नींद से जगा दिया गया हो और फ़ौरन नहीं समझ पायेंगी कि बात क्या है। मुझे उनसे दोबारा पूछना पड़ा:

"क्या सचमुच उसके कपड़ों के कारण पसंद नहीं आती वह आपको?"

"मुझे क्या लेना-देना है उसके कपड़ों से?" दादी बोलीं। "जैसे पहनने को उसका मन करे, पहनती रहे। अगर पति को अच्छा लगता है..."

"तुम्हें आखिर वह क्यों पसंद नहीं है?"

"मुझे पसंद आने या न आने से फ़र्क़ ही क्या पड़ता है? मुझे आखिर वह पसंद आनी भी क्यों चाहिए? वह भी कोई पत्नी है? जब से आयी है, घर में उसने एक भी चीज़ एक जगह से उठाकर दूसरी जगह नहीं रखी है। सब कुछ जैसे पहले था, वैसे ही पड़ा है, बेतरतीबी से। कामील को तले अण्डों और तले सासेज के साथ टमाटर के अलावा उसने कुछ और तो बनाकर कभी खिलाया ही नहीं..."

"उसे अभी खाना पकाना नहीं आता, सीख जायेगी।"

"सीखेगी कैसे! जब मैं पकाती हूं तो कभी नज़र उठाकर देखा उसने? पति संगीत और डांस से बहुत जल्दी ऊब जाते हैं। उसके यहां भी यह ज्यादा दिन नहीं चल पायेगा। कम-से-कम आदीला से ही कुछ सीख लेती!"

"खूब मुक़ाबला किया उससे!"

"मैं मुक़ाबला कर भी नहीं रही हूं। वे कोई बतखें तो हैं नहीं। आदीला को मैं दिन भर दौड़-धूप करते देखती हूं, तिस पर उसके बच्चे

भी हैं और उसे गृहस्थी भी संभालनी होती है।"

"और इंजेक्शन भी लगाने होते हैं।"

"यह भी जरूरी है।"

"वह इधर की उधर लगाती है!"

"पर, बेटा, यह तो उसका निजी मामला है। अगर कोई उसकी बातों पर कान न दे, तो ये बातें अपने आप बंद हो जायें।"

"पर तुम ये सब नाईला से क्यों नहीं कहती हो?"

"चिकने घड़े पर भी पानी कभी टिकता है?"

रविवार को सुबह मैं कामील चाचा के यहां जाने के इरादे से घर से निकला ही था कि देखा – रशीद भी वहीं जा रहा है। मेरा मन हुआ कि लौट जाऊं, पर फिर सोचा, शायद वह थोड़ी देर बाद चला जायेगा, तब हम अकेले रह जायेंगे। हम तीनों बालकनी में बैठे थे, कामील चाचा और रशीद बात कर रहे थे। रशीद ने पूछा:

"घर की मालकिन कहां हैं?"

"घर पर नहीं हैं।"

रशीद ने कामील चाचा को एक सिगरेट के बाद दूसरी सुलगाते देखकर उन्हें सिगरेट पीना छोड़ने की सलाह दी। एकदम से नहीं, बल्कि धीरे-धीरे। पहले दिन आधा पैकेट, फिर कुछ दिन बाद चौथाई और उसके बाद हर दिन एक सिगरेट कम करते रहकर। बहुत आसान होगा। जब उसने सिगरेट पीना छोड़ा था, तो शुरू के दिनों में बड़ी मुश्किल हुई थी, बराबर सिगरेट पीने की तलब लगी रहती थी, लेकिन अपनी दृढ़ इच्छा-शक्ति से उसने अपने आप पर नियंत्रण रखा। अब दो साल हो चुके हैं उसे सिगरेट छोड़े हुए। खुद भी पहले से काफ़ी अच्छा महसूस करता है और घर में भी धुआं न भरा रहने से बच्चों को फ़ायदा होता है। बस एक ही बात खराब हुई – जब से सिगरेट पीना छोड़ा, उसके पैरों में बहुत पसीना आने लगा है, जबकि पहले कभी ऐसा नहीं होता था।

कामील चाचा यह बात सुनकर हंस पड़े और उनकी देखादेखी मैं भी हंस पड़ा।

"माफ़ कीजिये," कामील चाचा ने तत्क्षण गम्भीर स्वर में कहा, जैसे वे अभी-अभी हंसे ही न हों। "न जाने क्यों मुझे इतने जोर से हंसी आ गयी... आप अगर सिगरेट पीना शुरू कर दें, तो

शायद आपके पैरों में पसीना आना बंद हो जायेगा।"

"नहीं, जी, नहीं," रशीद ने कहा। "दिल वक़्त से पहले काम करना बंद कर दे, उससे तो पैरों का पसीजते रहना ही बेहतर है।"

"यह भी ठीक है," कामील चाचा ने कहा। वे कमरे में गये और टाइपराइटर उठाये हुए आकर बोले : "आप बैठिये, मैं जरा इसे खटखटा लेता हूं।"

"कीजिये, कीजिये काम," रशीद ने कहा। "मैं तो एक मिनट को आया था। अब चलता हूं।"

मैंने कामील चाचा से कहा कि मैं भी जा रहा हूं। कामील चाचा ने सिर हिलाकर कहा :

"शाम को आना। टेलीविज़न देखेंगे।"

आदीला अपनी सहेली के साथ हमारे यहां बैठी थी। मैंने जैसे ही कमरे में क़दम रखा, वे चुप हो गयीं। फिर आदीला ने मुझसे पूछा :

"तुम्हें यह मालूम था कि नाईला कामील को छोड़ गयी है?"

"छोड़ गयी, क्या मतलब?"

"बस उसे छोड़कर चली गयी। तुम्हें क्या मालूम नहीं था?"

मैं मुड़कर बाहर निकल गया।

"तुम कहां जा रहे हो?" दादी पीछे से चिल्लायीं।

"एक काम है," मैंने कहा। मैं भला जान सकता था कि कहां जा रहा हूं। जिधर मेरे पैर ले गये, उधर ही चलता चला गया। आंखें उठाकर देखा, तो अपने को रेलवे-स्टेशन पर पाया, हालांकि यहां आने का मेरा कोई इरादा नहीं था। नाईला के जाने का पता चलने पर मैं बहुत दुखी हुआ उस दिन।

सबसे आश्चर्य की बात तो यह थी कि नाईला के जाने के लिए सभी लोग एक स्वर में कामील चाचा को ही दोषी ठहरा रहे थे। आदीला बोली :

"उसकी जगह मैं होती, तो कभी की छोड़कर चली गयी होती! मैं एक बुद्धिजीवी हूं, अच्छी डाक्टर हूं, मेरा स्वभाव भी अच्छा है, लेकिन जब मैं अपने घर में उसके मुए टाइपराइटर की खटखट सुनती हूं, तो डेढ़ घंटे में ही मेरा ख़ून खौलने लगता है। मैं सोच सकती हूं कि नाईला को क्या भोगना पड़ा है! मैंने तो शुरू में देखते ही कह

दिया था, याद है, रशीद, कि उनकी जोड़ी ठीक नहीं है, नाईला के लायक़ नहीं है वह।"

"ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए, आदीला, तुम्हें," रशीद ने उलाहनाभरे स्वर में कहा। "जो होना था, सो हो गया। मैं तो अब उसके बारे में सोच रहा हूं कि उसका क्या होगा। वह अनाड़ी और आलसी है, काम करना ही नहीं चाहता। यही तो जड़ है सारी मुसीबत की। किसी को उसे समझाना चाहिए कि दिन-रात टाइपराइटर खटखटाना उसका काम नहीं है। उसे कोई ढंग का काम करना चाहिए, ढंग का।"

वे मुझसे पूछने लगे कि नाईला क्यों चली गयी। मुझे बताने के लिए मनाने लगे, क्योंकि मैं सारी शामें उन्हीं के यहां गुज़ारता था।

वे मेरे पीछे पड़े रहे, पर मैंने देखा कि वे दोनों ही ख़ुश हैं कि नाईला कामील चाचा को छोड़कर चली गयी है। उन्होंने इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा, पर मैं महसूस कर रहा था कि वे लोग कामील चाचा से कितनी घृणा करते हैं। आख़िर उन्होंने इन लोगों का क्या बिगाड़ा है?

दादी ने अच्छा किया कि उन्हें मेरा पिण्ड छोड़ देने को कह दिया। जैसे कि मैं उन्हें सारी बातें बताने ही जा रहा था! जैसे कि मैं उन्हें वे सारी बातें बता ही देता, जो मुझे मालूम थीं!

लेकिन वास्तव में मुझे कुछ भी तो मालूम नहीं था। वह क्यों चली गयी, मुझे कुछ मालूम नहीं। मेरे सामने तो वे कभी आपस में लड़े-झगड़े नहीं और मेरे पीछे भी। लड़े-झगड़े होते, तो हमारे यहां सब सुनाई दिया होता। यह सैमूर जब अपनी बीवी से लड़ता है, और अगर समुद्र की तरफ़ से हवा न बह रही हो तो उनकी चीख-चिल्लाहट सागर-तट पर भी सुनाई देती है। पिछले कुछ दिनों से नाईला और कामील चाचा दोनों ही उदास नजर आ रहे थे, यह तो मानना ही पड़ेगा। लेकिन इतनी-सी बात के कारण कोई अपने पति को छोड़कर नहीं जाता। वासिफ़ ने कहा कि नाईला शायद किसी प्रेमी के पास चली गयी है। मैंने उससे कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है, वह कामील चाचा को बहुत प्यार करती है, कभी नहीं हो सकता ऐसा।

"सांच को आंच क्या। ख़ुदा क़सम, मैंने तट पर एक लड़की को

खुद देखा, वह भी सुन्दर थी, जुलाई महीने के हर शनिवार की शाम को एक युवक के साथ उसकी लाल 'मास्कविच' कार में आती रही, फिर अगस्त में देखा कि दूसरे लड़के के साथ उसकी मटमैली 'भिगुली' में आने लगी। औरत जात पर कभी भरोसा नहीं किया जा सकता!"

फिर भी मैंने वासिफ़ से कहा कि नाईला किसी और के साथ कभी तट पर नहीं आ सकती। पर मन ही मन यह सोचकर डर भी गया कि कहीं वासिफ़ की बात सच निकल गयी, तो। मैं इतना उदास हो गया कि बस कुछ बता नहीं सकता।

ऐसा कभी नहीं हो सकता! इसका ऐसा अन्त कभी नहीं हो सकता! वे एक दूसरे को बहुत प्यार करते थे, यह मैं यक़ीनी तौर पर जानता हूं। लेकिन क्या मतलब हुआ इसका? लोग शुरू में एक दूसरे को प्यार करते हैं, फिर हमेशा के लिए जुदा हो जाते हैं, तो इसका मतलब क्या यही है कि अब तक मैंने प्यार के बारे में जो कुछ पढ़ा है, वे सब मनगढ़ंत बातें हैं। यानी किसी को प्यार करना ही बेकार है। लोग जब किसी को प्यार करते हैं, तो उसकी खातिर मौत तक से जूझने को तैयार रहते हैं... पर क्या कामील चाचा और नाईला एक दूसरे को प्यार करते थे? मुझे हमेशा यही लगता था कि मैं सब कुछ समझ सकता हूं, पर इस वक्त मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि ऐसा आखिर क्यों होता है। वासिफ़ ने मुझसे पूछा कि मेरा चेहरा अचानक उतर कैसे गया, मानो मुझे कोई बुरी बात याद आ गयी हो। मैंने कहा कि मुझे याद आ गया कि अब मुझे घर जाना चाहिए। मैं उठकर चल पड़ा, पर घर नहीं गया, यूं ही थोड़ी देर घूमता रहा। दादी घर पर अकेली थीं, उनके साथ बात करनेवाला भी कोई होना चाहिए, ताकि वे बोर न हों।

घर लौटते समय मैं रास्ते में पवनचक्की के पास रुका और थोड़ी देर उसकी ओर देखकर फिर आगे चल दिया। देखने को था ही क्या उसमें? वह बस अपनी जगह खड़ी रहती है, पंखे घूमते रहते हैं, कुएं से पानी खींचती रहती है। चरमरा रही है बुढ़ापे के मारे। इसे तो बहुत पहले हटाकर यहां बिजली की पंपिंग मोटर लगा देनी चाहिए थी। गांव में बहुतों ने यही किया है। पिछले साल तो मेरे मन में यहां रुककर इसे देखने का खयाल भी न आया होता। उसमें ऐसी कोई खास बात थी भी नहीं। यहां ऐसी कोई दसेक पवनचक्कियां बची होंगी।

नाईला ने जब इसे पहली बार देखा (हम शाम को गांव से लौट रहे थे), तो फ़ौरन रुककर बुत-सी खड़ी रह गयी। कहने लगी कितनी सुन्दर है यह, चलो अंदर चलकर देखें। हम उसके अंदर गये। सब चरमरा रहा था, सारी पवनचक्की हिलती थी, लगता था जैसे किसी भी क्षण ढह जायेगी। हमारे घुसते ही कई चमगादड़ डर के मारे फड़फड़ाते हुए इधर-उधर उड़ने लगे। वह उनके बारे में भी कह उठी कि कितना अच्छा लगता है। मैंने उससे कहा कि वे तुम्हारे बालों के साथ चिपककर उनमें अपने पंजे गड़ा सकते हैं और तब बाल ही कटाने पड़ जायेंगे, यह सभी जानते हैं। मेरा क्या, मैं तो बाल छोटे कटाता हूं, लेकिन उसके बाल लम्बे और घने हैं, जिनके सपने चमगादड़ हमेशा देखते रहते हैं। बड़ी मुश्किल से मना पाया मैं उसे चलने को, लेकिन फिर भी वहां से गुज़रते वक्त वह हर बार पवनचक्की के पास रुकती रही। आखिर उसे पवनचक्की में ऐसा क्या नज़र आ गया है?! उसके बालों से न जाने कैसी भीनी-भीनी खुशबू आती रहती थी। उस खुशबू से मेरा मन हर बार कुछ उदास हो उठता था।

कामील चाचा के साथ दादी का व्यवहार काफ़ी अच्छा हो गया था, इसकी मुझे बहुत खुशी हुई। वे मुझसे कुछ नहीं कहती थीं, पर मैं खुद ही उनकी कड़ाकी आवाज़ से यह भांप गया था।

"जाओ, बुला लाओ अपने दोस्त को। क्या ज़रूरत है उसे वहां अकेले बैठे ऊबने की?" वे मुझसे अपनी वैसी ही आवाज़ में कहतीं।

"पर वे मेरा कहना नहीं मानेंगे," मैं जान-बूझकर उन्हें ऐसा जवाब देता।

"तो तुम मेरी तरफ़ से आने को कह दो," तब उनका स्वर सामान्य हो उठता। "कहना, दादी खाना खाने को बुला रही हैं। वे सज्जन आदमी हैं, शुक्रिया कहेंगे और आ जायेंगे।"

दादी तो उन्हें अकसर बुलाती रहती थी, पर वे हमारे यहां सिर्फ़ एक-दो बार ही आये।

कामील चाचा खाते रहते और दादी उनकी ओर कनखियों से देख-देखकर ठण्डी सांसें लेती रहतीं। उनके जाने के बाद वे मुझसे कहतीं :

"काली घटा में भी बिजली कौंधती रहती है। थोड़े दिन दुखी होगे, फिर भूल जायेंगे। वह इनके लायक़ नहीं थी। ऐसे स्वभाववाले को तो दूसरी तरह की बीवी मिलनी चाहिए थी ... घर-गृहस्थी संभालने-वाली, स्वभाव की गम्भीर।"

"क्या आदीला जैसी ?"

"आदीला में क्या बुराई है ?"

"कोई नहीं। बस इतना जानता हूं कि वह तुम्हें अच्छी लगती है।"

"तुम्हें मालूम है, ज़रीफ़ा ने किससे शादी की है ?"

"मुझे कहां से मालूम होगा ?"

"सुबह वह अपने मियां के साथ आयी थी। मैंने देखा, पहले वह रशीद के यहां गयी। मैंने सोचा, बड़ी जल्दी भूल जाते हैं लोग पुराने जान-पहचानवालों को। पर बाद में मालूम पड़ा कि उसकी शादी रशीद के एक दूर के रिश्तेदार से हुई है। वह रशीद के ही गांव का है, बाकू में आ बसा है। वह अब ज़रीफ़ा के यहां रहता है। शहलार बेग बड़ा-सारा फ़्लैट जो छोड़ गये थे... ज़रीफ़ा खुश है, बस उसे यही दुख है कि उसके बच्चे नहीं हुए हैं। बहुत दुबली हो गयी है।"

"लेकिन उनकी मुलाक़ात कैसे हुई ?"

"यह मैं नहीं जानती," दादी ने कहा। "मैंने पूछा नहीं। उन्हें शायद आदीला या रशीद में से किसी ने एक दूसरे से मिलाया होगा। आखिर रास्ते चलते तो मुलाक़ात हुई नहीं होगी उनकी... हाय, अल्लाह !" दादी को जैसे कुछ अचानक याद आ गया। "काश, तुम्हारी शादी होने तक ज़िंदा रह पाऊं मैं ! नहीं, नहीं जी पाऊंगी तब तक। देखती तुम किससे शादी करते हो।"

उन्होंने यह बात कही और मैं सोचने लगा कि मैं कैसी लड़की से शादी करना चाहूंगा। सच कहूं, तो मुझे जीवन में बहुत-सी औरतें पसंद आयी थीं, शायद बहुत ही ज़्यादा। जब भी मैं कोई फ़िल्म या नाटक देखने गया, ऐसा कभी नहीं हुआ कि मुझे कोई न कोई अभिनेत्री पसंद न आयी हो। लेकिन यह तो पहले की बात है। पर इस वक़्त शादी का ख़याल आते ही मेरी कल्पना में नाईला उभर आयी। इच्छा हुई कि मेरी पत्नी भी नाईला जैसी लम्बी और सुन्दर हो, वैसे ही डांस करना जानती हो और उससे भी वैसे ही इत्र की ख़ुशबू आती रहे...

जितना ज़्यादा मैंने इस बारे में सोचा, उतना ही ज़्यादा मुझे एहसास होता गया कि न जाने क्यों मैं बड़ा होकर कामील चाचा जैसा ही बनूंगा। मैं कल्पना में अपने आप को देखना चाहता था, पर वास्तव में मैं कामील चाचा जैसा ही नज़र आता था, क्योंकि चेहरा-मोहरा, क़द और कपड़े भी उन्हीं के दिखाई देते थे। और सबसे ज़्यादा हैरानी की बात यह थी कि कामील चाचा नाईला की बात सुन रहे होते थे और साथ ही टाइप भी करते जाते थे। ऐसा आख़िर क्यों होता है ? कोई ऐसा नहीं है, जिससे यह पूछ सकूं। कामील चाचा से पूछना शायद ठीक न हो, हालांकि हम क़रीब-क़रीब हर शाम को साथ घूमने जाते हैं।

घूमते वक़्त हम इधर-उधर की बातें करते रहते हैं या चुप ही रहते हैं, पर फिर भी अच्छा लगता है। उन्होंने मुझे बताया कि रशीद ने उनसे अपना बंगला उसे बेचने का सुझाव दिया है। मैंने सोचा, बस अब यही क़सर रह गयी है कि वे भी यहां से चले जायें।

"जानते हो, कितने पैसे देने को तैयार है वह ?" कामील चाचा ने मुस्कराकर पूछा। "तुम कितनी भी कोशिश क्यों न करो, अंदाज़ नहीं लगा पाओगे।"

रशीद ने जितने पैसे देने की बात कही थी, उसे सुनकर मैं बेहोश होते-होते बचा।

"इतना पैसा उसके पास कहां से आया ?"

"शायद पिछले सत्तर-अस्सी साल से जोड़ता रहा होगा," कामील चाचा हंस पड़े। "वह ख़र्च भी तो नहीं के बराबर करता है, बस घरवालों पर, कार और बंगले पर, बाक़ी सारी तनख़्वाह हर महीने जोड़ता रहता है, तभी तो इतना पैसा हो गया। और मालूम है उसकी तनख़्वाह कितनी है ? एक सौ साठ रूबल महीना... वैसे ऐसा मौक़ा हाथ से गंवाते हुए बेशक दुख होता है, पर मैंने इनकार कर दिया। शायद बाद में और बड़ी रक़म देने को तैयार हो जाये। तुम्हारा क्या ख़याल है ?"

"एक आदमी दो बंगलों का मालिक हो ही कैसे सकता है ?" मैंने पूछा।

"जिसे यह तरीक़ा आता है, उसे सब माफ़ है। उसने कहा कि दूसरा बंगला वह अपनी बहन के नाम पर ख़रीदेगा। लेकिन, मेरे

लाडले, तुम बेकार परेशान न होओ, ऐसे लोग किसी वकील से भी ज्यादा अच्छी तरह क़ानून जानते हैं। इसीलिए तो हमसे ज्यादा अच्छी तरह बचे रह सकते हैं क़ानूनों से। लेकिन सच कहूं, तो मन ही मन मैं इस रशीद का काफ़ी आभारी हूं। मैं हमेशा के लिए बाकू छोड़कर चला जाना चाहता था, हमेशा के लिए, मेरा ऐसा इरादा था। और रशीद न होता, तो शायद चला भी गया होता। लेकिन जब उसने मेरे ही फ़ायदे के लिए मुझसे मेरा बंगला खरीदने की बात की, तो मुझे अचानक लगा कि अगर मैं तैयार हो गया, तो रशीद इसी तरह आस-पास के सारे बंगले, सड़कें और लोगों को भी खरीद लेगा ... मैंने उसे खूब खरी-खरी सुनाई भी। काफ़ी दिन नहीं भूल पायेगा। पर उसने बिलकुल बुरा नहीं माना। कहने लगा, बेकार ग़ुस्सा न होओ, भाड़ में जाये बंगला-वंगला, मैं तो बस यही चाहता हूं कि सब लोग सही-सलामत रहें। समझे? वह तो फ़ौलाद का बना है। मेरे-तुम्हारे जैसा बिलकुल नहीं है!"

लेकिन पिछले कुछ समय से वे विरले ही मज़ाक़ करते थे।

नाईला के जाने के बाद से कामील चाचा बहुत बदल गये थे। वे उदास रहने लगे थे, बात भी कम करते थे और दुबले भी बहुत हो गये थे। वे पहले भी बहुत काम करते थे, लेकिन अब तो टाइपराइटर से चिपटे ही रहते थे। शहर से आने के दस मिनट बाद ही उनका टाइपराइटर खटखट चलने लगता था। मैं उनके पास जाता, तो वे सिर उठाकर उसे धीरे से हिला देते, मानो कह रहे हों: "सलाम, बैठो, मैं अभी एक मिनट में," पर टाइप किये ही चले जाते। कामील चाचा टाइप करते वक़्त कुछ बुदबुदाते जाते हैं, कितना भी कान लगाकर सुनो, कुछ समझ में नहीं आता, बस उनके होंठ हिलते नज़र आते हैं, शायद इस तरह वे खुद अपने आपको डिक्टेट करते रहते हैं। पर उनके चेहरे पर भाव हर समय बदलते रहते हैं, कभी वे चिन्तामग्न दिखने लगते हैं, तो कभी लोमड़ी जैसे चालाक। एक बार तो मैंने उन्हें बेबात जोर से हंसते भी सुना, कोई देखता, तो सोच लेता कि शायद पागल है, जो खुद अपने आप से बातें करता और हंसता रहता है। बस, इस वक़्त वे नहीं हंस रहे थे, उदास बैठे टाइप कर रहे थे। थोड़ा बहुत टाइप करते, फिर रुक जाते, कुछ देर सोचते और फिर टाइप करने लग जाते। वे सुबह तक ऐसे ही काम करते रह सकते हैं।

नाईला के बारे में मेरी हमेशा अच्छी राय रही थी। जीवन में जितनी औरतों से मेरी मुलाक़ात हुई थी, शायद वही मुझे सबसे ज्यादा पसंद आयी थी, लेकिन अब कामील चाचा की हालत देखकर मैं महसूस करने लगा था कि उसके बारे में मेरी राय पहले जैसी नहीं है, बल्कि बहुत खराब हो गयी है। वह क्या बिलकुल भी नहीं समझ सकती कि उसकी ख़ातिर वे कितने तड़प रहे हैं?!

"कामील चाचा, आप जाकर उन्हें ले क्यों नहीं आते?"

मैंने पूछा और मुझे लगा, जैसे उस क्षण वे भी यही सोच रहे थे, क्योंकि उन्होंने एक सैकंड भी सोचे बिना तुरन्त उत्तर दिया:

"मैं क्यों जाऊं उसे लेने? क्या मैंने कोई ग़लती की है उसके मामले में?! मैं कहीं नहीं जाऊंगा!" उन्होंने यह बात ग़ुस्से में कही, फिर रुककर मुझ पर आश्चर्यभरी नज़र डाली, शायद वे आशा नहीं रखते थे कि मैं उनसे ऐसी बात कह सकता हूं। वे फिर टाइप खटखटाने लगे।

मैं उस वक़्त टेलीविज़न देख रहा था, अचानक टाइपराइटर की खटखट बंद हो गयी और मैंने पलटकर देखा। वे मुझसे बोले:

"मेहरबानी करके उसके बारे में तुम फिर कभी कुछ मत कहना। बात तय हो गयी?"

अचानक नीचे, पानी में फिर छपाकों की आवाज़ आयी। ऊपर चट्टान तक छींटे आये। क्या उसने एक और पकड़ ली?! यह आख़िर हो क्या रहा है? उसे खींच रहा है। अरे, यह तो पहलेवाली से भी बड़ी है! वासिफ़ इस बार अपनी जगह से हिला भी नहीं, बुत की तरह बैठा अपने नज़दीक दूसरी स्टर्जियन को ऊपर खींचे जाते देखता रहा। मैंने उठकर उसे बालटी में ठूंसने में मदद दी। अब बालटी के बाहर दो पूंछें निकली हुई थीं, निकली हुई ही नहीं थीं, बल्कि ऐसे फड़फड़ा रही थीं, मानो उसे लेकर उड़ ही जायेंगी। अगर हमने उन्हें पूरे ज़ोर से दबोच न रखा होता, तो स्टर्जियनें बालटी में से निकल गयी होतीं। फिर जहाज़ियों की क़मीज़वाले उस मछलीमार ने मुझसे कहा कि मेहरबानी करके दूसरी पूंछ भी पकड़ लो। वह खुद उन्हें तिरपाल के टुकड़े से ढंकने लगा। हमने उसके ऊपर दो-तीन पत्थर

और रख दिया, जिनमें से हरेक दो-तीन किलोग्राम से कम का न था। तब जाकर स्टर्जियनें कुछ शान्त हुईं। वासिफ़ इस दौरान चुप्पी साधे रहा। सच पूछिये, तो मैं भी चुप्पी साधे था, बहुत हैरान था। मेरी जगह कोई और होता, तो उसकी भी यही हालत हुई होती – सिर्फ़ आधे घंटे में बंसी से दो स्टर्जियनें पकड़ लीं इसने, कमाल है! गायली में किसी को यह किस्सा सुनाओ, तो हंसी उड़ाने लग जाये। मैंने अपनी जगह पर बैठकर फिर कांटा घुमाकर फेंका, शायद इस बार किस्मत साथ दे और किसी छोटी-मोटी स्टर्जियन को ही मेरा चारा पसंद आ जाये। कुछ भी हो सकता था। जहाजियों की क़मीजवाले ने मुझसे फिर कहा – ले लू? उसका मतलब केंचुए से था। सबसे दिलचस्प बात यह थी कि अब उसके जगह बदल लेने के बाद वासिफ़ का डिब्बा उसके नजदीक हो गया था, पर फिर भी वह केंचुआ मेरा ही लेना चाहता था। क्या यह भी अपशकुन-शकुन में विश्वास करता है? वह उठकर मेरे पास आया, केंचुआ लेने के पहले मुझे धन्यवाद दिया, फिर उस पर थूका और उसे कांटे पर लगा दिया। कही उसके थूक में तो कोई ऐसी ख़ासियत नही है, जो स्टर्जियनों को पसंद आती हो?! मैंने वासिफ़ से कहा:

"अब हमारी बारी है। तुम शुरू करो पहले।" पर उसने मेरी बात अनसुनी कर दी, बंसी एक तरफ़ रखकर उठा, उस जहाजियों की क़मीजवाले के पीछे जा खड़ा हुआ और बोला:

"ऐ, उठ!" उसने पहले वासिफ़ की तरफ़ देखा, फिर मेरी तरफ़। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि वासिफ़ उससे क्या चाहता है?

"क्यों?"

"कह रहा हूं, उठ!"

वासिफ़ के लहजे से वह समझ गया कि बहस न करना ही बेहतर होगा। बंसी रखकर वह उठ खड़ा हुआ।"

"लो, उठ गया।"

"सुन," वासिफ़ बोला, "तू मछली पकड़ना बंद करके थोड़ी देर बैठा रह, फिर देखा जायेगा। समझ गया?"

"मैं हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठा रहना चाहता। मैं मछली पकड़ूंगा।"

"पकड़कर तो देख ज़रा!.. चल उठ!"

"ऐ, सुन," जहाजियों की क़मीजवाला मछलीमार बोला। "यह गलत बात है। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि तुम चाहते क्या हो। मैंने दो स्टर्जियनें पकड़ी या नहीं? पकड़ी। तुम मुझे रोको मत, मैं अभी एक और पकड़े लेता हूं, उसके बाद और नहीं पकड़ूंगा। हममें से हरेक को एक मिल जायेगी। तुम्हें हो क्या रहा है?"

न जाने क्यों मुझे विश्वास हो गया कि वह एक और स्टर्जियन पकड़ लेगा। तभी उसने मेरी तरफ़ देखा, मानो पूछ रहा हो: "ठीक कहा न मैंने?" बेशक, उसकी बात ठीक थी। इसमें हुज्जत की कोई बात ही नहीं थी।

"क्या तेरी समझ में नहीं आता," वासिफ़ चिल्ला उठा, "कि इन चट्टानों के तले से स्टर्जियन का पूरा झुण्ड निकल रहा है। ऐसा शायद जिंदगी में एक ही बार होता है। अगर यह नमूना न होता, तो हमने सारी मछलियों को पकड़ लिया होता! और यह बेवक़ूफ़ पागलों की तरह चिल्ला रहा है। चल हट यहां से!"

"कहीं नहीं जाऊंगा मैं यहां से! मछली पकड़ूंगा!" बस वे फ़ौरन गुत्थम-गुत्था हो गये। वासिफ़ जैसे ही उस पर झपटा, मैंने सोचा कि वह उसका बड़ी आसानी से कचूमर निकाल देगा, पर हुआ इसका उलटा ही। मैंने देखा कि वह लड़का तो लड़ने में भी किसी से उन्नीस नहीं है। वे बिलकुल कगार पर लड़ रहे थे, मुझे डर लगा कि पानी में गिर पड़ेंगे। वहां चट्टानों तले समुद्र भी ऐसा था कि बस ख़ुदा ही बचाये उससे। और अगर इतनी ऊंचाई से गिर पड़े और वह भी सिर के बल तो?.. यह ख़याल आते ही मैं उचककर उनकी तरफ़ लपका। वह डर गया। मुझे अपनी तरफ़ लपकते देख उसकी आंखें भय के मारे फटी की फटी रह गयीं। उसने शायद सोचा कि मैं भी उस पर टूट पड़ूंगा। वह सिर पर पैर रखकर हमसे दूर भाग चला। बुरी तरह डर गया था। भागते-भागते उसने मुड़कर देखा। मुझे उसका चेहरा देखने का वक़्त ही नहीं मिल पाया, लेकिन लगा कि उस पर ख़ौफ़ छाया था और थोड़ा आश्चर्य का भाव भी, मानो पूछना चाहता हो कि क्या तुम भी मुझ पर टूट पड़ोगे। मैं बड़ी मुश्किल से वासिफ़ का कालर पकड़कर उसे रोक पाया, जब वह उसकी ओर लपका।

"क्या तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है?" मैं बोला। "तुम

आखिर उससे चाहते क्या हो? गलती तुम्हारी ही है," यह कहते हुए मैंने महसूस किया कि उससे बात करना बिलकुल बेकार है। जाहिर था, वह उन स्टर्जियनों के मारे बिलकुल बौरा गया था।

"बदमाश कहीं का, हमारी स्टर्जियनें पकड़ लीं उसने," वासिफ़ बोला। "हम कब से कोशिश कर रहे थे, लेकिन वह बस आया और पकड़ले गया उन्हें।" वासिफ़ की बात मैं सुनना ही नहीं चाहता था। देखते-देखते यह बहुत बुरी बात हो गयी।

"तुम यहीं रुको। मैं उसे बुला लाता हूं। फिर मत उलझ पड़ना उससे। मेहरबानी करो मुझ पर!" मैं अपने प्लाट के छोर तक भागकर गया, पर वह कहीं नज़र न आया। कोहरे के मारे दो क़दम दूर की चीज़ नज़र नहीं आ रही थी। लगता था जैसे दूधिया कांच के गिलास में ठूंस दिया गया हो। ऐसे कोहरे में कुछ नज़र आ भी सकता था?! वह किधर भागा, कुछ पता नहीं था। कहीं मैं बिलकुल उसकी उलटी दिशा में तो नहीं भाग रहा हूं? भागते-भागते पूरे जोर से पुकारता भी जा रहा था पागलों की तरह: "ऐ, लड़के! ऐ, लड़के!" हमने उसका नाम भी तो नहीं पूछा था। भागते-भागते और पुकारते-पुकारते मेरा तो गला ही सूख गया। "ऐ, लड़के!", "जहाज़ियों की कमीज़वाले!" हर तरह से आवाज़ें दीं मैंने, पर सब बेकार रहा। लौटते वक़्त ठोकर खा गया, घुटने के बल गिरा और दर्द के मारे चीख उठा। वासिफ़ बेकार ही टूट पड़ा था उस पर। कोई झुण्ड-वुण्ड नहीं था स्टर्जियन का! मैं अपनी चट्टान तक बड़ी मुश्किल से पहुंचा, इतनी बुरी तरह थक गया कि बाज़ू में भी दर्द होने लगा। देखा, वासिफ़ बालटी के पास खड़ा है और तिरपाल का टुकड़ा हटा-कर स्टर्जियनों को निहार रहा है।

"मैं उसे पकड़ नहीं पाया," मैंने वासिफ़ से कहा। "कुछ भी हो, हुआ बहुत बुरा।"

"भाड़ में जाये! क्या ज़रूरत है हमें उसके बारे में सोचने की? स्टर्जियनें तो हमारे पास रह गयीं!"

यह सुनते ही मुझे न जाने क्या हो गया, मैंने बालटी के ऐसी ठोकर मारी कि स्टर्जियनों और तिरपाल के टुकड़े समेत वह पानी में जा गिरी। वासिफ़ यह सब देखता रहा और फिर मुझ पर झपट पड़ा...

क्या खूब मछलियां पकड़ी हमने उस दिन! वासिफ़ की नाक से खून बह रहा था, मेरा होंठ लहू-लुहान हो गया था, क़मीज़ टुंडी तक फट चुकी थी और घुटने में अभी तक दर्द हो रहा था। हमने हाथ-मुंह धोये और अपना सामान समेटने लगे।

वासिफ़ ने ब्रीम और बुलहेड ये दोनों छोटी मछलियां उठा लीं, जिन्हें हमने उस लड़के के आने से पहले पकड़ा था। वासिफ़ ने स्टर्जियनों को निहारते वक़्त उन्हें उठाकर एक ओर रख दिया था, इसीलिए वे बच गयीं। वासिफ़ ने उन्हें हाथों में उलट-पलटकर देखा और डोरी पर लटका लिया। फिर उसने एक ठण्डी सांस ली।

"अच्छा मज़ाक़ किया क़िस्मत ने हमारे साथ," वह बोला। हाथ-मुंह धोते वक़्त ही मेरा गुस्सा जाता रहा था, बल्कि मुझे दुख भी हो रहा था। हमारे बंगले के फाटक पर पहुंचने तक हम चुप्पी साधे रहे।

"वे स्टर्जियनें पन्द्रह रूबल से कम में नहीं जातीं," वासिफ़ बोला, "हम आज ही वह नाव खरीद लेते।"

"अगले साल खरीद लेंगे," मैंने फाटक में घुसते हुए कहा। "ज़रूर खरीद लेंगे, फ़िक्र मत करो। अच्छा!"

आदीला हमारे यहां थी। वह अंगूर के पत्तों में क़ीमा लपेटकर दोलमा बनाने में दादी की मदद कर रही थी। दोनों ही मुझे देखकर बहुत खुश हुईं। उन्होंने फ़ौरन मेरे हाथों में कटोरा थमा दिया और मुझे रशीद के यहां से चावल लाने भेज दिया, उसे यह भी याद दिलाने को कहा कि आज का खाना उसे हमारे यहां खाना है और वह देर न लगाये।

मैं रशीद की बालकनी में पहुंचा, तो मैंने उसे नीली "झिगुली" कारवाले अपने परिचित से बात करते पाया। मैंने सलाम किया, पर उन्होंने मेरी तरफ़ नज़रें उठाकर भी नहीं देखा। वह आदमी कह रहा था:

"सुनो, आखिर मेरे बच्चे हैं, परिवार है।"

"मेरी पीठ पीछे यह कारिस्तानी करते वक़्त तुम्हें इस बारे में सोचना चाहिए था। तुम धोखा किसे देना चाहते थे? क्या फ़ायदा हुआ तुम्हें इससे? मैं तो तुम पर विश्वास करता था, हमेशा विश्वास करता रहा था। तुम्हें ईमानदारी से पेश आना चाहिए था।"

"रशीद, कैसी बात कह रहे हो तुम? मैं बरबाद हुआ जा रहा हूं, तुम क्या यह बात नहीं समझते?" मैंने उस पर नजर डाली–उसके बदन से पसीना फूटा पड़ रहा था, हालांकि उस दिन गरमी नहीं पड़ रही थी, पर वह पसीने से इतना लथपथ था कि उसकी सारी क़मीज तर हो चुकी थी। "मैं सब कुछ छोड़कर तुम्हारे पास भागा आया हूं। मेरी मदद करो!"

"ऊपरवाला ही मदद करेगा तुम्हारी," रशीद बोला। "मैं तुम्हारी बरबादी नहीं चाहता, पर तुम्हारी मदद भी नहीं कर सकता। मैं तुम्हारी खातिर कोई जोखिम मोल नहीं लेना चाहता। आखिर मेरे भी तो बच्चे हैं।"

उस आदमी ने रशीद की तरफ़ देखकर होंठों पर जबान फेरी। मैंने सोचा कि वह फिर रशीद की मिन्नत करेगा, लेकिन उसने केवल इतना ही कहा:

"खैर, ठीक है," और जाने के लिए मुड़ा।

"जाओ," रशीद बोला, "और अब भूल जाओ कि तुम मुझे जानते थे। समझ गये?"

"मैं तो भूल जाऊंगा," वह आदमी बोला, "मैं तो भूल जाऊंगा," मुझे लगा कि वह कुछ और भी कहना चाहता है, पर हिम्मत नहीं कर पा रहा है। फिर भी बोला: "पर दूसरे नहीं भूलेंगे।"

यह सुनते ही रशीद उसकी तरफ़ बढ़ने लगा। रशीद उसकी ओर बढ़ रहा था और वह पीछे हटता जा रहा था। अचानक मुझे लगा जैसे यह वह रशीद नहीं है, जिसे मैं जानता था, बल्कि कोई दूसरा ही आदमी है–काठ का बना, जिस पर जूते की काली पालिश मल दी गयी हो।

"मुझे आदीला ने चावल लाने को भेजा है।" मेरी आवाज सुनकर दोनों ही चौंक पड़े। रशीद तुरन्त रुक गया, पर वह व्यक्ति दो क़दम और पीछे हट गया।

"चावल?" रशीद ने पूछा। "चावल बावरचीखाने में है। वहां सफ़ेद अलमारी में देख लो।"

मैं कटोरे में चावल भरकर अपने घर चल दिया। वे दोनों मुझे देखते रहे।

"दादी से मेरा सलाम कहना," रशीद बोला।

अपने फाटक पर पहुंचकर मैंने देखा कि रशीद का परिचित उनके यहां से निकलकर अपनी कार में बैठा और चला गया। मैं सोच रहा था कि वह रशीद को अपनी मदद करने के लिए मना सका या नहीं। हालांकि मुझे यह मालूम नहीं था कि वह रशीद से क्या चाहता था, पर फिर भी मुझे यह जानने की उत्सुकता थी।

मैंने जब चावल लाकर दिये, तो आदीला बातें कर रही थी। मैं भी बैठकर सुनने लगा, खाने के वक़्त तक करने को कुछ था भी नहीं। वह बता रही थी कि रशीद को कैसे अपने मधुमेह रोग होने का सन्देह हो गया। वह तो बिलकुल बीमार नहीं लगता, स्वस्थ है, हर सुबह डम्बल लेकर व्यायाम करता है, लेकिन हर वक़्त कोई न कोई दवाई खाता रहता है–विटामिन या मानसिक तनाव शान्त करने की गोलियां। क्या ज़रूरत पड़ी है उसे मानसिक तनाव दूर करने की? मैंने तो उसे कभी गुस्सा होते या घबराते नहीं देखा था, बस अपने उस दोस्त के साथ हो रही बात को छोड़कर। लेकिन यह तो केवल एक बार ही हुआ था।

मुझे मालूम पड़ा कि रशीद अपने मधुमेह होने की आशंका के कारण बहुत चिन्तित था। आदीला ने हमें बताया कि यह रोग केवल गम्भीर ही नहीं असाध्य भी है, इसीलिए उसने पूरी जांच कराने का फ़ैसला कर लिया है। पहले उसने पोलीक्लीनिक में जांच के लिए खून दिया, फिर सुबह एक शीशी में पेशाब लेकर जांच कराने शहर गया। उस दिन रशीद बहुत घबराया हुआ था, क्योंकि उसे मंत्रालय में किसी अधिकारी ने बात करने के लिए बुलवा भेजा था। उसका कार्यालय किसी दूसरी इमारत में था। रशीद काम पर जाते हुए रास्ते में वहां गया था। उसके पास जाते वक़्त रशीद बहुत परेशान हो रहा था, क्योंकि वह अधिकारी स्वभाव से बड़ा टेढ़ा और सख़्त है, लेकिन; जैसा कि आदीला ने कहा, रशीद को अपने काम की अच्छी जानकारी है और अपने निष्कलंक रिकार्ड के कारण उसे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होनी चाहिए थी। अधिकारी के कमरे में उसे पता चला कि वास्तव में उसे चिन्ता करने की कोई आवश्यकता भी नहीं थी। उस अधिकारी ने उसके साथ केवल उसके काम के बारे में बहुत ही नम्रतापूर्वक बात ही नहीं की, बल्कि चलते समय उसकी पदोन्नति करने का संकेत भी दिया। इसी कारण रशीद काम पर बहुत अच्छे मूड

में पहुंचा। लंचब्रेक तक उसका मूड वैसा ही बना रहा, जब उसे पोली-क्लीनिक जाना था। केवल तभी रशीद को याद आया कि वह पेशाब की शीशी तो अपने अफ़सर की मेज पर ही भूल आया था। घर वह बहुत बुरी हालत में पहुंचा। आदीला को उसे तुरन्त एक इंजेक्शन लगाना पड़ा। उसने रशीद को बहुत तसल्ली दी पर सब बेकार रहा।

रशीद ने कहा कि उसके लिए शायद अपने लिए कोई नया ही काम ढूंढ़ लेना बेहतर होगा, क्योंकि वह सख्त और टेढ़े मिजाज़ का अधिकारी इस समय ज़रूर यही सोच रहा होगा कि उसने उसका तिरस्कार और अपमान करने का बहुत अच्छा तरीक़ा ढूंढ़ निकाला है, जिसकी कोई सज़ा न दी जा सके। रशीद शनिवार और रविवार, पूरे दो दिन आदीला से यही सलाह करता रहा कि उसे क्या करना चाहिए। औपचारिक रूप से शीशी लौटाये जाने का इंतज़ार करना चाहिए या खुद ही उसे वापस मांग लेना चाहिए! वह सोमवार को काम पर भी इसी बारे में सोचता रहा, जब तक कि अफ़सर की सेक्रेटरी ने रशीद को फ़ोन करके शीशी ले जाने को नहीं कहा। सेक्रेटरी उसके साथ फ़ोन पर भी और उसके शीशी लेने के लिए वहां पहुंचने पर भी विनम्रतापूर्वक बात करती रही थी। लेकिन रशीद उसके कुपरिणामों के बारे में ही सोचता रहा और उसे बराबर यही लगता रहा कि उसके रक्त में शक्कर की मात्रा बढ़ती ही जा रही है। रशीद ने कहा कि उसकी चिन्ता का कारण वह शीशी ही नहीं है। उसे तो हमेशा यही डर लगा रहता है कि मामूली-सी बात से तिल का ताड़ बन सकता है। जांच उसने आखिर करा ही ली और उसे बता दिया गया कि उसे मधुमेह नहीं है।

हमने खाना बरामदे में लगाया। आज मेरा मनपसंद खाना बना था – दोलमा और क़ीमे व कद्दू के साथ हरी सलादवाली कचौड़ियां। रशीद भी खनिज जल की बोतलें थैले में लिये आ पहुंचा। उसने कहा था कि बोरझोमी बहुत लाभदायक खनिज जल है, क्योंकि उसमें शरीर के लिए अत्यावश्यक सभी तत्त्व होते हैं।

बेटे को उसने आदीला से लेकर अपनी गोद में बिठा लिया। कहने लगा: "मेरे लाड़ले! मेरे लाल!" वह अपने बेटे को बहुत प्यार करता है। रोज सुबह काम पर जाने से पहले उसके पलंग के पास आकर कहता है: "गुडमॉर्निंग, कामरेड बॉस!" और उसे बहुत

सावधानी से प्यार करता है, ताकि कहीं उसकी नींद न खुल जाये।

आदीला ने बच्चे को उससे लेने की कोशिश की, ताकि रशीद आराम से खाना खा सके, पर उसने नहीं दिया। "कहने लगा: मेरा बेटा गोद में बैठा होता है, तो मुझे खाने में बहुत मज़ा आता है। इसके अलावा मैं चाहता हूं, कि तुम भी गृहस्थी के झंझटों से थोड़ी फ़ुरसत पा लो।"

उसकी गोद में बैठा हुआ बेटा शान्ति से मुस्कराकर सबकी ओर देखता रहा। उसका पेट भरा हुआ था। आदीला उसे खाना खिला चुकी थी। बहुत ही अच्छा, हंसमुख छोकरा है। मैंने उसे एक बार भी रोते या चिड़चिड़ाते नहीं सुना। थोड़ी देर में वह बैठा बैठा ऊबने लगा और खड़ा हो गया, लेकिन रशीद ने उसे फिर बिठा दिया। बोला: "पापा को खाना खाने दे, उसे तुम्हारी ख़ातिर काम करना है।" तब बच्चे ने रशीद की सीने की जेब में हाथ डाल दिया। रशीद हंस पड़ा और मुझे आंख मारकर बोला: "पैसे चाहिए? ले ले बाप की जेब से जितने चाहिए, तुझे देते मेरा दिल नहीं दुखेगा।" लड़के ने जेब में से एक काग़ज़ निकाला और उसे हाथों में उलटने-पलटने लगा। रशीद ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया, क्योंकि वह उस समय दोलमा पर चटनी डाल रहा था। आदीला ने उससे काग़ज़ छीनकर अपने पास मेज़ पर रख दिया, फिर उसने उस पर नज़र डाली – उस पर कोई टेलीफ़ोन नंबर लिखा हुआ था, कोई नाम नहीं था। वह कुछ सोचने लगी। रशीद ने पूछा कि वह किस सोच में पड़ गयी है, ऐसे सोचने से भूख ख़राब हो जाती है। आदीला काग़ज़ लेकर उठी और खिड़की के पास गयी, दासे पर उसका पर्स रखा था। वह अपना यह पर्स हर जगह साथ रखती है, सागर-तट पर, दुकान में, सिनेमा में, हर जगह, एक बार भी उसने उसे कभी घर पर नहीं छोड़ा। उसमें वह अपनी अंगूठियां, ब्रेसलेट वग़ैरह रखती है और शायद कुछ और क़ीमती चीज़ें भी। दासे के पास जाकर उसने पर्स में से डायरी निकाली, उसके पन्ने उलटकर कुछ ढूंढ़ा, मिनट भर खड़ी रही और फिर हमारे पास लौट आयी। उसका चेहरा फक था, होंठ फड़क रहे थे। वह रशीद से इतनी रूखी आवाज़ में बोली कि मैं उसे पहचान नहीं पाया:

"सूअर! घिनौने सूअर! तू फिर अपनी पुरानी हरकत पर उतर आया!"

रशीद मुंह का पूरा कौर निगल गया, उसे उच्छू आते आते बची।

"क्या हुआ? तुम्हें क्या हो गया है?"

फिर ऐसा कलह छिड़ा कि बस पूछिये मत! मैंने कभी किसी औरत के मुंह से ऐसे शब्द नहीं सुने थे। वैसे मैं उन सभी शब्दों को जानता था, लेकिन मालूम पड़ा कि किसी स्त्री द्वारा उनके उपयोग से उनका अर्थ बिलकुल ही बदल जाता है और वे हज़ार गुना भद्दे लगने लगते हैं। तिस पर वह उन्हें इस्तेमाल ही नहीं कर रही थी, बल्कि अपनी बदली हुई मर्दानी आवाज़ में गला फाड़-फाड़कर बोल रही थी, जो शायद सागर-तट तक गूंज रही थी। उसके बाद वह चिल्लाने लगी। मैं तो डर ही गया। मैं और दादी खड़े देखते रहे, समझ न पाये कि क्या करें। रशीद ने उसके पास जाकर उसे चुप कराने की कोशिश की, पर सब बेकार। उसकी क़िस्मत अच्छी थी, वरना आदीला ने उसकी आंखें ही नोच डाली होतीं, निशाना चूक गया, केवल गालों पर दो लाल खरोंचें ही आयीं। बच्चे रो रहे थे। मैं और दादी हैरत में पड़े खड़े देखते रहे। शुरू में तो मैं कुछ समझ नहीं सका, पर बाद में सारा मामला साफ़ हो गया। मालूम पड़ा कि काग़ज़ पर नाईला का टेलीफ़ोन नंबर लिखा था। आदीला ने उसे अपनी डायरी से मिला लिया था। नाईला ने खुद उसमें अपना नंबर लिखा था और आदीला समझ गयी कि उस क़ाग़ज़ पर वही नंबर लिखा है। फिर वह उसके सामने खड़ी होकर, गुस्से से कांपती हुई चिल्ला-चिल्लाकर उसे धमकाने लगी:

"मैं तुझे दिखा दूंगी कि मैं कौन हूं! देख लेना, तेरी क्या हालत करती हूं! क्या भूल गया कि सब मेरे नाम पर है – यह बंगला, कार और बचत बैंक में जमा पैसा भी! कोई बात नहीं, याद करा दूंगी! अदालत में सब याद दिला दूंगी!.." वह कुछ देर तक चिल्लाती रही। फिर शायद उसकी ताक़त जवाब देने लगी और वह तख्ते पर बैठकर हाथों से माथा पकड़े हुए फूट-फूटकर रोने लगी। तब रशीद एक गिलास पानी लेकर उसके पास गया।

"अब शान्त हो जाओ ज़रा," वह बोला, "लो, पानी पी लो," पर वह उसे धकेलने लगी।

"तू खुद शान्ति से बैठा रह, नीच... जा, जा, अगर पसंद नहीं आता, तो एक बार फिर तलाक़ की अर्ज़ी दे दे! अब तो तू अगर घुटनों के बल बैठकर भी मिन्नत करेगा, तो भी कभी माफ़ नहीं करूंगी

तुझे। इसकी उम्मीद भी मत रख। खूब मज़ा चखाऊंगी तुझे।"

"कितनी शर्म की बात है," रशीद ने उसके चुप होते ही कहा। वह बहुत ही प्यार से धीरे-धीरे बोल रहा था, मानो कोई दुरूह बात समझा रहा हो। "तुमने आखिर मेरे बारे में ऐसा सोच कैसे लिया? मैं उसे फ़ोन आखिर किस लिए करना चाहता था? उनमें सुलह कराने के लिए। मैं नहीं चाहता कि उनका परिवार उजड़ जाये। मैं फ़ोन करना चाहता था, फिर मैंने इरादा बदल दिया, मैंने सोचा, लोगों के दिमाग़ों में न जाने कैसे कैसे विचार आने लगेंगे, इसीलिए मैंने फ़ोन नहीं किया। जब तुम्हारे जैसे मेरे सबसे क़रीबी आदमी को ही ऐसा लगता है, तो फिर दूसरों का तो कहना ही क्या। मैंने फ़ोन नहीं किया, अपने बच्चों की क़सम खाकर कहता हूं। अगर मैंने फ़ोन किया हो, तो सबके सब एक के बाद एक मेरी आंखों के सामने ही मर जायें... तुम्हें विश्वास नहीं होता? तुम तो आखिर जानती ही हो कि मैं कैसा आदमी हूं।"

"मैं तुम्हें अच्छी तरह जानती हूं," आदीला ने कहा। अब वह ज़रा धीमी आवाज़ में रो रही थी। "तुम अपनी ऐसी कहानियां दूसरे लोगों को ही सुनाते रहना, शायद वे विश्वास कर लें।"

"अच्छा, अब बस भी करो," रशीद बोला। वह बहुत ही उदास हो गया था। "ज़रा देखो तो, क्या हालत कर ली है तुमने अपनी... बच्चे भी रो रहे हैं।"

"पर तुमने मुझे क्यों नहीं बताया कि तुम उसे फ़ोन करना चाहते हो?"

"क्योंकि तुम शक्की हो। क्योंकि तुम हमेशा डाह के मारे पागल हो उठती हो... अच्छा, छोड़ो, ग़लती हो गयी। अब मैं समझ गया कि मुझे तुमसे सलाह कर लेनी चाहिए थी, बल्कि इससे भी बेहतर होता कि हम दोनों ही साथ फ़ोन करते उसे। पर अब मेहरबानी करके शान्त हो जाओ।" वह यूं तो उससे बहुत प्यार से बात कर रहा था, पर मुझे लगा कि वह उससे बेहद घृणा करता है... या शायद यह मेरा भ्रम था।

ये लोग चले गये। आदीला रशीद के साथ आगे आगे चल रही थी। वह एक हाथ से बेटे को अपने से सटाये चल रहा था और दूसरा आदीला के कंधे पर रखे। पीछे पीछे बेटियां चल रही थीं। मैं और

दादी मेज़ पर बैठे एक दूसरे की ओर देखते हुए सोच रहे थे – अच्छा खाना रहा आज का!

हमने कुछ बोले बिना मेज़ साफ़ की। फिर मैंने दादी से पूछा : "तुम्हें मालूम है कि रशीद कामील चाचा का बंगला अपनी बहन के नाम पर उनसे खरीदना चाहता है?" उन्होंने जैसे मेरी बात सुनी ही नहीं। वे बैठी तो मेरे सामने थीं, पर उनकी आंखों से लगता था कि अपने खयालों की दुनिया में कहीं बहुत दूर पहुंच गयी हैं। "तुम क्या सोच रही हो, दादी?"

"अचानक शहलार बेग की याद आ गयी। खुदा उनको जन्नत नसीब करे," दादी बोलीं। "मुझे याद आया कि जब ज़रीफ़ा उनसे ताश के खेल में जीतती थी, तो वे कैसे बालकनी में बैठे गुस्सा होते रहते थे।"

"वह शायद हमारा बंगला भी खरीदना चाहता है," मैंने कहा, "क्योंकि कामील चाचा से उसका सौदा नहीं पट सका है।"

"शायद, चाहता है," दादी बोलीं। "एक-दो साल में खरीद लेगा। जब तुम्हारे मां-बाप हर साल गर्मियों में जंगली बकरे-बकरियों की तरह पहाड़ों में भटकते रहेंगे, तो किसे ज़रूरत रह जायेगी इस बंगले की।"

"उनकी बात छोड़िये। पर मैं और तुम? हमें तो उसकी ज़रूरत रहेगी।"

"तुम अगली गर्मियों में उनके साथ जाओगे। ठीक है न? और मैं एक-दो साल में... मेरा काम ऐसे ही चल जायेगा।"

"नहीं," मैंने कहा। "तुम यहीं रहोगी। मैं तुमसे मिलने आता रहूंगा। ठीक है न?"

"ठीक है," दादी ने कहा और मेरे सिर पर हाथ फेरा। "ठीक है।" वे मुस्करा दीं। "हां, रशीद अगर मेरे पास आया, तो मैं उससे कह दूंगी कि हमें न कुछ बेचना है और न ही हमने कभी कुछ बेचा है... तुम अभी छोटे हो, ऐसी बातें कैसे समझोगे।"

मैं भला छोटा हूं? हां, छोटा भले ही सही, पर अंधविश्वासी तो नहीं हूं।

"दादी, अगर उल्लू किसी के घर के पास हर रात को आकर बोलने लगे, तो क्या कोई सचमुच मर सकता है?"

"नहीं, उसके लिए मरना बिलकुल ज़रूरी नहीं है। मैं तुम्हें बता तो चुकी हूं कि या तो वह मर जायेगा, या उसके साथ कोई बुरी बात हो जायेगी।"

"और क्या इसके अपवाद बिलकुल नहीं होते?"

"बिलकुल नहीं," दादी ने मेरी तरफ़ ध्यान से देखा और फिर मेरे पास आकर बैठ गयीं। "अरे, तुम फ़िक्र मत करो, मेरे लाड़ले, जब तक मैं तुम्हारे पास हूं, तुम्हें कुछ नहीं होनेवाला। समझे?" उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा।

देखा आपने? यानी वे यही नहीं सोच रही थीं कि मैं उल्लूवाले अपशकुन में विश्वास करता हूं, बल्कि यह भी कि मुझे खुद अपने मरने की फ़िक्र लगी है। है ना मज़ेदार बात? अपने आप को वे क्या मेरे पास लगा कोई तड़ित-चालक जैसा समझती हैं, जो मुझ पर टूटनेवाली हर बला को टाल देंगी? अब पाप लगे या न लगे, कामील चाचा के आते ही मैं उनसे कह दूंगा कि वे उस उल्लू को गोली मार दें। लेकिन बड़ी अजीब बात है कि वे अभी तक लौटे नहीं हैं। वे अकसर रशीद के लौटने के ज़्यादा से ज़्यादा चालीस मिनट बाद तक आ जाते हैं।

मैंने थोड़ी देर एक किताब पढ़ी, फिर थोड़ी देर टेलीविज़न देखा, इस वक़्त तक बाहर गहरा अंधेरा हो चुका था, पर उनका कुछ अता-पता ही नहीं था। मैं बालकनी में निकला और बैठकर इंतज़ार करने लगा।

बारिश होने लगी। पहले बूंदा-बांदी हुई, फिर ऐसी झड़ी लगी कि बस पूछिये मत, अरसे से नहीं हुई थी ऐसी बारिश। आज प्रकृति अपनी करनी पर उतर आयी लगती है – सुबह कोहरा छाया रहा, शाम को मूसलाधार वर्षा होने लगी। दादी भी बालकनी में निकल आयीं, बोलीं : "बड़ी बेमौसम की बारिश है यह – अंजीर की फ़सल खराब हो जायेगी।" समझ में नहीं आता कि यह अच्छा शकुन है या बुरा। दादी ऐसा कहती हैं, तो यह अपशकुन भी हो सकता है या फिर मौसम की भविष्यवाणी भी। दस दिन बाद देखेंगे कि कैसी फ़सल होती है अंजीर की। कामील चाचा अभी तक नहीं आये थे, उन्होंने लौटने में कभी इतनी देर नहीं की थी। बिजली लगातार कौंधे जा रही थी। लगता था जैसे कोई ऊपर बिजली के सॉकेट में बार-बार

क़ैंची घुसाता जा रहा था। एक बार मैंने बेवक़ूफ़ी से ऐसी शरारत कर भी डाली थी – पहले तो चिनगारियां निकलीं, फिर ओज़ोन की ऐसी ही बू फैल गयी थी। तब पहले तो दादी ने मुझे डांट लगायी और इसके बाद मां ने काम से लौटने पर। मतलब तमाशा अच्छा रहा, एक रोशनी को छोड़कर। कहीं कामील चाचा को कुछ हो तो नहीं गया? ऐसी बिजली कौंधती हो, तो कुछ भी हो सकता है। पिछली गर्मियों में रेत में मैंने भूरा कांच देखा था – बिजली गिरने की निशानी! और अगर ऐसी बिजली आदमी पर गिरे, तो? बाद में इसे उल्लू के कारण हुई घटना बताना आसान होता है। लगता है, उन्हें सचमुच कुछ हो गया है, आखिर वे अभी तक लौटे नहीं हैं।

दादी फिर बालकनी में आयीं।

"तुम यहां अंधेरे में क्यों बैठे हो? कुछ गरम पहन लो, देखो कैसे ठिठुरे जा रहे हो ठण्ड से।"

"कामील चाचा को कुछ हो गया है क्या?"

"तुम क्यों सोचते हो ऐसा?"

"अभी तक उनका कोई नाम-निशान नहीं।"

"ऊटपटांग बातें मत सोचो... उन्हें कुछ नहीं हुआ। देखो उधर, वे आ रहे हैं तुम्हारे कामील चाचा।"

कितनी खुशी हुई मुझे उन्हें देखकर! आखिर क्यों? आदमी शहर से अपने बंगले पर लौट आया है, बारिश में भीगता, बड़ी बेफ़िक्री से अंगूर की बेलों को लांघता हुआ चल रहा है, किसी तरह की जल्दी नहीं है उसे और मैं बैठा-बैठा खुश हो रहा हूं! यह अच्छा है कि कोई मुझे देख नहीं रहा है।

"तुम कहां चल दिये?"

"एक मिनट में आता हूं। बस एक बात पूछ आऊं उनसे।"

"नहीं, तुम गरम कपड़े पहने बिना कहीं नहीं जाओगे। मैं नहीं चाहती कि जुकाम लग जाने पर मुझे तुम्हारी तीमारदारी करनी पड़े।"

उनका बंगला बग़ल में ही था, पर भागकर वहां पहुंचते पहुंचते मैं बुरी तरह तर हो गया। मैंने बस उनकी बालकनी में पहुंचकर ही दम लिया। भागकर अहाते में से निकलते वक़्त कौंधती बिजली में सब नज़र आ रहा था, पर वहां पहुंचते ही ऐसा अंधेरा हो गया

कि कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। कमरे का दरवाज़ा खुला हुआ था, लेकिन अंदर और भी ज्यादा अंधेरा था। घर में जैसे कोई था ही नहीं, घुप अंधेरा छाया था। मैं देहलीज़ पर रुक गया। सिर्फ़ हवा की सांय-सांय और अंगूर के पत्तों पर पड़ती बारिश की आवाज़ सुनाई दे रही थी, लगा जैसे बूंदें गत्ते पर पड़ रही हों।

"सलाम," कामील चाचा ने उठकर बिजली जलायी और फिर आरामकुरसी पर बैठ गये। वे जैसे भीगे कपड़े पहने अंधेरे में बैठे थे, वैसे ही बैठे रहे। मेरी ओर देखकर मुस्कराते रहे, पर उनके चेहरे पर थकान नज़र आ रही थी।

मैंने देहलीज़ से ही पूछा:

"कामील चाचा, आप क्या मरने जा रहे हैं?" पूछते ही लगा कि कैसी बेवक़ूफ़ी की बात कर रहा हूं, पर अपने आपको रोक नहीं पाया। इतनी बेवक़ूफ़ी का सवाल था कि मैं आख़िरी शब्द मुंह से निकलने तक खुद ही हैरान रह गया। वे हंसकर बोले:

"बस देखते रहो!"

मैंने मन-ही-मन सोचा कि अभी "अलविदा" कहकर चला जाऊंगा।

"इस बारे में तुम्हारे पास क्या कोई पक्का आधार है?"

मैं क्या कह सकता था? चुप रहा। वे उठकर मेरे पास आये और मेरे गलबहियां डालकर बोले:

"तुम बिलकुल भीग गये हो। जाकेट उतार दो, मैं अभी चाय बनाता हूं।"

हमने थोड़ी देर बातें कीं। उन्होंने कहा कि उन्हें काम पर रुकना पड़ गया था, इसीलिए देर हो गयी, सोमवार को उन्हें मासिक रिपोर्ट तैयार करके देनी है। जिस तरह से वे बात कर रहे थे, उससे मालूम हो रहा था कि उन्हें अपने काम से कितनी नफ़रत है।

फिर वे अचानक कह उठे:

"मैं ज़रूर मर जाऊंगा। लेकिन इतनी जल्दी नहीं। तुम्हें मालूम है, मुझे अभी कितना काम करना है? अगर चाहूं, तो भी उसे पूरा किये बग़ैर नहीं मर सकूंगा।"

यह स्पष्ट था कि वे अपने इंजीनियरिंग के काम के बारे में यह नहीं कह रहे थे। इसका मतलब यही था कि वे अपनी आख़िरी सांस तक दिन-रात टाइपराइटर खटखटाते रहेंगे। पहले वे कम-से-कम बोलकर

टाइप करते रहते थे, पर अब तो सुननेवाला भी कोई नहीं रहा था।

"पर क्यों करते हैं आप यह सब? आप बराबर लिखते रहते हैं, जबकि कोई उन्हें छापता तो है ही नहीं।"

मैंने जब यह बात कही, तो वे मेरे लिए चाय डाल रहे थे। उनके आंख के ऊपर की नस फड़की और भौंहें सिकुड़ गयीं। उन्होंने गिलास मेरे सामने रखकर मुझ पर नज़र डाली और सिर हिलाया।

"खूब कही तुमने भी!" उन्होंने हंसकर अपने गिलास में चाय डाली। "खूब अच्छा दोस्त मिला है मुझे!" अकसर दस बजते ही दादी मुझे आवाज़ देकर घर बुलाने लगती थीं, पर अब पौने ग्यारह बज रहे थे और दादी की आवाज अभी तक सुनाई नहीं दी थी।

"कुछ दिन सब्र करो। मेरी रचनाएं छपेंगी। यह नहीं कह सकता कि कब छपना शुरू होंगी – कल, एक महीने में या एक साल में, पर छपेंगी ज़रूर। तुम खुद देख लेना, तब तक तुम्हें मेरी बात का विश्वास करना होगा। कम से कम तुम्हें तो करना ही चाहिए, इतनी तो मेहरबानी करो," उन्होंने काफ़ी गम्भीरता से कहा।

मुझे जहाज़ियों की क़मीज़वाले उस मछलीमार की याद आ गयी। मैंने उसकी बातों पर भी तुरन्त विश्वास कर लिया था, जब उसने कहा था कि वह तीसरी स्टर्जियन भी पकड़ लेगा, हालांकि मैं उससे पहली बार मिला था।

"मुझे आप पर विश्वास है, क़सम से विश्वास है, कामील चाचा।"

"मेरी रचनाएं छपेंगी तो सही," उन्होंने सोच में डूबे हुए कहा, मानो अपने आप से बात कर रहे हों, "लेकिन मेरे लिए अभी यही सबसे अहम बात नहीं है।" फिर उन्होंने मुझसे पूछा: "क्या तुम्हें मालूम है कि इनसान के लिए ज़िंदगी में सबसे अहम क्या है?"

"नहीं। क्या है?"

"क्या तुम अंदाज़ भी नहीं लगा सकते?"

"न... नहीं," मैंने सोचकर कहा।

"यह तो बहुत बुरी बात है," उन्होंने निराशा से कहा। "दो अक़्लमंद आदमी भी एक सीधे-से सवाल का जवाब नहीं सोच सकते।" उन्होंने मुझे आंख मारी और मैं समझ गया कि वे मज़ाक़ कर रहे हैं।

मैंने उन्हें आज का हमारा मछलियोंवाला पूरा क़िस्सा सुना दिया।

सुनाते वक़्त उन्होंने मुझसे एक भी सवाल नहीं पूछा, पर सुना सब बड़े ध्यान से।

"तुम्हें वह ज़रूर मिलेगा," उन्होंने कहा। "जहाज़ियों की क़मीज़-वाले उस लड़के जैसे लोग यूं ही ग़ायब नहीं हो जाते हैं। तुम तब उसे पूरी बात समझा देना और वह समझ जायेगा। तुम्हें दिल छोटा नहीं करना चाहिए। हुआ बहुत बुरा, पर इसमें दोष तुम्हारा नहीं था।"

मैंने उनसे यह नहीं कहा था कि मुझे दुख हो रहा है। हम चुप बैठे रहे। वर्षा के शोर और समुद्र की गरज के अलावा और कोई आवाज़ नहीं सुनाई दे रही थी। मैं सुबह तक ऐसे ही बैठा रह सकता था, चाहे हम बातें करते रहते या मौन बैठे रहते।

कामील चाचा सोच में डूबे बैठे थे, उनके चेहरे पर फिर थकान झलकने लगी थी। मुझे अचानक याद आया कि मैं तो उनसे उल्लू को गोली मारने को कहने आया था।

अचानक बिजली की हल्की-सी कौंध में मुझे लगा जैसे मुझे अंधेरे में किसी चीज़ की झलक दिखाई दी है।

"लगता है, कोई आ रहा है।"

"अरे, नहीं, तुम्हें शायद भ्रम हुआ है," वे उठे और रेलिंग पर कोहनियां टिकाकर अंधेरे में ध्यान से देखने लगे। "नहीं, कोई नहीं है।"

"नहीं, कोई इधर आ रहा है।"

हमने देखा कि वह नाईला है। वह सीढ़ियों के पास रुक गयी और वहीं खड़ी रही। वह पूरी भीग चुकी थी, लेकिन न जाने क्यों, वह पोर्च के नीचे आकर नहीं खड़ी हो रही थी। मैंने कामील चाचा की तरफ़ देखा, मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि वे चुप क्यों हैं। वे जैसे उसे देख ही नहीं रहे थे। वे निःशब्द सीढ़ियों की ओर बढ़े और उनके पीछे-पीछे मैं भी। हम दोनों साथ ही सीढ़ियों से नीचे उतरे। हम नाईला के पास पहुंचे। कामील चाचा कुछ नहीं बोले, यहां तक कि तब भी जब उसने पूछा:

"तुम क्या चाहते हो कि मैं चली जाऊं?"

कैसे सनकी हैं! यह भी नहीं समझते कि अपने ख़ाली घर से सिर्फ़ तीन क़दम दूर खड़े हैं, पर झड़ी में भीगते हुए एक दूसरे को

चूमे जा रहे हैं! हंसी आती है देखकर!

मैं अपने घर चल दिया, हालांकि दादी ने मुझे आवाज़ नहीं दी थी। वे बैठी कुछ बुन रही थीं। मैंने उन्हें बता दिया कि नाईला लौट आयी है।

"क्यों, क्या कहा था मैंने तुमसे?" दादी तुरन्त खुश हो उठीं। "अब तो यक़ीन हो गया न कि उल्लू का बोलना अच्छा शकुन था?"

"क्या कह रही हो, दादी? तुम्हीं ने तो कहा था कि ज़रूर कुछ बुरा होगा, पर यहां तो एक आदमी की बीवी उसके पास लौट आयी है। इसमें बुरा क्या हुआ?"

"इसमें अच्छा ही क्या है? वह लौट आयी। तुम क्या सोचते हो, उसके लिए यह क्या कम है? बल्कि ज़रूरत से ज़्यादा ही होगा।"

मैं खड़ा सोचता रहा, कहीं वे मज़ाक़ तो नहीं कर रही हैं। मैंने उनके साथ बहस नहीं की। मैंने उस दिन सुबह से ही उनसे बहस न करने का फ़ैसला कर लिया था। अगर मेरी दादी समेत दुनिया के सारे लोग हर बात के बारे में एक ही तरीक़े से सोचने लगें, तो इसका कोई अच्छा नतीजा तो कभी निकलेगा नहीं।

घर में सन्नाटा छाया था। दादी भी लेट चुकी थीं। बाहर से केवल बारिश का शोर सुनाई दे रहा था। मुझे कुछ याद करने की इच्छा हो रही थी, पर पूरी कोशिश के बावजूद कुछ भी याद नहीं आ रहा था। सारा दोष वर्षा का था, उसके कारण आंखें अपने आप मुंदी जा रही थीं।

"दादी," मैंने याददाश्त पर पूरा ज़ोर देकर पूछा। "इनसान के लिए ज़िंदगी में सबसे अहम क्या होता है?"

"सबसे अहम?" दादी ने सवाल दोहराया और सोच में डूब गयीं। मुझे लगा कि वे सो गयी हैं। "मेरे खयाल में," वे आखिर बोलीं, "ग़ायली में यह सिर्फ़ एक ही आदमी को मालूम है – रशीद को। सुबह उससे पूछ लेना," उन्होंने सलाह दी, "अच्छा, अब सो जाओ और ऐसे बेवक़ूफ़ी के सवाल मत पूछो। शब-बख़ैर।" मैं उन्हें देख नहीं रहा था, पर मुझे साफ़ महसूस हो रहा था कि वे मुस्करा रही हैं, आख़िर मैं तो उन्हें अच्छी तरह जानता हूं।

उस रात उल्लू नहीं आया।

हम सब साथ रहेंगे

पहला अध्याय

सब चुप थे। पर वे और कर भी क्या सकते थे? मनुष्य को निश्चिन्त होकर आराम करने के लिए शांति तो अवश्य ही चाहिए। अगर हम बंद दरवाज़े के उस ओर से आ रहे दबे शोर, एयर-कंडीशनरों की घरघराहट और खर्राटों की ओर, जो कभी चटकारों में बदल जाते थे, कोई ध्यान न देते, तो कहा जा सकता था कि हमारे विश्राम-कक्ष में शान्ति व्याप्त थी।

मैं भी चुप था, पर साथ ही यह भी महसूस कर रहा था कि मेरे शरीर में उन नसों की संख्या कितनी बढ़ती जा रही है, जिनमें खून सूखता जा रहा है। यह प्रक्रिया तब और भी तेज़ हो उठी, जब रह-रहकर हो रही खर्र-खर्र घृणास्पद कर्णकटु सीटी के साथ मिलकर अनवरत घुरघुर में बदल गयी।

लड़कों ने एक दूसरे से नज़रें मिलायीं, पर किसी ने भी अपनी जगह से सरकने की नहीं सोची। आखिर तो हर किसी को हक़ है कि वह जहां चाहे, वहां झपकी ले ले। और जब यह सोनेवाला आर्केस्ट्रा का कंडक्टर हो, जिसका उपनाम चट्टान पियानोवादन में उसकी दक्षता के लिए न पड़ा हो, तो स्पष्ट है कि उसे जैसे वह चाहे, सोने का पूरा अधिकार है।

वह पलक झपकते किसी भी हालत में सो सकता है। मैंने सैमूर को एक बार एस्केलेटर पर खड़े-खड़े सोते देखा था। तब उसकी नींद फ़र्श पर क़दम रखने का क्षण आते ही खुली थी।

दो जोड़ी पैरों को लांघकर मैं सैमूर के पास पहुंचा। वह आराम-कुरसी की पीठ पर सिर टिकाये, बल्कि कहना चाहिए सिर पीछे

को लटकाये सो रहा था। उसका मुंह और खुली टाई तले उभरा हुआ ज़बर्दस्त टेंटुआ एम्पलिफ़ायरवाले लाउडस्पीकर का काम कर रहे थे। जासूसी फ़िल्मों में जैसे ही भागते जासूस के पलटकर अपनी साइलेंसरवाली पिस्तौल से दो और गोलियां रखवाले कुत्ते पर दाग़ने पर उसकी तेज़ भौं-भौं और गुर्राहट तुरन्त बंद हो जाती है, वैसे ही ये आवाज़ें सैमूर के कंधे पर मेरे हाथ रखते ही थम गयीं।

"दोस्तों को आखिर आज हो क्या गया है?" मैंने नरम से नरम आवाज़ में पूछा। "ओ, माफ़ करना, लगता है तुम सो रहे थे?"

उसने अपनी लाल-लाल आंखों से मुझे घूरा।

"मैं खर्राटे ले रहा था क्या?"

"तुम? तुम बस मेरी बात का ग़लत मतलब न लगाना," आदिल ने अपनी आराम-कुरसी पर बैठे-बैठे कहा। "मेरी जान-पहचान की एक बैलेरिना को लगता था कि वह खर्राटे लेती है। इसलिए उसने डाक्टरों को किसी तरह अपने टांसिल निकाल डालने के लिए मना ही लिया। बेचारी इतनी शर्माती थी कि उसने सोना तक छोड़ दिया था।"

"किसके साथ?" इसका मतलब यही था कि सैमूर पूरी तरह जाग चुका है। वह चुटकी लेने का कोई भी मौक़ा कभी हाथ से नहीं जाने देता। हंसी-मज़ाक़ करने में उसका कोई जवाब नहीं। मेरा बस चलता, तो मैं उसके मज़ाक़ों को खास तरह के टैंकरों में भरकर शहर के बाहर ले जाकर बग़ीचों और खेतों में डाल देता, ताकि फल-सब्ज़ियों की पैदावार बढ़े। "तुम क्या कहना चाहते थे?" उसने मुझसे पूछा।

"आज उन सब को हो क्या गया है? और तुम खुद भी कुछ ठीक हालत में नहीं हो।"

यह बिलकुल सच था। आज हम सबमें ताल-मेल बैठ ही नहीं पा रहा था। मुझे याद नहीं आता कि पिछली बार ऐसा हमारे साथ कब हुआ था। नौ आदमी स्टेज पर बैठे एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाते रहे, पसीने से लथपथ भी हो गये, पर कोई फ़ायदा नहीं, बल्कि उसका उलटा ही हुआ।

"इसमें कहने की कोई बात ही नहीं, आज का कंसर्ट फ़र्स्ट क्लास नहीं रहा," सैमूर ने सहमति व्यक्त की। "पर दूसरी तरफ़ से देखा जाये, तो जितने पैसे हमें यहां मिलते हैं, उसके हिसाब से कंसर्ट ठीक

ही रहा। [illegible] सो हम ठीक हालत में नहीं थे। क्यों, ठीक कहता हूं, न?"

किवाड़ पर हलकी-सी दस्तक हुई और देहलीज़ पर वालंटियर-गार्ड नज़र आया।

"एक आदमी आपसे मिलना चाहता है," उसने सैमूर से कहा।

"आदमी?" सैमूर ने आश्चर्यचकित से पूछा। "यहां आ कैसे गया?" उसने हमारी तरफ़ देखा और हमने मुस्कराकर अपनी सहमति व्यक्त की। केवल आदिल नहीं मुस्कराया। उसे सब माफ़ था। "क्या हॉल में से आया है?"

अन्तिम प्रश्न बेतुका था। वालंटियर इसीलिए तो दरवाज़े पर तैनात रहते थे, ताकि हम कला के मिलनसार परखियों से बचे रहकर थोड़ी देर आराम कर सकें। हर मिनट कोई-कोई हमारे कमरे में अपना सिर ठूंसने की कोशिश करता ही रहता है। पर वालंटियर उन्हें रोक देते हैं। किसी को शिष्टतापूर्वक, किसी को खास क़िस्म के इशारों से।

"नहीं," वालंटियर बोला। "अधेड़ है। देखने में कोई बॉस नज़र आता है।"

"आने दो," सैमूर ने कहा और शीशे के पास जाकर दरवाज़े की ओर पीठ किये धीरे-धीरे अपनी टाई की गांठ लगाने लगा।

नहीं, वह किसी बॉस जैसा नहीं दिखता था। उसने हैट नहीं उतारा, लेकिन उसकी चांद फ़ेल्ट में से चमकती-सी नज़र आ रही थी। कुछ ऐसे लोग भी होते हैं, जो हैट भी पहने हुए गंजे-से लगते हैं। बाप रे! उसकी नाक पर लाल नसें उभरी हुई थीं और आंखों के नीचे खाल लटकी हुई थी। उसका सूट भूरा था। यानी वह पूरा का पूरा भूरा था, पर आगे से पैंट और कोट के पल्ले गहरे भूरे थे। यह शायद नाश्ते के लिए कुछ खास क़िस्म का सूट था। सच कहूं, तो आंखों, मूंछों और जूतों समेत उसके पूरे व्यक्तित्व में मुझे उसका बैग सबसे ज़्यादा पसंद आया। बिलकुल मोटे, भूरे कुत्ते जैसा लग रहा था, जहां मालिक जाये, कुत्ता भी वहीं। पर अब वह उसके पैरों के पास गठरी बना पड़ा था, न थूथनी नज़र आ रही थी, न ही दुम।

"सलाम-अलैकुम, मैं आपके पास एक काम से आया हूं। आपके लिए एक खुशखबरी लेकर आया हूं।" उसने बैग खोलकर उसमें से एक काग़ज़ निकाला और फिर दूसरा निकालने के लिए उसमें टटोलने लगा।

"एक बात हमें शुरू में ही तय कर लेनी चाहिए। हम जनाज़ों और दूसरे मौक़ों पर नहीं गाते-बजाते हैं," सैमूर ने उसे बताया और हम सबने एक साथ सहमति में सिर हिला दिये।

"मज़ाक़ लाजवाब है। सुरुचिपूर्ण है और सारा मामला साफ़ भी कर देता है।" उसने बैग से नज़र उठायी और सैमूर को एकटक देखने लगा। उसने पहले अपनी पूरी बात अत्यन्त गम्भीर मुद्रा में कही और फिर सैमूर से मुस्करा दिया। मुस्कान क्या, कहिए पूरी बत्तीसी ही दिखा दी, सोने, क्रोम और प्लास्टिक से जड़ी। बस, चुप खड़ा यूं ही मुस्कराता रहा।

सैमूर ने थोड़े रुककर पूछा:

"हां, तो किस काम से आना हुआ आपका?"

"मैं फ़िलारमोनी की तरफ़ से आपके पास आया हूं। आपके फ़ायदे का काम है। बहुत ही फ़ायदे का!" उसने हर हिज्जे पर ज़ोर देते हुए कहा।

"पर फ़िलारमोनी को बेशक इससे सिर्फ़ नुक़सान ही होगा," सैमूर ने उसके सुर में सुर मिलाते हुए कहा।

"आपको इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है," आगन्तुक ने निरानन्द स्वर में कहा, "कि उसे फ़ायदा होगा या नुक़सान? फ़िलारमोनी कोई आदमी तो है नहीं, वह तो महज एक इमारत है। आप अपने बारे में सोचिये ज़रा। आपको तो सचमुच इससे फ़ायदा ही होना है। और अगर मेरी राय जानना चाहें, तो आपको सुनहरा मौक़ा मिला है।"

मैंने अब जाकर देखा कि उसकी आंखों में कितनी चालाकी भरी तेज़ चमक है। है तो कांइयां!

"फ़िलारमोनी ने आपके आर्केस्ट्रा, ग़ैरपेशेवर आर्केस्ट्रा को, गर्मियों में क्रीमिया और काले समुद्र तट पर कंसर्ट देने का प्रस्ताव किया है। दिन में दो-तीन कंसर्ट देने होंगे। याल्ता, सिमेइज़, गागरा, सेवास्तोपोल वग़ैरह में। रहेंगे आलीशान होटलों में," वह ध्यानपूर्वक सुनने लगा। मुझे लगा जैसे वह तीसरी घंटी बजने के एक-दो सैकेंड

पहले ही उसे सुन चुका था, हालांकि ऐसा हो ही नहीं सकता था, मुझे यह भ्रम ही हुआ होगा।

"काम के बारे में बात बाद में करेंगे," सैमूर ने सख्ती से कहा।

इसमें सोचने की बात ही क्या है?! ऐसा मौक़ा तो सपने तक में देखने को नहीं मिलेगा! गर्मियों का पूरा मौसम क्रीमिया में! सैमूर यह चाल आर्केस्ट्रा के भाव चढ़ाने के लिए चल रहा है। कहीं यह आदमी अचानक अपना इरादा बदलकर चला गया तो? हो सकता है यह जल्दी बुरा मान जानेवाला हो। हमें ग़ैरपेशेवर आर्केस्ट्रा कहकर उसने बेशक ग़लती की है। बाकू में इसकी जोड़ का आर्केस्ट्रा ढूंढ़े नहीं मिलेगा। और हम दोस्तों में से हरेक मंजा हुआ कलाकार है, चाहे वह स्वरलिपि देखकर बजाता हो, चाहे देखे बिना ही। सैमूर को ही लीजिये, वह पहले दर्जे का पियानोवादक है...

"मैं जल्दी में नहीं हूं," बैग के मालिक ने कहा और मुस्करा दिया, इस तरह कि उसके मुंह के सारे धातुओं में से कुछ कैरट हम सबके हिस्से में आ गये। "आपकी इजाजत हो, तो मैं नेपथ्य में खड़े-खड़े आपका कंसर्ट थोड़ी देर सुन लूं..."

हम सब कमरे से बाहर निकल आये। मैंने महसूस किया कि आदिल मेरी आस्तीन पकड़कर खींच रहा है।

"इसे पहचाना?! तुम्हें आखिर क्या हुआ है? अरे, यह तो हमारा पुराना पड़ोसी है। हमारे सामनेवाले घर में रहता था।"

मैं अपने बचपन के बारे में विरले ही सोचा करता हूं। या तो इसकी इच्छा ही नहीं होती, या फिर याद ही नहीं आता। स्टेज पर पहुंचने तक मुझे उस आदमी की याद आ ही गयी।

"नहीं, वह नहीं हो सकता!"

आदिल ने सिर हिलाया।

"वही है, वही है।"

क्या कोई सचमुच इतना बदल सकता है? बिलकुल दूसरा ही आदमी लगता है। लेकिन देखा जाये, तो हम भी बिलकुल बदल चुके हैं। वह शायद हमसे पन्द्रह साल बड़ा है। आर्केस्ट्रा में वह वायलन-चेलो बजाता था और घर पर पियानो। नेपथ्य में पहुंचते-पहुंचते मुझे सब अच्छी तरह याद आ गया। वह जब पियानो बजाता था, तो सारी गली में सुनाई देता था, ख़ास तौर से गर्मियों की शामों को।

और जब वह एक धुन बजाने लगता, जिसे वह अकसर बजाया करता था, तो मैं तुरन्त अपनी बालकनी से हट जाता था, अगर मैं अकेला नहीं होता था, क्योंकि उसको सुनते ही न जाने क्यों मेरी आंखों में आंसू उमड़ पड़ते थे। इससे मिनट भर पहले मैं सामान्य ढंग से बात कर रहा होता था, पर उसके बजाना शुरू करते ही मेरी आंखें नम हो उठती थीं। मुझे बाद में पता चला कि वह शॉपेन का रिवोल्यूशनरी एट्यूड बजाया करता था।

उसके घर में अकसर लोग जमा हुआ करते थे। देर रात गये तक उनका हंसी-मज़ाक़ सुनाई देता रहता था। मैं उसके घर कभी नहीं गया था, लेकिन एक शाम मुझे काफ़ी दिनों के लिए याद रह गयी। मुझे इस समय भी वह ऐसे याद हो आयी, जैसे वह पन्द्रह वर्ष पहले की नहीं, बल्कि कल ही की बात हो।

मैं अपनी गली की तरफ़वाली बालकनी में गया। मैंने देखा कि सामनेवाले घर की सारी खिड़कियों में अंधेरा छाया है, सिर्फ़ जलती सिगरेटें रह-रहकर ऐसे ऊपर और नीचे हो रही थीं, मानो वे जुगनूं हों। वे जैसे उड़कर चक्कर काट रही थीं और फिर बैठ रही थीं। अंधेरे में एक स्त्री कविता-पाठ कर रही थी। मुझे उसके इत्र की ख़ुशबू अभी तक याद है। मैंने वह ख़ुशबू केवल एक बार सूंघी थी और वह सदा के लिए मेरे मन में बस गयी थी। कितना अच्छा कविता-पाठ कर रही थी वह! मैं उस वक़्त शायद उनींदा था, क्योंकि मुझे अंधेरे में उसके बोल तैरते-से दिखाई दे रहे थे। सच मानिये, मैं उन्हें अपनी आंखों से देख रहा था। मुझे हमेशा डर रहता है कि कहीं मैं यह भूल जाऊं कि मैंने उन शब्दों को वास्तव में देखा था और फिर शायद सोचने लगूं कि यह मेरा भ्रम था। पहले मैं उस शाम को अकसर याद करता रहता था, पर पिछले कुछ अरसे से एक बार भी याद न कर सका। उड़कर लुप्त होने से पहले वे शब्द छोटी-छोटी सीढ़ियों और नुकीले शीर्षोंवाले पिरामिडों में बदल जाते थे और उनसे शीतल जल और चीड़ के शंकुओं की सुगंध आती रहती थी। मैंने उस स्त्री का चेहरा नहीं देखा था, मैं सिर्फ़ उसकी आवाज सुन रहा था, लेकिन मुझे लगा था कि वह आश्चर्यजनक रूप से सुन्दर है, बाद में वह मुझे सपनों में भी दिखाई दी थी... लेकिन उस आदमी को शायद वह शाम बिलकुल याद नहीं रही होगी। उसके यहां लोग अकसर जमा

होते रहते थे। भला कोई सारी शामें याद रख सकता है?

हॉल खचाखच भरा था। तिल धरने की भी जगह न थी, पर फिर भी लोग किसी तरह डांस कर रहे थे। वे सब हम लोगों को स्टेज पर आते देखकर हमारे प्रति आदर व प्रेम के प्रतीक स्वरूप तालियां और सीटियां बजाने लगे। दोस्तों ने बजाना शुरू किया और देखा कि सुर में सुर मिल रहे हैं! पहले पार्ट जैसा बिलकुल न था। कुल जमा नौ आदमी थे, पर स्वर ऐसे गूंज रहे थे, जैसे स्टेज पर बहुत बड़ा आर्केस्ट्रा हो। इसका सारा श्रेय आदिल को है – विभिन्न बाजों पर बजाने के लिये वह ही सारे धुन का रूपांतर कर रहा है। उसने इतने ज़ोर से पूरे की-बोर्ड पर हाथ चलाया, जैसे वह कोई बड़ा आर्केस्ट्रा हो। सो स्वर भी वैसे ही गूंज उठे... फिर सारे ब्रास इंस्ट्रूमेंट बजना शुरू हुए, सब एक साथ। कोई कह सकता है इसे ग़ैरपेशेवर आर्केस्ट्रा! मेरे ख़याल से हमारे आर्केस्ट्रा में सब एक से एक बढ़कर हैं, सब एक नज़र में स्कोर पढ़ लेते हैं और आदिल और सैमूर जैसे वादक तो पूरे देश में ढूंढ़े नहीं मिलें। मैंने ख़ुद कभी कोई ऐसा आदमी नहीं देखा, जो इस तरह इम्प्रोवाइज़ कर सकता हो और वह भी हर बार नये ही ढंग से और किसी भी सुर में। और जब आदिल का मूड अच्छा हो, तो वह लय पर ध्यान दिये बिना ऐसा कमाल करके दिखा सकता है कि संगीत का सच्चा पारखी कंसर्ट ख़त्म हो जाने के बाद भी उससे सिर्फ़ हाथ मिलाने के लिए दो घंटे तक इंतज़ार करता रहे। हाथ मिलाते वक़्त उसके मुंह से एक भी शब्द न निकल पाये। और लोग ऐसा करते भी थे। लेकिन वैसे कुछ मानों में हमारा आर्केस्ट्रा वास्तव में ग़ैरपेशेवर कलाकारों का था, क्योंकि म्यूज़िक स्कूल के सर्टिफ़िकेटों के अलावा हमारे पास कुछ और न था...

...पांच-छः मिनट बाद मुझे स्टेज पर जाना था। मैंने हज़ारों बार अपने आप से वादा किया था कि कंसर्ट के दिन घर पर अच्छी तरह रियाज़ करूंगा और स्टेज पर आने से पहले एकाध घंटा लेटकर आराम करूंगा। पर आज फिर दांतों से लेकर गले तक सब बर्फ़-सा ठण्डा है, ऐसा कि चाहे तो स्केटिंग कर लो। कम-से-कम यहीं थोड़ा रियाज़ कर लेना चाहिए था... ऊपर से यह मेरा पुराना पड़ोसी भी यहां आ जमा है। लेकिन मुझे नर्वस होने की ज़रूरत ही क्या है, आख़िर मुझे किसी कम्पीटीशन में तो गाना नहीं है। जैसा

गाना आता है, वैसा ही गाऊंगा! वह चाहता क्या है? समझ में नहीं आता कि वह थर्मस कहां से ले आया? थर्मस का ढक्कन खोलकर उसमें चाय डाली और कुछ कहे बिना मेरी ओर बढ़ा दी। ज़रूर, टेलीपैथी का असर है। कितनी अच्छी लगी चाय! सादा गरम चाय, पर कैसा जादू दिखाया उसने! अफ़सोस, गिलास भर चाय नहीं पी पाया मैं!

मुझे टटोलते हुए स्टेज पर जाना पड़ा। बेवक़ूफ़ लाइटमैन ने स्पॉटलाइट मेरी आंखों पर जो साधी, तो उसे एक बार भी नहीं हटाया, जब तक कि मैंने जाकर माइक्रोफ़ोन को न पकड़ लिया। माइक्रोफ़ोन हाथ में आते ही मेरा आत्मविश्वास कुछ बढ़ गया। सब ठीक हो रहा है अब, बिलकुल ठीक!

बोरिस ने अपने आर्केस्ट्रा और सोलोइस्ट की प्रतिष्ठा और लोकप्रियता बढ़ाने के लिए ड्रमों पर तड़तड़ातड़ चोट की। हॉल भी मूड में था, सब इतने ज़ोर से तालियां बजा रहे थे, मैं शुरू भी नहीं कर पा रहा था। श्रोताओं पर नज़र डाली, तो देखा जैसे आधा शहर वहां आ जमा हुआ है। ऑयल इंस्टीट्यूट के वार्षिक समारोह के टिकट दो हफ़्ते पहले भी एडवांस में मिलना मुश्किल थे। आज मेडिकल इंस्टीट्यूटवाले उनके मेहमान थे, लेकिन ध्यान से देखा जाता, तो हर इंस्टीट्यूट के लड़के नज़र आ जाते। पर मुझे इधर-उधर देखने की फ़ुरसत नहीं थी, आज मैं कुछ दूसरे ही ख़यालों में खोया था...

मैंने मुड़कर सैमूर को सिर से इशारा किया। उसने अपने पंजे लम्बे-चौड़े होने के बावजूद उन्हें इतने हौले से की-बोर्ड पर रखा कि मैं भी मुश्किल से सुन पाया, पर हॉल में तुरन्त शान्ति छा गयी। मुझे यह बहुत अच्छा लगा। ऐसे लोगों के साथ काम करने में बहुत मज़ा आता है, जो तुम्हारी बात समझते हों। हम पहले से कभी तय नहीं करते कि शुरू किससे करेंगे। सैमूर इसका फ़ैसला हर बार स्टेज पर ही करता है कि मुझे क्या गाना चाहिए। और सबसे आश्चर्य की बात यह होती है कि वह मेरे लिए सदा सबसे उपयुक्त गीत चुनता है और इसमें कभी ग़लती नहीं करता है।

उसे किसी ने भी नहीं बताया था कि मैं आज कुछ ठीक हाल में नहीं हूं, लेकिन उसने जैसे अटकल से "नेकी के फुल" की धुन छेड़ दी, जो मन्द और शान्त स्वर में गाया जानेवाला गीत है। और

मैंने शुरुआत वैसे ही की, जैसे करनी चाहिए थी, शान्त और मन्द स्वर में। आगे फिर अन्त तक स्वर आलापना ही था। आदिल भी कुशलतापूर्वक ऑल्ट बजाने लगा, वह बिलकुल शुद्ध स्वर निकाल रहा था। चांदनी रात, काली नदी। गीत के शब्द सीधे-सादे, हृदय-स्पर्शी, किंचित् भावुक थे, उन फूलों के बारे में जो स्नेह, प्रेमसिक्त दृष्टि और कई अन्य लाभदायक चीजों के बीज वसन्त में बोने पर ग्रीष्म में खिलेंगे। शब्द भी सुखद थे और धुन भी, पर आनन्द बिलकुल नहीं आ रहा था, मानो आर्केस्ट्रा अलग बज रहा हो और मैं अलग गाये जा रहा हूं। हालांकि हॉल में लोग धुन पर डांस भी कर रहे थे, काफी अच्छा, पर लगता था जैसे हमारा गाना सुनकर नहीं, बल्कि अपने साथ लाये टेपरिकार्डर पर बजती धुन पर। मुझे तो ऐसा ही लग रहा था... टेक शुरू हुई। लेकिन यह क्या? ढंग से गा ही नहीं पा रहा हूं। गीत का हर शब्द मुझे पसंद है, मैं पूरे उच्च स्वर में गा रहा हूं, लेकिन मुझे महसूस हो रहा है, जैसे मैं बेसुरा गाये जा रहा हूं और किसी तरह रुक ही नहीं पा रहा हूं। मुझे पक्का पता था कि हॉल में सब लोग अच्छी तरह समझते हैं कि क्या हो रहा है, वे एक दूसरे को आंख मार रहे हैं, मुंह दबाकर हंस रहे हैं। गीत की आखिरी पंक्ति आ गयी! खुदा का शुक्र है! क्या लोग तालियां बजा रहे हैं? हां। पागल हो गये हैं क्या?.. पश्चिम की बुरी आदतों की नक़ल करते हुए पैर पटकने और चीखने-चिल्लाने का शोर नहीं सुनाई दिया, पर कोई पूर्णतः उदासीन भी दिखाई नहीं दिया।

मैं पियानो के पास गया, सैमूर की बाछें खिली थीं, आनन्द के कारण आंखें मिची जा रही थीं।

"क्यों, झांसा दे रहे है मेहनतकशों को?" वह बोला।

कोई भी बात उससे छिपी नहीं रह सकती। काम करते वक़्त उससे एक शब्द भी बोले बिना, सिर्फ़ इशारों में बात की जा सकती थी।

"मैं खुद भी समझता हूं कि ढंग से गा नहीं पा रहा हूं," मैंने कहा। "तुम अगली धुन छेड़कर जितना लंबा खींच सको, खींचो, इतने में मैं एकाध घूंट चाय का लेकर आता हूं।"

"पियानो से एक क़दम भी दूर न हटना! बिना चाय के काम चलाओ!" उसने हॉल में बैठे किसी दर्शक का मुस्कराकर अभिवादन

करते हुए मुझसे कहा। "देखो, बायीं तरफ़ दूसरी खिड़की के पास कौन खड़ी है। देखा? पीली ड्रेसवाली पधारी है।"

यह बात उसने कोड में कही, ताकि आदिल न समझ पाये। वह आल्या थी, यूनिवर्सिटी के तीसरे वर्ष में पढ़ती थी। सैमूर द्वेषपूर्वक फुफकारा, वैसे उसने यह रुख यूं ही अपनी आदत के अनुसार अपनाया होगा, क्योंकि अपनी बीमार नानी के बारे में बात करते वक़्त भी उसकी आंखों में दुर्भावनापूर्ण चमक दिखाई देती रहती है। "उसके कानों को तो देखो," वह बोला।

"किसके?" मैं सचमुच कुछ समझ नहीं पाया।

"हमारे सैक्सोफ़ोनिस्ट के। अपनी दिल की रानी के नज़र आने पर किसी के कान खड़े होते पहली बार देख रहा हूं। प्रकृति का रहस्य है यह।"

"बंद करो, मेहरबानी करके! उसकी तरफ़ मत देखो।" – कोई ढंग से गा सकता है भला ऐसे हालात में! – "तुम्हें क्या अच्छा लगेगा, अगर वह आकर अपना सैक्सोफ़ोन तुम्हारे पियानो के ढक्कन पर दे मारे?!"

यह तरकीब काम कर गयी। वह उस पियानो की पूजा करता है, खुद उस पर से धूल पोंछता है, पियानोट्यूनर को भी अपने सामने ही काम करने देता है। हमें सैलर्स क्लबवालों से उस खटारे पियानो की जगह नया खरीदवाने में पूरे दो साल लगे थे। क़िस्मत से अच्छी चीज़ मिल गयी। "बैक्कर" का ग्रेंडपियानो खरीदना कोई मज़ाक़ थोड़े ही है। क्लब की मरम्मत के दौरान उन्होंने हमें ऑयल इंस्टीट्यूट के हॉल में उसे रखने की इजाज़त दे दी थी, वह भी ढककर रखने की।

सैमूर की मुस्कान काफ़ूर हो गयी।

"क्या कहा! ढक्कन पर दे मारे! सिर्फ़ इसलिए कि वह इश्क में अंधा हो गया है? तुम खड़े क्यों हो? काम शुरू करो! चलो।"

दोस्त एक दूसरे का मुंह देख रहे थे, कोई बजाने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था, सब के सब ने खड़े-खड़े अपनी आंखें म्यूज़िक स्टेंडों पर टिका ली थीं। बेशक, बोरिस को छोड़कर। उसने यह मालूम होने तक कि अगली धुन कौन-सी होगी, ड्रमस्टिकें एक तरफ़ रख दीं और ब्रश से ड्रम पर हल्की चोट करते हुए पियानो की संगत देने लगा।

यह बात उसी वक़्त मेरी समझ में क्यों नहीं आयी? यह तो "तुम्हें मुझ से प्यार है" वाली धुन है। पहले आदिल ने शुरू किया, फिर सैक्सोफ़ोनिस्ट ने, फिर बैरिटोनों और उसके बाद ट्रम्पेटों ने पूरा हॉल गुंजा दिया। अच्छा। बहुत अच्छा। केटिल-ड्रम बज उठा। समय पर, पूरी ताल में... लेकिन यह क्या? आख़िर क्यों? सबने एक एक करके गायब हो गये। अब बस स्टेज पर मैं रह गया और आर्केस्ट्रा। पूरा आर्केस्ट्रा मिलकर एक हो गया। स्वरलहरी मन्द तरंगों में बह निकली, बीच-बीच में अचानक जोरदार स्टेक्केटो पैसेज शुरू हो जाता...

स्वरों में जैसे धकापेल मच गयी। वे चेहरे की त्वचा से टकराने लगे, रंगबिरंगे भौंरों की तरह छत तले चारों ओर उड़ने लगे, पूरे ज़ोर से खिड़कियों के शीशों से टकराने लगे।

हम सब एक समष्टि का अंश बन गये। हमारी उंगलियों के पोर, फड़कते नथने, गुलाबी मस्तिष्क, आंखें और पारदर्शी नसों सहित पूरी त्वचा सब एक हो चुके थे।

मुझे हॉल काली घाटी में, कहीं नीचे पड़े भीमकाय लोमशी पशु जैसा प्रतीत हो रहा था, जो संगीत के नित नये स्पन्दनों के साथ उत्तरोत्तर तीव्र गति से थिरक रहा था...

स्वर त्वचा व हड्डियों को बेध रहे थे, मांसपेशियां उनके साथ-साथ सिकुड़ रही थीं और रक्तसंचार प्रचण्ड होता उन्मत्त कर रहा था। शीशे चूर-चूर होकर उछट रहे थे, उनकी किरचें इन्द्रधनुषी धूल में उड़ रही थीं, घन अपनी चोटों से धातु को सपाट किये डाल रहा था, पनपत्थर और संगमरमर को कंकरों में तोड़े डाल रहा था। कंठ से शब्द उमड़कर, होंठों तक आकर हॉल के कोने-कोने को गुंजायमान कर रहे थे। कितना आसान है यह! तुम्हें मुझ से प्यार है! तुम्हें मुझ से प्यार है!

* * *

"आप अच्छा गाते हैं!..." स्वर में प्रशंसा का लेश-मात्र भी पुट नहीं था, केवल आश्चर्य। वह बड़े ध्यान से मुझे देख रहा था, सच कहूं, तो मुझे तौल ही रहा था। "लोगों ने बताया तो था,

पर मुझे ज़्यादा विश्वास नहीं होता था।"

भाड़ में जाओ तुम! मुझे इसकी कोई परवाह नहीं, तुम्हें विश्वास होता था या नहीं! मैंने सिर हिलाया और तौलिया व क़मीज़ उठाकर शॉवर लेने चल दिया। पसीने के मारे मेरे सारे कपड़े बदन से चिपक गये थे। कहने की ज़रूरत ही नहीं कि गरम पानी ग़ायब था। मैंने कपड़े बदलकर हाथ मुंह धोये। आदमी को आख़िर बहुत ज़्यादा की ज़रूरत तो होती नहीं। हर हालत में यह कितना अच्छा लगता है। आदिल ने शॉवर-रूम में झांककर कहा:

"तुम ऊंघने लगे थे क्या? जल्दी से जाओ, हमारा पुराना पड़ोसी तो बहुत ही भला आदमी निकला। चलो, नहीं तो यह सैमूर कहीं सारा काम बिगाड़ न दे।"

सैमूर सब ठीक ही करेगा। फ़ायदे की बात हज़ार मील दूर हो रही हो, तो भी वह सुन ले। अपने फ़ायदे की और साथ ही हमारे फ़ायदे की भी। बस लगता ऐसा है, जैसे वह ध्यान से नहीं सुन रहा है, पर ऐसा नहीं है।

"मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि बात क्या है, दोस्तो? मेरे ख़याल से तो आप लोगों को बहुत ख़ुशी होनी चाहिए। शर्तें बहुत अच्छी हैं, आप हमारी फ़िलारमोनी की तरफ़ से पेशेवरों की तरह कंसर्ट देंगे। दो महीनों में काफ़ी अच्छा पैसा कमा लेंगे। दिन में दो-तीन कंसर्ट देने होंगे। लोग तो ऐसे मौक़े का सपना देखते हैं।"

"दिन में दो कंसर्ट?!" सैमूर के स्वर में इतना निष्कपट आश्चर्य था कि मैं भी उसकी बातों में आ गया। "हमारी तो हालत ख़राब हो जायेगी, कामरेड तग़ीयेव।"

यानी मेरे पुराने पड़ोसी, वायलनचेलोवादक का नाम कामरेड तग़ीयेव है।

"हम कोशिश करेंगे कि आपको ओवरटाइम का डेढ़गुना पैसा मिले। अगर इजाज़त मिल जाये।"

"पर क्या यह जायज़ है?" सैमूर जब क़ानून के बारे में इतना चिन्तित हो उठा, तो इसका मतलब है कि उसे कोई आपत्ति नहीं है।

"सोची, गागरा, याल्ता, पित्सुन्दा के सबसे अच्छे कंसर्ट-हॉल मिलेंगे! और क्या चाहिए आप लोगों को! बढ़िया आबोहवा!"

"बढ़िया आबोहवा?" लगा जैसे सैमूर ने ये शब्द पहली बार

सुने। "हां, हां, समझ गया। यानी कंसर्ट मुफ़्त में भी देने होंगे, क्यों?" सैमूर ने चिन्तित स्वर में पूछा।

अरे, क्या फ़िक्र करनी इसकी! ऐसे अच्छे मौक़े के तो सपने ही देखे जा सकते हैं! सैमूर भी हद कर रहा है, हद। लेकिन कामरेड तग़ीयेव भी ऐसे धैर्यपूर्वक संयत स्वर में समझाने लगे, जैसे कुछ हुआ ही न हो:

"बेशक। कुछ मुफ़्त कंसर्ट आपको देने ही पड़ेंगे। कुछ कारखानों और फ़ैक्टरियों में। लेकिन मेरे ख़याल से यह तो आम बात है।" बीच में छायी चुप्पी में उसने हम पर नज़र डाली और जब मेरी ओर देखा तो मैंने सिर हिला दिया। "क्लब के मैनेजमेंट के साथ कोई समस्या उठ खड़ी हो, तो आप हमें बताइये, हम सब तय कर लेंगे।"

"इसकी कोई जरूरत नहीं," सैमूर ने ज़रा जल्दी से कहा। "हम ख़ुद ही तय कर लेंगे। वे हमें पूरी गरमी के लिए जाने की इजाज़त दे देंगे।"

गरमियों के लिए ही क्या, पतझड़ और पूरे साल के लिए भी इजाज़त दे देंगे... और वैसे भी, कामरेड तग़ीयेव, अगर आपने इस बारे में क्लब के मैनेजमेंट से बात की, तो वे तो आपके बहुत ही आभारी होंगे।

"बहुत ही अच्छी बात है! यानी सब तय हो गया," उसने अन्तिम शब्द न जाने क्यों मुझे ही सम्बोधित करके कहे, फिर जेब से रूमाल निकालकर चेहरा पोंछा। सैमूर से बात करने पर उसको आख़िर पसीना आ ही गया... वाह, क्या रूमाल है, दलदली से दलदली जगह में उस से चेहरा ढांप लो, तो अच्छे से अच्छा स्नाइपर भी तुम्हें देख न पाये। ख़ाकी रूमाल!

सैमूर उसको दरवाज़े तक छोड़ आया और उसके बरामदे के छोर तक पहुंचने के बाद कसकर दरवाज़ा बंद करके हमारी ओर मुड़ा।

"सावधान! तो आयी बात समझ में?" वह बोला। "ऐसे मौक़े का कब से इंतज़ार कर रहा था मैं और आख़िर वह मिल ही गया! दावत होनी चाहिए इस ख़ुशी में फ़ौरन। पैसा मेज़ पर रखो!" उसने सबसे पहले दस रूबल का नोट मेज़ पर फेंका।

सब जा चुके थे, पर दरवाज़े के बाहर कुछ लोग अभी मंडरा

रहे थे, ज़्यादातर लड़कियां। सैमूर ने मेरी बग़ल में टहोका मारा – पीली ड्रेसवाली वहां मौजूद थी, हाथों में गुलदस्ता लिये और आंखों में प्रेम-पीड़ा। न जाने क्यों उसकी निगाह मुझ पर टिकी थी। मैंने सैमूर की कोहनी दबोचकर बातचीत में डूबे होने का ढोंग रचा, मानो न कुछ देख रहा हूं, न सुन रहा हूं और उसकी नज़र से बच ही गया। आदिल के कान फ़ौरन खड़े हो गये और चेहरा ख़ुशी से खिल उठा।

सैमूर जाता-जाता उसकी ओर मुड़ा:

"देखो, कहीं राह मत भटक जाना, हम रेस्तरां 'गेकगेले' में तुम्हारा इंतज़ार करेंगे।"

आदिल का ज़्यादा देर इंतज़ार नहीं करना पड़ा, हम दो गलियां भी पार न कर पाये कि वह हमसे आ मिला। सारे रास्ते साथ-साथ चलता रहा चुप्पी साधे। मुझे बस यही डर लगा रहा कि सैमूर उसकी टांग खींचेगा, पर ख़ुदा का शुक्र था, उसने ऐसा नहीं किया। आदिल के चेहरे पर उदासी छायी थी। एक क्षण के लिए मुझे लगा कि वह रो ही पड़ेगा, हालांकि मुझे पक्का पता था कि उसके लिए रो पड़ना असम्भव है। मुझे याद आया कि बहुत साल पहले, जब हम दोनों चौथी क्लास में पढ़ते थे, एक बार उसका चेहरा भी ऐसा दिखाई दिया था। गर्मियों की छुट्टियों के पहले ही दिन हमने नाई की दूकान में जाकर अपने सिर घुटवा लिये थे, फिर "रोटे फ़ाने" नामक पार्क गये थे, जहां सारी क्लास को इकट्ठा होना था। ट्राम से उतरकर हम पार्क को पैदल पार करने लगे। हमारे सामने से तीन हट्टे-कट्टे, मूंछों-वाले नौजवान आ रहे थे। वे हमारे पास से गुज़रकर आगे निकल गये, फिर अचानक मुड़कर रुके और बोले कि हम उनके पास आयें। मुझे फ़ौरन दाल में कुछ काला नज़र आया और मैं अपनी जगह से हिला भी नहीं। आदिल को भी मैंने जाने को मना कर दिया। वह मेरी तरफ़ हैरत से देखकर कह रहा हो: 'क्या हर्ज है इसमें?' और उनके पास चला गया। एक नौजवान ने सिगरेट का कश खींचा और धुआं आदिल के चेहरे पर छोड़ दिया। उसके बाद मैं बात पूरी तरह समझ भी नहीं पाया कि वह क्या करना चाहता है, उसने जलती सिगरेट आदिल की यूडीकोलोन लगी, पसीने से तर चोटी पर बुझा दी। उसकी चोटी में सिगरेट लगायी और उसे अंगूठे से दबाये खड़ा रहा। मुझे उसके

कुत्ते की आवाज़ [illegible] दूर भी [illegible] सुनाई दी। वे दोनों हंसे देखते हुए हंसी के मारे दोहरे होते गये। एक को तो इतनी हंसी आयी कि वह उछल ही [illegible]। हम दोनों भाग गये। आदिल ने सब अपने आप [illegible] थे और कहा था कि जब वह बड़ा होगा, हर हालत में इस [illegible] को [illegible] देगा। वे उसे कहीं भी क्यों न मिलें। उसके सिर पर बिजली [illegible] के लिए [illegible] गया और उस पर बाल नहीं उगते हैं। मुझे [illegible] में यह बात मालूम पड़ी, जब हमारे बाल [illegible] [illegible] नज़र आया है उसे उस [illegible] में। उसकी जैसी [illegible] हाथ [illegible] टोपियों नज़र आती है। मैंने दोस्तों से थोड़ा पीछे रहकर आदिल की बगल में हाथ डाला और उससे हंसकर कहा:

“[illegible] ले नहीं रहे हैं हमें कामरेड अलीयेव ! मुझे तो लगा जैसे कोई परियों की कहानी सुन रहे हैं।”

“हां, आज हमारी किस्मत बहुत अच्छी निकली !” उसने तत्परता से कहा।

रेस्तरां में हमें नहीं जाने दिया गया, इस कारण कि आधी रात का समय हो चला था। तैमूर ने दरबान को किसी तरह मना ही लिया कि वह एक मिनट के लिए उसे अकेले अंदर जाने दे। वह तुरन्त वहां के आर्केस्ट्रा के पियानिस्ट मखेद अलीयेव को साथ लिये लौट आया। वह हम सबको अंदर ले गया और दरबान को झिड़की भी दे गया: “भाई मेरे, शरीफ़ लोगों को पहली ही नज़र में पहचान लेना चाहिए।” मखेद ने हमें मेज़ पर बिठाकर वेटर को बुलाया और स्टेज पर चढ़कर अपने पियानो के पास बैठकर एलान कर दिया कि वह अपने मित्र मस्कोवाइयों के सम्मान में संगीतकार एमीन साबित-ओगली का गीत “[illegible]” पेश करेगा। यह बेशक उस लापरवाह दरबान द्वारा हमारे साथ किये गये अशिष्ट व्यवहार की क्षतिपूर्ति के लिए किया गया था। विक्तोर व्लादीमिरोव ने स्टेज पर आकर गीत गाया। गाया न कोई बहुत अच्छा और न ही बहुत खराब, पर उस रेस्तरां के लिए वह ठीक था। विक्तोर को मैं काफ़ी अरसे से जानता हूं। शुरू में हमारी उम्रों में बड़े फ़र्क़ के कारण हम एक दूसरे से परिचित नहीं थे। वह ‘वतन’ सिनेमा में शो से पहले गाया करता था। उस ज़माने के हिसाब से वह काफ़ी बढ़िया गाता था। उसके बारे में कहा जाता था कि वह बहुत प्रतिभाशाली गायक है और उसका भविष्य उज्ज्वल है। तब

मखेद अलीयेव उसी सिनेमा में जाइलोफ़ोन बजाया करता था। वह भी सबको पसंद था। वह अपनी जादुई स्टिकों से “कहार-नृत्य” और ओपेरा के “बादशाह” की धुनें बजाया करता था। मुझे अचानक याद आया कि मैंने अरसे से किसी को जाइलोफ़ोन बजाते नहीं देखा है। वह अब शायद फ़ैशन से बाहर हो चुका है। विक्तोर के गाना खत्म करते ही मखेद ने एलान कर दिया कि आर्केस्ट्रा अब अपना कार्यक्रम समाप्त करता है। हमने सबके साथ तालियां बजाकर आर्केस्ट्रा का धन्यवाद किया। झण्डी लगी लम्बी मेज़ पर बैठे हुए विदेशी अतिथियों ने ज़ोर से तालियां बजायीं। उनकी मेज़ पर झण्डी न होती, तो भी मैं जान जाता कि वे पूर्वी जर्मनी से आये यात्री हैं। वे लोग रेस्तरां में बड़े ज़ोर से तालियां बजाते हैं। वादक स्टेज से उतरकर कपड़े बदलने चले गये और फिर लौटकर हमारे साथ बैठ गये। हमने एक मेज़ और साथ में लगा ली थी। वे लोग भी कहने लगे कि आज हमारी किस्मत बहुत अच्छी निकली, इसलिए यह दावत उनकी ओर से होगी। हम इतनी देर तक बैठे रहे कि हॉल में सिर्फ़ हम ही रह गये। सारी मेजों से मेजपोश हटा लिये गये, पर हम बैठे हुए अपनी आर्केस्ट्रावालों की ज़िंदगी के बारे में ही बातें करते रहे। शायद इसलिए कि मैं ज़्यादा नहीं पीता, कुछ आदत ही ऐसी है, दो-एक जाम पीने के बाद शराब मेरे गले से नीचे उतरना ही बंद हो जाती है, कितनी भी कोशिश क्यों न करूं, एक घूंट भी और नहीं पी पाता। मुझ पर सुरूर नहीं चढ़ा था, शायद इसलिए मैं अचानक उदास हो उठा, जब मैंने सुना कि विक्तोर उसी गर्मियों में यह सब छोड़ने जा रहा है, ताकि सच्चे मानों में गाना शुरू कर सके। वह कह रहा था कि अब उसके अपने आपको कला पर समर्पित करने का समय आ गया है, बहुत हो चुका। क्या वह सचमुच अब भी यह समझता है कि उसे गाने में सफलता मिल जायेगी? फिर मेरा ध्यान और सब बातों से हट गया, क्योंकि मुझे अपने पुराने पड़ोसी के आगमन की याद आ गयी। मैंने अपने आपको क़ाबू में रखने की बहुत कोशिश की, पर सब बेकार रहा – किसी बुद्धू की तरह सपने देखने लगा। कहीं सचमुच इस टूर से हमारी क़िस्मत का सितारा चमक ही उठे तो? और अगर न चमके तो? मैं कोई बच्चा तो हूं नहीं, काफ़ी अरसे से नहीं हूं, लेकिन अगर मैं ज़रा ध्यान से सोचूं... हम आखिर क्या

कर रहे है? आखिर हम लोग है क्या – पेशेवर या ग़ैरपेशेवर वादक? आज किसी इस्टीट्यूट में बजा रहे है, कल किसी फ़ैक्टरी के कामगारों के सामने प्रोग्राम पेश कर रहे होंगे या कहीं किसी डांस-फ्लोर पर अपनी एड़ी-चोटी का पसीना एक कर रहे होंगे। पिछले हफ्ते हमें पोलीटेकनिक इंस्टीट्यूट में डांस के लिए बजाने को बुलाया गया था। हमने अपने बाजे अभी रखे ही थे कि क्लब का डाइरेक्टर आकर क्षमा-याचना के स्वर में बोला कि उन्हें वेरायटी म्यूज़िक वग़ैरह पसंद नही है। रेक्टर को बेशक अपनी पसंद का संगीत सुनने का अधिकार है, क्योंकि वह आखिर रेक्टर ठहरा, लेकिन हमें क्या बहुत अच्छा लगा फ़ोयर में से निकलकर सारे रास्ते दरवाजे तक कुतूहली विद्यार्थियों को यह समझाते जाना कि प्रोग्राम क्यों बदल दिया गया है। और उसके बाद बरसात में शाम को आनेवाली बस के बजाय किसी ऐसी कार को खोजना, जिसमें हम अपने सारे बाजे रख सकें। आखिर हम अपने डबलबास, अकार्डियन और दूसरे सामान समेत किसी टैक्सी में तो ठुसकर बैठ नही सकते थे। क्या कामरेड तग़ीयेव भी धोखा दे देंगे हमें? नही, आपको ऐसा नही करना चाहिए, कामरेड तग़ीयेव। आखिर तो क्या जरूरत पड़ी है आपको ऐसा करने की?

आखिरी जाम हमारी कामयाबी के नाम पर पिया गया और साथ ही सबने मेज पर एक साथ हाथ भी मारा। टच वुड। सैमूर ने तो मेज़ के नीचे हाथ डालकर भी थपथपाया, ताकि वह बिना पालिश की हुई लकड़ी को छू सके।

रात के डेढ़ बजे हम रेस्तरां से बाहर निकले। रात होने के बावजूद सड़क पर काफी कारें चल रही थीं। हम जब रेस्तरां में बैठे थे, बारिश हुई थी, शायद इसी लिए रात की ताज़ा हवा में बबूल और घास की खुशबू बसी हुई थी। आदिल और मैंने दोस्तों से कुमारी की मीनार के पास विदा ली, हालांकि वे हमें अपने साथ थोड़ी देर और घूमने को बुलाते रहे। दस मिनट बाद हम अपने घर के दरवाज़े पर पहुंच गये।

"तुम बहुत तो नही थके हो न?" आदिल ने अहाते में घुसने पर पूछा। "मैं थोड़ी देर तुम्हारे यहां बैठूंगा। घर जाने को कुछ मन नही कर रहा।"

"ज़रूर," मैंने कहा। मुझे सचमुच सोने की इच्छा नहीं हो रही

थी। सीढ़ियों पर अंधेरा था, पर ड्योढ़ी और रसोई में बत्ती जल रही थी। देहलीज़ पर कदम रखते ही मुझे महसूस हो गया कि अंदर ज़िंदगी अपने पूरे रंग में है। पड़ोसन, नर्स अईदा के फ्लैट में से मुसलिम मगोमायेव का एक लोकप्रिय गीत, ग़ुस्लखाने में से पानी की छपछप तथा किसी की गुनगुनाहट सुनाई दे रही थी और रसोई में से केतली में पानी खौलने की आवाज़ आ रही थी।

केवल दो फ्लैटों के दरवाज़ों से कोई आवाज़ नहीं आ रही थी – मेरे और मेरे तीसरे पड़ोसी तेल-इंजीनियर एल्मार समेदोव के। उसकी जीवन-प्रणाली जलथलचर जीवों जैसी थी – दस दिन समुद्र में आयल स्टोन्स पर, तो दस दिन किनारे पर आराम।

हमारे आने पर कम्युनल फ्लैट से आती आवाज़ों में कुछ परिवर्तन अवश्य हो गया। आदिल ने ग़ुस्लखाने के खुले दरवाज़े के सामने से निकलकर रसोई में पहुंच केतली की खदबद बंद कर दी। ग़ुस्लखाने में फ़ौरन सन्नाटा छा गया और उस सन्नाटे में मुसलिम मगोमायेव के गीत के बोल भी फुसफुसाहट में बदल गये।

डेढ़ मिनट बाद, जो कपड़े पहनने और पाउडर की कुछ तहें पोतने के लिए काफ़ी था, अईदा को बाहर निकलकर आना था। हम उसके दर्शनों से निश्चय ही बच जाते, अगर उससे पहले बाथरूमवासी ने हमें न रोक लिया होता। वह अपना भीगा सिर न जाने क्यों मेरे तौलिये से पोंछता दरवाज़े में खड़ा था। पहले तो उसने बड़ी गर्मजोशी से हमारे साथ हाथ मिलाया, फिर हमसे पूछा कि हम कैसे हैं। और उसके बाद हठपूर्वक हमें कमरे में बुलाने लगा।

"शुक्रिया," आदिल ने कहा। "फिर कभी।"

"ऐसा कैसे हो सकता है?" उस नौजवान को आश्चर्य हुआ। वह हमारे नज़दीक आ गया, सच कहूं, तो इस में वह पहले प्रयास में ही सफल हो गया। उसने पास आकर बताया कि उसका नाम समेद है। हमने भी अपना परिचय दिया। उसके बाद उसने अपना निमंत्रण फिर दोहराया और आदिल ने फिर उसे अस्वीकार कर दिया।

"क्यों, भई," हमारे नये परिचित ने कहा। "कही आप लोग यह तो नहीं सोचते हैं कि मैं आप की बराबरी का नही हूं?"

आदिल ने एक सज्जन के लिए अपमानजनक उस धारणा का अत्यन्त संक्षेप में तर्कपूर्वक खण्डन कर दिया। समेद के चेहरे पर मुस्कान

फिर लौट आयी, उसने हमें बताया कि वह टैक्सी-ड्राइवर है और उसने अपने जीवन में सब कुछ अपनी ही मेहनत से हासिल किया है।

मेरे चाचा के यहां से दूसरी जगह जाकर बसने के बाद गुजरे छः वर्षों के दौरान मुझे दो डाक्टरों और एक डाक्टर के सहायक से परिचित कराया जा चुका था। पर टैक्सी-ड्राइवर से मैं पहली बार मिल रहा था।

"तुम्हारे नाम एक चिट्ठी और एक मनीआर्डर आया है," अईदा ने मुझे शुष्क स्वर में बताया। "और तुम मेरे कमरे में जाओ!" उसने समेद से काफ़ी मृदुल स्वर में कहा।

अईदा सदा की तरह संयत थी। उससे सदा आती बोरिक एसिड और 'करमेन' पाउडर की मिली-जुली गंधों में एक असाधारण रूप से इत्र की विनाशकारी बू भी शामिल हो गयी थी। मैं एक क़दम पीछे हट गया, पर मेरी यह हरकत उनकी नज़रों से छिपी नहीं रह सकी।

"ये मेरे दोस्त हैं!" समेद ने अईदा से कहा। "सुनो, दोस्तो, अगर तुम्हें कभी कोई ऐसी-वैसी बात कहे, तो वह कोई भी क्यों न हो, बस मुझे बता देना। तुम्हारी ख़ातिर मैं किसी को भी..."

"चलो!" अईदा ने कहा।

"मैं इनको साथ लिये बग़ैर कहीं नहीं जाऊंगा। मैं चाहता हूं कि ये भी थोड़ी देर हमारे साथ बैठें।"

"तुम्हें इनके बिना काम चलाना पड़ेगा," अईदा ने खीजकर कहा।

"अगर ये हमारे साथ नहीं चलेंगे, तो मैं यहीं फ़र्श पर लेट जाऊंगा। तुम, जहां तुम्हारी मर्ज़ी हो, जाओ।"

"हम एक मिनट के लिए आयेंगे," उससे पहले कि अईदा अपनी ठानी कहे, मैंने झट से कह दिया। "तुम देख ही रही हो," मैंने समेद के अविवेकपूर्ण दुःसाहस की मन ही मन सराहना करते हुए यथा-सम्भव अनुग्रहपूर्ण स्वर में कहा। "हमारे दोस्त पर ज़रा सुरूर चढ़ा हुआ है, लेकिन यह तो किसी के साथ भी हो सकता है।"

हम उसे अईदा के कमरे में ले गये और मेज़ पर बिठा दिया।

"बैठो," अईदा ने कहा। "जब आये ही, तो एक गिलास चाय भी पी लो।"

हम तीनों मेज़ पर बैठकर चाय पीने लगे। समेद अब पूरी तरह

पसर चुका था। आदिल और मैंने उसे अईदा के सोने के कमरे में ले जाकर पलंग पर लिटा दिया। अगर दुनिया में चार आदमियों के सोने लायक़ कोई पलंग है, तो उनमें से एक मैंने इसी कमरे में देखा, जो कभी मेरे चाचा का काम का कमरा रहा था। समेद को लिटाने के बाद मुझे अचानक याद आया कि चाचा के जाने के बाद मैं ये कमरे पहली बार देख रहा हूं। वालपेपर, परदे और फ़र्नीचर वग़ैरह बदल गये थे, फिर भी कुछ पुरानी चीज़ें रह गयी थीं, जैसे कोने में रखा दादी का संदूक, हौलैंड स्टोव... मुझे याद आया कि अईदा के भूतपूर्व पति ने, जिसे ये कमरे दिये गये थे, मुझ से यह संदूक ले जाने को कहा था। मैं चाहता तो था, पर किसी तरह ले नहीं जा सका और फिर मुझे फ़ौज में बुला लिया गया।

अईदा हमें किसी प्रधान डाक्टर के बारे में बता रही थी, जो उजड्ड और आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से पिछड़ा हुआ था और जिसके साथ किसी बुद्धिजीवी के लिए काम करना असम्भव था। मैं आदिल के साथ बारी-बारी से हां-हूं करता हुआ बीच-बीच में संदूक पर भी नज़र डालता जा रहा था। अब तो वह तांबे का बड़ा-सा ताला ग़ायब था, जिसकी चाबी दादी कभी किसी को नहीं देती थीं। संदूक पर तांबे के सितारों की क़तारें लगी हुई थीं और तांबे के मोटे पत्तरों से बने चौख़ानों पर उखाड़ी कीलों के निशान दिखाई दे रहे थे। पहले उन जगहों पर चांदी के उभरे हुए सितारे लगे रहते थे। मैंने उन्हें नहीं देखा था, पर दादी बताया करती थीं कि वे कैसे लड़ाई* के दिनों में हर महीने दो सितारे उखाड़ती थीं, एक मेरे चाचा के परिवार को दिया करती थीं और दूसरे को अपने बड़े बेटे यानी मेरे पिता को मोर्चे पर खाने की चीज़ें भेजने के लिए बेच देती थीं।

जहां तक मुझे याद है, दादी बहुत बूढ़ी थीं और मेरे ख़याल से मुझे बहुत प्यार करती थीं। वे कहती थीं कि मैं जैसे-जैसे बड़ा होता जा रहा हूं, बिलकुल दादा पर जाता जा रहा हूं। लेकिन मेनज़ेर चाची हर बार हंसकर कहती थीं कि मैं दादा पर बिलकुल भी नहीं गया हूं, ख़ास तौर से अगर इस बात को ध्यान में रखा जाये कि दादा बहुत ही असाधारण और शिष्ट आदमी थे।

---

* सोवियत संघ का महान् देशभक्तिपूर्ण युद्ध (१९४१-१९४५)। - सं०

मुझे उस दिन की हर बात अच्छी तरह याद है, शायद इसलिए कि हेड-मास्टर हमारी कक्षा में उस क्षण आये थे, जब मैं काले तख्ते के पास खड़ा था और हमारी अध्यापिका वलीदा गिरासिमोवना के विचार में संगीत के सिद्धान्तों के बारे में एक प्रश्न का उत्तर देने की तैयारी कर रहा था। लेकिन सच कहूं, तो मैं एक ही सत्र में दूसरी बार उस विषय में फ़ेल होने की तैयारी कर रहा था। मैंने अपने सहपाठी विक्तोर ब्लान्कफ़ेल्ड के उत्तर देने तक प्रतीक्षा की और यह कहने ही जा रहा था कि मुझे कुछ नहीं आता, कि तभी हेड-मास्टर अंदर आये। मुझे तब बेहद खुशी हुई थी, जब उन्होंने मुझे कारिडर में ले जाकर घर जाने को कहा, क्योंकि मेरे चाचा ने उन्हें फ़ोन करके बताया है कि दादा की तबीयत बहुत खराब हो गयी है। अब उस दिन की याद आते ही मुझे बहुत शर्म महसूस होती है। अहाते में मुझे आदिल मिल गया, वह तब दूसरी शिफ़्ट में पढ़ता था। न जाने क्यों उसके चेहरे पर भय छाया हुआ था। हम कमरे में गये, इसमें नहीं, जिसमें हम अईदा के साथ बैठे थे, बल्कि उसमें, जिसे हमने बाद में अपने तेल-इंजीनियर पड़ोसी को दे दिया था। दादी पलंग पर चुप लेटी थी और मेरे चाचा, चाची और आदिल की मां उनके नजदीक, उनसे नज़रें हटाये बिना बैठे थे।

"खुदा का शुक्र है, तुम आ गये," चाचा ने मेरे कमरे में घुसने पर कहा।

वे मुझे दादी के पास ले गये। उन्होंने आंख के इशारे से मुझे अपने पास बैठने को कहा। वे किसी तरह मुस्करायीं और वैसे ही मौन मुस्कान के साथ मेरी ओर देखती रहीं। मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि सुबह तक वे ठीक-ठाक थीं। उन्होंने मुझे जगाकर नाश्ता भी कराया था। वे वैसी ही मुस्कराती हुई मेरी तरफ़ देखती रहीं, फिर अत्यन्त धीरे-धीरे बोलीं, जो कमरे में और अधिक शान्ति होने के कारण सबको स्पष्ट सुनाई दिया।

"मुझे डर था कि तुम वक़्त पर नहीं पहुंच पाओगे," उन्होंने मुझ से कहा।

"मां," चाचा बोले और चुप हो गये।

पर दादी मेरी तरफ़ देखती रहीं।

"मुझे बहुत इच्छा हो रही थी तुम्हें देखने की," दादी बोलीं।

"मुझे तुम्हारी बहुत फ़िक्र लगी रहती है, इसीलिए मैं चैन से नहीं मर पा रही हूं। प्यार करो मुझे।" मैंने झुककर उनके गाल पर प्यार किया। "मैं तुम्हें तुम्हारे चाचा को सौंपे जा रही हूं," उन्होंने चाचा पर नज़र डाली, "और तुम दोनों को खुदा को।" फिर वे चुप हो गयीं, आंखें मूंदकर काफ़ी देर तक वैसी ही लेटी रहीं। मुझे तो लगा कि वे सो गयी हैं, फिर उन्होंने आंखें खोलकर, बहुत विचारमग्न स्वर में, मानो अपने आप से बात कर रही हों, कहा :

"तुम बिलकुल अपने दादा पर गये हो।"

दादी शान्ति से लेटी मेरी तरफ़ देखे जा रही थीं। फिर आदिल की मां मुझे बाहर ले गयी। मैं रात उनके यहां रहा। मेरे लिए आदिल के कमरे में फ़ोल्डिंग चारपाई डाल दी गयी थी। हमें नींद जल्दी नहीं आयी और हम काफ़ी देर तक इधर-उधर की बातें करते रहे। रात को अचानक मेरी नींद खुल गयी और मैं दादी के बारे में सोचने लगा। उस रात मैं समझ पाया कि दादी मेरी तरफ़ ऐसे क्यों देख रही थीं। उस रात पहली बार मेरी समझ में आया कि अकेली दादी ही मुझे प्यार करती थीं। मुझे पता भी नहीं चला कि आदिल की मां कब कमरे में आयीं। मुझे बहुत शर्म महसूस हो रही थी, इसके बावजूद मैं अपनी रुलाई को किसी तरह रोक नहीं सका। वे मुझे तसल्ली दिलाती रहीं, मेरे सिर पर हाथ फेरती रहीं और फिर मुझे सीने से लगाकर खुद भी रो पड़ीं। सुबह जब मेरी नींद खुली, तो शर्म के मारे आंखें खोलने को भी मन नहीं कर रहा था!

संदूक को जब खोला गया, तो उसमें कोई खास चीज़ नहीं निकली। दूसरी चीज़ों के ऊपर एक संदूकची थी, जिसमें शादी की दो अंगूठियां, अलग-अलग नगोंवाली दो और अंगूठियां और मोतियों की एक माला। संदूकची अभी तक चाची के पास ही है। मालूम पड़ा दादी ये सब चीज़ें मेरी भावी पत्नी के लिए छोड़ गयी थीं। मैं उन्हें चाची को भेंट कर देना चाहता था, पर वे गुस्सा होकर बोलीं कि मुझे ऐसी बेवक़ूफ़ी नहीं करनी चाहिए। इसके अलावा संदूक में स्वरलिपियां थीं, नेफ़थलीन लगी पुरानी पोशाकें, दादा के कपड़े और फ़ाक-कोट, जो वे कंसर्टों में पहना करते थे।

"क्या कुछ गड़बड़ है?" अईदा ने अचानक मुझ से पूछा।

"कुछ नहीं," मैंने कहा, "सब ठीक है। बहुत सुहावनी शाम

है। चाय के लिए शुक्रिया," हमने उठकर उससे विदा ली।

"एक मिनट," अईदा ने अपने सोने के कमरे की ओर सिर से इशारा किया। "तुम लोग न जाने क्या सोचने लगोगे। यह मेरा एक बहुत नजदीकी रिश्तेदार, चचाजाद भाई है।"

"अरे, छोड़ो भी," आदिल बोला। "हम तो देखते ही सब समझ गये थे, आप दोनों की शक्ल-सूरत बहुत मिलती-जुलती है।"

चचाजाद भाई-वाई का क़िस्सा बेकार की बात थी। ऐसे मामलों में सबसे अहम होता है – हद न होने देना।

मैंने दुख से सिर हिलाया।

"हमें क्या लेना-देना है इससे," मैंने कुछ बुरा-सा मानते हुए कहा।

"कौन जाने तुम लोगों को?" उसने शंकालु स्वर में कहा। "तुम दोनों ख़राब नहीं हो, लेकिन फिर भी हो तो कलाकार!"

आज हमें कलाकार कहनेवाली वह दूसरी आदमी थी। पहले कामरेड तग़ीयेव थे। बहुत अच्छा भी लगा। पर कल क्या होगा?

चिट्ठी और मनीआर्डर बेशक चाचा ने भेजे थे। पैसे हमेशा की तरह बहुत ही ज़रूरत के वक़्त आये थे। महीने के आख़िरी नौ दिनों के लिए खाने, टेलीफ़ोन बिल, एक जोड़ी मोज़े, जो मेरे लिए ख़रीदने बहुत ही ज़रूरी थे और मेरी उम्र के लायक़ मनोरंजन के लिए, मेरे पास कुल जमा दो रूबल और कुछ कोपेक ही बचे थे। चाचा की लिखावट बिलकुल नहीं बदली थी। बड़े-बड़े अंकों और शब्दों में तीस रूबल की वह रक़म स्पष्ट रूप से दर्शायी हुई थी, जो एक मध्यवर्गी, अधेड़ उम्र के सम्बन्धी ने अपने हट्टे-कट्टे, नासमझ भतीजे की मदद के लिए भेजी थी। आत्मग्लानि को पूरी तरह भुला देने में मुझे कोई मुश्किल नहीं हुई। इसके लिए मुझे थोड़ी देर के लिए गिलासों में चाय डालते आदिल से अपना ध्यान हटाकर अनेक बार देखे उज्ज्वल भविष्य के रंगीन सपनों में खो जाना पड़ा। समृद्धि और सफलता के उस रंगीन परिदृश्य की अग्रभूमि में मैंने अपने खुशी से फूले न समाते हुए चाचा और चाची को आसीन कर दिया, जिन्हें अपनी ढलती उम्र में उस होनहार आदमी से अचानक अपार धन, सम्मान और प्रेम प्राप्त होता है, जिससे वे बहुत पहले सब आशाएं छोड़ बैठे थे।

हम मौन बैठे चाय पी रहे थे कि टेलीफ़ोन घनघना उठा। आर्केस्ट्रा में तो मेरे अलावा छः और लोग थे, फिर उस बुद्धू लड़की ने, जो आदिल को इतनी पसंद है, मुझे ही क्यों फ़ोन किया है? मुझे यह ख़याल आते ही बहुत अटपटा महसूस होने लगा कि रिसीवर आदिल भी तो उठा सकता था। मैंने रिसीवर को पूरे ज़ोर से कान से सटा लिया, क्योंकि मुझे लग रहा था कि उस लड़की की आवाज़ सारे फ़्लैट में सुनाई दे रही है। साथ ही मुझे आदिल की ओर देखते रहने को भी मजबूर होना पड़ा। वह गम्भीर मुद्रा में एक पत्रिका के कवर को देख रहा था। बिलकुल बेतुकी आह-ऊह किये जा रही थी वह: 'मैं आपकी भक्त हूं...', 'बड़ी बेताबी से दिन गिन रही हूं...', 'आपसे मिलने की उम्मीद में जी रही हूं...' काश, तू समझ पाती, मूर्ख लड़की कि तेरे कारण एक भला आदमी कितना दुखी हो सकता है!

"क्या तुम्हारी आया ने कभी नहीं समझाया तुम्हें," मैंने उससे सख़्ती से कहा, "कि रात के तीन बजे किसी अनजाने आदमी को फ़ोन करना शर्म की बात है?"

"क्या? कौन-सी आया?"

"वही, जो उस अनाथालय में काम करती थी, जिसमें तुम पली हो।" वह चुप हो गयी, लगता है ग़फ़लत में पड़ गयी है, अब काम ज़रा आसान हो जायेगा।

"आपको यह सूझी कहां से? मैं कभी किसी अनाथालय में नहीं रही।"

"तभी तो," मैंने घृणापूर्वक कहा।

"क्या मतलब?" वह हीं-हीं करने लगी।

लड़की अच्छी है, कोमल और सुसंस्कृत। अफ़सोस यह है कि वह ज़रूरत से ज़्यादा गर्वीली और पहुंच से बाहर है... उसकी जैसी आदिल को पसंद कैसे आ गयी?

"...मैंने तो कंसर्ट के फ़ौरन बाद ही आपको फ़ोन करना शुरू कर दिया था। इसमें मेरी क्या ग़लती है कि आप रिसीवर उठा ही नहीं रहे थे। फिर हम लोग एक दूसरे से परिचित हैं, हमें मिलाया था..."

मुझे अच्छी तरह याद था कि हमें किसने मिलाया था। आदिल ने सिर उठाकर मेरी तरफ़ देखा। वह क्या सचमुच भांप गया है कि यह पीली ड्रेसवाली है?

"आप फिर कभी यहां फ़ोन मत कीजिये! समझ गयी? न दिन में न रात में!"

रिसीवर रखने के बाद मैं आदिल की तरफ़ देखने की हिम्मत नहीं कर सका, ख़ास तौर से ऐसा फ़ोन आने के बाद... जिसे 'एक-मात्र दोस्त को भेंट' कहा जाता हो।

"कौन था?" आदिल का स्वर संयत और उनींदा था। शुक्र है ख़ुदा का कि इसे कुछ पता नहीं चला।

"एक पुरातत्ववेत्ता है," मैंने कहा, "डी० एस० सी०। उसने यह मालूम करने के लिए फ़ोन किया था कि क्या मैं हर मंगलवार और बृहस्पतिवार को यूनिवर्सिटी में लेक्चर दे सकता हूं। बहुत ज़ोर दे रही थी, जोंक की तरह चिपक ही गयी थी। बाक़ी तो तुमने सुना ही था।"

आदिल की बाछें खिल गयीं। मैं चाहे जो कहूं, चाहे जो करूं, उसे सब अच्छा लगता है।

वह कोई आधा घंटा और मेरे पास बैठा रहा, फिर अपने घर चला गया। मैं खुली खिड़की के सहारे खड़ा उसे अहाते में से निकलकर, सीढ़ियों से दूसरी मंज़िल पर चढ़ते देखता रहा। हमारे फ़ौज में रहते अहाते में कुछ भी नहीं बदला। वैसे पिछले बीस वर्षों के दौरान कुछ भी नहीं बदला है। सिर्फ़ पेड़ बड़े हुए हैं और लोग भी बढ़े हैं। नये पड़ोसी आ बसे हैं, अब अपने अहाते में ऐसे लोग भी हैं, जिन्हें मैं नहीं जानता। आदिल ने अपने दरवाज़े में खड़े-खड़े मुझे हाथ हिलाया। जहां तक मुझे याद है, वह इसी फ़्लैट में रहता रहा है। हम बचपन से ही एक दूसरे के अच्छे दोस्त रहे हैं और एक बार भी आपस में नहीं लड़े। इसका पूरा श्रेय आदिल को है। मैं अपने कमरे की खिड़की के पास खड़ा याद करने की कोशिश करने लगा कि मैंने आदिल को पहली बार कब देखा था, पर कुछ याद ही नहीं आया... यह सब बहुत पहले की बात है। कल मुझे आदिल से पूछना चाहिए, उसकी याददाश्त मुझसे बहुत अच्छी है। मैं लेट गया, पर नींद जल्दी नहीं आयी। मुझे कामरेड तग़ीयेव का ख़याल आ गया। कितना अच्छा हो अगर इसका कोई नतीजा निकल आये! सच कहूं, तो ऐसी ज़िंदगी से मैं ऊब चुका हूं। फिर न जाने क्यों मुझे आदिलवाली बात का ख़याल आ गया, लेकिन दिमाग़ पर लाख ज़ोर देने के बावजूद मैं कुछ याद न कर सका।

जब मुझे नींद आने लगी, तो मैं इसी निष्कर्ष पर पहुंचा कि मनुष्य के साथ यह अन्याय ही है कि वह अपने जीवन की कुछ घटनाएं भूल जाता है, ख़ास तौर से उस हालत में, जब उसे जीने के लिए बहुत ज़्यादा समय नहीं मिलता है।

दूसरा अध्याय

वह लगभग हर शाम को आती थी। अगर घर में मेहमान होते, तो वह बैठक में नहीं आती, चाहे जितना आग्रह क्यों न किया जाता। वह जल्दी-जल्दी रसोई में सारी ख़बरें बताकर चली जाती। उस शाम मेहमान नहीं आये थे।

"मुबारक हो," वलीदा ने कमरे में आकर अपने ठिठुरे हाथ मलते हुए कहा। उसका छोटा-सा, दुबला-पतला चेहरा सद्भावना से खिला हुआ था। "तुमने यह ड्रेस ख़रीदी है या ख़ुद सी है? बहुत ही सुन्दर लग रही हो इसमें, क़सम से!"

"तुम भी कैसी बातें करती हो, वलीदा?" चाची मुस्कराकर बोलीं। "मैं इसे चार साल से पहनती आ रही हूं।"

"इसका मतलब है, तुम्हारी आकृति ही ऐसी है," वलीदा ने कहा। "हां, यही बात है। असली औरत की आकृति हर तरह की ड्रेस में अच्छा लगता है। मेरी जैसी का नहीं, मेरी बदक़िस्मती ही है यह। फ़िक्र मत करो," चाची के मेरी तरफ़ आंख से इशारा करने पर वलीदा ने कहा। "आजकल के बच्चे हम लोगों से ज़्यादा जानते हैं। मैं सब देखती रहती हूं कि वे अहाते में क्या करते रहते हैं। चाहो, तो हमें भी और भी कई बातें सिखा सकते हैं।"

"तुम अपने कमरे में जाओ न," चाची बोलीं।

"वहां ठण्ड है!" मुझे जाने की इच्छा नहीं हो रही थी। मैंने संगीत के सिद्धान्त पढ़ने में लीन होने का ढोंग रचा।

"यहां भी कोई ख़ास गरम नहीं है," चाची ने गहरी सांस ली। "वसन्त आ चुका है, पर मौसम गरम होने का नाम ही नहीं लेता है। चाय पियोगी?"

"तुम परेशान मत होओ," वलीदा बोली, "मैं ख़ुद बनाये

लेती हूं।" उसने अलमारी के पास जाकर उसका एक पल्ला खोल लिया। "मैं सबसे यही कहती रहती हूं कि तुम्हारे घर में ही असली चाय पीने को मिल सकती है। तुम्हें मालूम नहीं कि दूसरे घरों में कैसी चाय पीते हैं। कुछ नयी-ताज़ी खबरें सुनानी हैं तुम्हें।"

"कैसी?"

"हमारे यहां नये पड़ोसी आये हैं। कुलियेव के फ्लैट में।"

"कौन लोग हैं?"

"पति, पत्नी और एक बच्चा। लड़का मिकाइल की उम्र का है। मुझे पसंद नहीं आये वे लोग। सच कह रही हूं तुमसे, बिलकुल पसंद नहीं है।"

"तुम उनके साथ बातचीत कर चुकी हो?"

"तो क्या मैं ऐसे ही बताने लगती न तुम्हें! मैंने जाकर उनका दरवाज़ा खटखटाया। पड़ोसन ने दरवाज़ा खोला। मैं बोली: 'सलाम अलैकुम, मैं आपकी पड़ोसन हूं।' 'वालैकुम अस्सलाम, बहुत खुशी हुई', वह बोली, पर दरवाज़े में ही खड़ी रही। 'क्या ऐसे ही यहीं खड़े-खड़े बातें करेंगी?' मैंने पूछा। तब उसने हटकर मुझे अंदर आने दिया, मालूम पड़ा, इतनी बेशर्म नहीं है। औरत देखने में अच्छी है, वैसे तुम्हारे से कोई मुक़ाबला नहीं उसका, पर अच्छी है। फिर उसका पति भी आ गया। चुप्पा है। तेल के कुएं पर काम करता है। मैंने पूछा कि उनके पास पुराने घर में कितने कमरे थे। बस यहीं उगल गयी वह। कहने लगी चार कमरे थे। और झट मियां बीवी की नज़रें मिल गयीं। वे समझ गये कि वह ग़लती कर बैठी है।"

"समझी नहीं। क्या ग़लती कर बैठी वह?"

"मेरी जान, तुम लोगों की चालबाज़ियों का क्या समझो... कोई भला आदमी कभी चार के बदले में तीन कमरे लेने को तैयार हो सकता है?"

"एक कमरे के शायद ऊपर से उन्हें पैसे दिये गये होंगे?"

"कुलियेव ने?" वलीदा हंस पड़ी। "वे तो बस लोगों से पैसा निकलवाने की फ़िराक़ में ही रहते हैं!"

"तो क्या, उन्हें हमारा इलाक़ा पसंद होगा?"

"मैंने पता लगा लिया कि जिस इलाक़े से वे आये हैं, वह हमारे इलाक़े से बुरा नहीं था। उनका पुराना मकान बिलकुल आज़रबैजान

ऑयल ट्रस्ट के सामने था। मेरा दिल कह रहा है... ज़रूर दाल में कुछ काला है... बिलकुल पसंद नहीं आये वे मुझे। उन्होंने घर किन शर्तों पर बदले हैं, मैं सब मालूम कर लूंगी। देखती रहो।"

"वलीदा, वलीदा," चाची बोलीं। "तुम्हें आखिर इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है?"

"मैं तुम सबकी खातिर ही तो इतनी परेशानियां उठाती हूं," वलीदा ने सफ़ाई दी। "अगर वे अच्छे लोग हैं, तो मुझे क्या, खुशी से रहते रहें, पर अगर खराब हुए तो? मैं जब मरूंगी, तब समझोगे तुम लोग कि वलीदा कितनी अच्छी थी। सनोबर को जब मैंने पहली बार देखा था, तब क्या कहा था? तब किसी ने मुझ पर विश्वास नहीं किया था। फिर क्या हुआ?"

"मिकाइल," चाची बोलीं। "अपने कमरे में जाओ। सोने का वक़्त हो गया।"

"मैंने अभी चाय पूरी नहीं पी।"

"बाक़ी बची अपने कमरे में पी लेना।"

मैंने उन्हें शुभ-रात्रि कहा। चाची को मुझे प्यार करना पड़ा, कभी-कभी उसके बिना भी काम चल जाता था, लेकिन आज नहीं। वलीदा ने भी मुझे शुभ-रात्रि कहा और साथ ही एक ठण्डी सांस ली। वह लगभग हमेशा ठण्डी सांसें भरती रहती है, जब मुझे देखती है। मैं जानता था कि जैसे ही मैं जाऊंगा, वे मेरी मां के बारे में खुसुर-फुसुर करेंगी।

सच कहूं, तो अपने कमरे में पहुंचते ही मुझे इस बात का ज़रा भी अफ़सोस नहीं महसूस हुआ कि मैं उनके कमरे से यहां आ गया। मुझे अकेले रहना अच्छा लगता है। पहले यह मेरे पिता का कमरा था। वे अपने भाई, मेरे चाचा से बहुत मिलते थे। मैं अपने कमरे में टंगी उनकी तसवीर को देखकर इसी नतीजे पर पहुंचा हूं। अपने पिता को मैं कभी नहीं देख पाया, क्योंकि मेरा जन्म मई, १९४४ में उनकी मौत से डेढ़ महीने पहले हुआ था। मोर्चे पर उन्हें इस पूरे डेढ़ महीने मालूम था कि मैं पैदा हो चुका हूं, कि मेरा नाम क्या रखा गया है, पर मुझे उनके बारे में तब कुछ मालूम नहीं था। मेरे पिता, चाचा और दादा तीनों एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं। दादा की भी एक तसवीर मेरे कमरे में टंगी है। उस बड़े संदूक के ऊपर, जिसमें उनके सूट और

दो फ़ाक-कोट रखे हैं। मेरे दादा बहुत मशहूर संगीतकार थे। जिस स्कूल में मैं पढ़ता हूं, उसे उन्हीं का नाम दिया गया है। मेरा नाम मिकाइल भी उनके सम्मान में उन्हीं के नाम पर रखा गया। और यही कारण है कि मैं ऐसे संगीत-स्कूल में जाता हूं, जो मेरे नाम पर खोला गया लगता है। खुद सोचिये – हमारे नाम और कुलनाम एक ही हैं। शुरू में तो सारे अध्यापक चौंके, पर बाद में वे इसके आदी हो गये। मेरी समझ में नहीं आता कि मुझे क्यों उसी स्कूल में भरती कराया गया। मेरे दादा के संगीतकार होने से आखिर फ़र्क क्या पड़ता है? इसमें मेरा तो कोई दोष नहीं कि मैं संगीत नहीं सीखना चाहता। स्कूल में मेरा एकमात्र मनपसंद विषय है – चित्रकला। मुझे तीसरी कक्षा में ही कक्षा का भित्ती-समाचारपत्र तैयार करने का काम सौंप दिया गया था और चौथी में पूरे स्कूल का। चित्रकला में मैं हमेशा पांच में से पांच अंक पाता रहा था। पर पियानो-वादन और स्वरलिपि से पढ़कर गाने में पांच में से तीन अंक पाने के लिए मुझे न जाने कैसी-कैसी मुसीबतें उठानी पड़ती हैं। बाख़ की रचनाएं तो मुझे बिलकुल भी पसंद नहीं हैं। मैंने हज़ार बार कहा कि मुझे आम स्कूल में भरती करवा दो, पर कुछ नहीं किया गया। चाचा ने यही समझाया मुझे कि मेरे पिता की यही इच्छा थी कि मैं भी दादा की तरह संगीतकार बनूं। अगर पिता ज़िंदा होते, तो मैं उन्हें सारी बात समझा देता, पर चाचा से बात करना ही बेकार है। उनके अपने बच्चे होते, तो वे शायद उन्हें इस तरह परेशान नहीं करते। शायद उन्हें मुझ पर दया भी आती है, पर कर कुछ नहीं पाते, क्योंकि उन्होंने आखिर वादा जो किया है।

दूसरों के नाम से वचन देना सबसे आसान होता है। न मेरे पिता ने संगीतकार बनना चाहा और न ही चाचा ने, पर मुझे वे मजबूर कर रहे हैं। वह भी मेरे दादा के सम्मान में! दादा के सम्मान से क्या वास्ता है इसका? मैं भी जीता-जागता इनसान हूं, मुझसे भी तो पूछना चाहिए कि मैं क्या बनना चाहता हूं। अगर मेरे दादा संगीतकार न होकर ग़ोताखोर या पशु साधनेवाला होते, तो क्या मुझे भी पानी में ग़ोता लगाने या जानवरों को सधाने को मजबूर किया जाता? वैसे देखा जाये, तो मुझे यह बात संगीत-स्कूल जाने से कहीं ज़्यादा अच्छी लगती। एक और बात, जिसमें मेरे भाग्य ने साथ नहीं दिया, वह यह

थी कि मेरी श्रवण-शक्ति बहुत अच्छी थी। इसका पता मेरे प्रवेश-परीक्षा देते समय लगा। इस साल मेरे तीसरे कक्षा में पहुंचते ही मेरे लिए एक प्राइवेट टीचर को रख लिया गया। एल्मीरा खानम खुद संगीत-शिक्षालय में तीसरे कोर्स में पढ़ती हैं। वे हमारे यहां सप्ताह में तीन बार आती हैं। बहुत ही हंसमुख हैं वे। मैं उन्हें अपने बनाये चित्र दिखाता हूं, जो उन्हें बहुत पसंद आते हैं। हम दोनों कभी-कभी एक ही पियानो पर मिलकर एट्यूड बजाते हैं। मेरे ख़याल से वे बहुत अच्छे होते हैं। वे कहती हैं कि ऐसी बात नहीं है कि मुझ में प्रतिभा नहीं है, पर मैं आलसी और चालाक हूं। ऐसा इसलिए, क्योंकि शुरू में मैं स्वरलिपियां छिपा देता था और कहता था कि वे खो गयी हैं। मैं पहले भी ऐसी कारस्तानियां करता रहता था, तब हर बार चाची उन्हें ढूंढ़ने में जुट जाती थीं। लेकिन एल्मीरा के साथ मेरी यह चालबाज़ी न चल सकी। उन्होंने मुझसे पहले ही दिन कह दिया कि मैं अपनी स्वरलिपियां लेकर आऊं और अगर मैं चालाकी करता रहा, झूठ बोलता रहा, तो मेरे पूंछ उग सकती है।

मैंने लिखने की मेज़ के पास जाकर उसकी दराज़ में से एक डिब्बा निकाला। वह पिन की नोक जितने बड़े नन्हे-नन्हे दानों से भरा हुआ था। डिब्बा चाचा ने मुझे भेंट किया था। चाचा उसे पतझड़ में लाये थे। उन्होंने कहा था कि उसमें रेशम के कीड़ों के अण्डे हैं, वसन्त में उनमें से इल्लियां निकलेंगी। और उन्हें अगर मारा न जाये, तो कुछ दिनों में वे बहुत सुन्दर तितलियों में बदल जायेंगी। पतझड़ में वे दाने हलके पीले रंग के थे, पर अब ज़रा गहरे पीले हो गये हैं। मुझे कभी-कभी शक होने लगता था कि इन दानों में से कुछ निकलेगा, लेकिन तभी मुझे प्याज़ की-सी गांठों की याद आ जाती। पिछले साल चाचा ने मुझे पीली-सी प्याज़ की नन्ही-नन्ही पन्द्रह गांठें लाकर दी थीं। उन्होंने कहा था कि अगर मैं उन्हें एक तश्तरी में पानी भरकर डाल दूंगा, तो उनमें केसर के फूल खिल आयेंगे। मैंने वे गांठें पहले भी पानी में रखी थीं, पर उनमें से बिना फूलोंवाली हरे प्याज़ की पत्तियां ही निकली थीं।

एक हफ़्ते में, जैसा कि होना चाहिए था, अंकुर निकलकर बढ़ने लगे, कोई खास बात नज़र नहीं आयी। पर फिर वह जादू भरी सुबह आ गयी। मेरी नींद खुलते ही मुझे महसूस हुआ कि ज़रूर कोई अद्भुत

और सुखद घटना होने जा रही है। सारे कमरे में भीनी-भीनी खुशबू फैली हुई थी। नींद में होने के कारण मुझे लगा कि वह खुशबू सूरज की किरणों के साथ खिड़की के शीशे को भेदकर आ रही है।

मैं लपककर मेज़ के पास पहुंचा, तो देखा – हलके गुलाबी रंग के फूल खिले है और उनके किरमिजी व नारंगी रंग के पुंकेसर चिनगारियों की तरह चमक रहे हैं। मुझे तो लगा जैसे केसर के फूल तश्तरी में धीरे-धीरे घूम रहे हैं। बेशक मुझे केवल ऐसा भ्रम अप्रत्याशितता के कारण हुआ था, फिर भी मुझे यह बात याद रह गयी कि फूल धीरे-धीरे घूम रहे हैं... मैं इसके बाद अकसर उन फूलों के पास जाकर उनकी सुखद सुगंध सूंघता रहा, पर उससे मुझे कोई विशेष अनुभूति नहीं हुई।

हर रविवार को सुबह मैं उठते ही रेडियो खोल देता हूं, क्योंकि सवा आठ बजे बहुत अच्छे कंसर्ट होते हैं। पर आज थोड़ी देर हो गयी, कंसर्ट शुरू हो चुका था। कोई ड्यूक का आरिया गा रहा था। मुझे मालूम भी नहीं पड़ा कि एल्मीरा कब कमरे में आयीं। उन्होंने सलाम कहा। मैंने उनसे कहा:

"कितना अच्छा गा रहा है!"

"तुम्हें पता है, कौन गा रहा है?"

"नहीं। लेकिन है अच्छा गायक..."

"बहुत कम जानते हो तुम। अच्छा गायक... अरे, यह तो लेमेशेव है। कानों से सुनना ही काफ़ी नहीं होता है!"

मैंने उनसे पढ़ना शुरू करने के पहले दिनों में एक बार कहा था कि मेरी श्रवण-शक्ति बहुत अच्छी है। यह सच भी था, क्योंकि स्कूल में प्रवेश-परीक्षा देते समय अध्यापकों से मुझे यह मालूम पड़ा। एल्मीरा हंस पड़ीं और मेरी ओर ध्यान से देखकर बोलीं: 'कान तुम्हारे सचमुच बहुत अच्छे हैं।' मेनज़ेर चाची कमरे में थीं। यह बात सुनकर वे भौचक्की-सी रह गयी थीं। लेकिन एल्मीरा मेरी ओर देखकर मुस्कराती ही रहीं। कान मेरे सचमुच बड़े हैं। तब से वे मुझे गुस्से से हमेशा 'कान', 'कान' ही कहती हैं। उनके मुंह से यह बुरा नहीं लगता।

मैंने उन्हें लेशहोर्न के दो एट्यूड बजाकर सुनाये, जो उन्होंने मुझे बृहस्पतिवार को तैयार करने को दिये थे। मैंने बुरा नहीं बजाया, उन्होंने सिर्फ़ एक जगह मेरी ग़लती ठीक की। बहुत ही बोरिंग एट्यूड

हैं वे, इतने कि ऊब के मारे कोई मर ही जाये। वे भी शायद बोर होने लगी थीं, बोलीं:

"सुनो, तुमने कभी अपने लिए कुछ बजाने की कोशिश की है? सुनकर धुन समझने की कोशिश की है?"

स्कूल में हमें ऐसा करने की मनाही है, इससे हमारी टेकनीक ख़राब हो सकती है।

"नहीं," मैंने कहा। "नहीं की। पर किसलिए?"

"'किसलिए' से क्या मतलब? तुम आखिर एक होनहार संगीतकार बनने की तैयारियां कर रहे हो।"

मुझे गुस्सा आ गया। मैंने कहा कि मैं संगीतकार बनना ही नहीं चाहता।

"लेकिन तुम अपनी दादी या नानी के जन्म-दिन पर उन्हें बधाई देने जाओ और मेहमान तुमसे कुछ सुनाने को कहें, तब?"

"मेरे न दादी है, न नानी। दोनों मर चुकी हैं।"

"तुम्हें कुछ समझाना टेढ़ी खीर है... लेकिन संगीत तुम्हें खुद को तो अच्छा लगता है न – गीत या कुछ और?"

"बेशक अच्छा लगता है। बहुत-सी चीज़ें हैं ऐसी।"

"बाख को छोड़कर," उन्होंने बातों ही बातों में कहा। "लेकिन पिछले कुछ दिनों में तुमने कोई नयी चीज़ सुनी?"

"मुझे फ़िल्म 'सिसिली आकाश तले' का वाल्स बहुत पसंद है। मैंने उसे बजाने की कोशिश की पियानो पर, धुन काफ़ी आसान है। सुनाऊं?"

"नहीं, रहने दो। फिर कभी सुनाना। अच्छा, चलो अब गेडिके का एट्यूड बजाओ, हमने उसे काफ़ी अरसे से नहीं बजाया है।"

गेडिके तो लेशहोर्न से भी बदतर था।

"तुमने मुंह तो ऐसा बना रखा है, मानो तुम्हें कोई केस्टर ऑयल पिला रहा हो।"

सिखाने के बाद उन्होंने मुझे संतरे दिये, दो मुझे खिलाये और तीसरा खुद ने खाया।

"सच कहूं, तो ये तीनों मैं तुम्हारे लिए लायी थी, पर आखिरी मिनट में दिल दुखने लगा।"

संतरे खाने के बाद मैंने मेज़ की दराज़ में से उन्हें दिखाने के

लिए डिब्बा निकाला। उसे खोला, तो दानों की जगह भूरी इल्लियां नजर आयी। डिब्बे का ढक्कन उठाते ही उन सबने एक साथ सिर उठा लिये।

"अहा! बच्चे निकल आये!"

"कौन?" एल्मीरा ने पूछा।

"देखिये!" मैंने डिब्बा उनकी ओर बढ़ाया, वे चौंककर पीछे हट गयी।

"ले जाओ इन्हें यहां से!"

"ये तो रेशम के कीड़े हैं!"

"होंगे, पर इन्हें लेकर मेरे नजदीक मत आओ... तुम क्या इन्हें पालना चाहते हो?"

"शहतूत की पत्तियां खिलाऊंगा इन्हें।"

"लेकिन तुम उन्हें लाओगे कहां से, अभी तो एक भी पेड़ पर पत्तियां नहीं आयी हैं?"

मैं भौचक्का रह गया। ऊपर से मेनज़ेर चाची किसी अजनबी औरत और उसके सूखे-से लड़के के साथ मेरे पास आ पहुंचीं और बोलीं:

"आओ, हमारे नये पड़ोसियों से मिलो!"

आदिल से यही मेरी पहली मुलाकात थी।

हम दोनों भागकर ज़िला सोवियत गये। मुझे पक्का पता था कि वहां लाल और सफ़ेद शहतूत के दो पेड़ हैं। वैसे तो हम पोलीक्लीनिक भी जा सकते थे। वह पास ही है। उसके फाटक के पास शहतूत का बहुत बड़ा पेड़ है। लेकिन हमारे यहां का कोई भी आदमी उसके नज़दीक फटकने की हिम्मत भी नहीं कर सकता था, क्योंकि वहां रोज़ाना, सुबह से देर शाम तक एक भयानक दाढ़ीवाला आदमी उस पेड़ से पीठ सटाये खड़ा रहता था। मैं नहीं जानता कि उसे उस पेड़ में ऐसी क्या खूबी नज़र आती थी, पर वह हमेशा वहां चुप खड़ा रहता था। पोलीक्लीनिक का अरदली उसे रोज़ाना लाकर दिन भर के लिए छोड़ जाता था और शाम को ले जाता था। उसके चुप खड़े रहने से हमें कोई राहत नहीं मिलती थी, क्योंकि उसका चेहरा भयानक और खूंख्वार था। कुछ राहगीर सोचते थे कि वह भिखारी है और उसके हाथ पर कुछ पैसे रखने की कोशिश करते थे, कुछ इसमें सफल भी होते थे, पर उनके जाने के बाद उसकी हथेली से सिक्के लुढ़ककर पटरी पर

गिर जाते थे। कोई नहीं जानता था कि वह यहां कहां से आया था। कोई उसे पागल बताता था, कोई गुमचोट खाया हुआ, पर क्या बड़े और क्या छोटे उससे डरते सभी थे।

पेड़ों पर एक भी पत्ती न थी। सारी डालियां नंगी थीं। अब सारे कीड़े मर जायेंगे। वे बेकार ही अण्डों से निकले। अचानक मैंने देखा – आदिल पेड़ पर चढ़ रहा है। मैं भी उसके पीछे-पीछे ऊपर चढ़ गया। जब कोई ऐसा आदमी पेड़ पर चढ़े, जिसका इससे कोई लेना-देना न हो, तो मुझे उससे पहले चढ़ना चाहिए। मैं जानता था कि यह बेकार है, पर फिर भी चढ़ने लगा। कीड़े तो आखिर मेरे थे न। वह पत्तियों के अंखुए तोड़ रहा था, जो अभी फूटना शुरू ही हुए थे।

"अगर इन्हें मसलकर खिलाया जाये, तो शायद कुछ काम बन जाये," आदिल बोला।

हम पेड़ से उतरे ही थे कि मिलिशियामैन ने हम दोनों के गरेबान पकड़ लिये।

"शर्म नहीं आती तुम्हें? स्कूल में पढ़ते हो और पेड़ तबाह करते हो!"

"हम तो ये रेशम के कीड़ों के लिए तोड़ रहे हैं," आदिल ने उसे समझाया। "बहुत ज़रूरी हैं।"

मिलिशियामैन ने शायद पहले कभी रेशम के कीड़ों का नाम नहीं सुना था, क्योंकि उसने हमें फ़ौरन छोड़ दिया, लेकिन उसके चेहरे से मालूम पड़ रहा था कि वह भौचक्का रह गया है।

"देखो, फिर कभी ऐसा न करना। दोबारा यहां देखा, तो चौकी पर ले जाऊंगा।"

मैंने सोचा था कि कीड़े अंखुए नहीं खायेंगे। लेकिन पूछिये मत! अंखुए मसलकर डालते ही वे उन पर फ़ौरन टूट पड़े।

चाचा काम से घर लौटकर मेरे कमरे में कीड़ों को देखने आये।

"देखा, क्या नतीजा निकलता है, जब किसी चीज़ की ज़्यादा जानकारी नहीं होती है? मुझे अब याद आ रहा है कि मेरे दोस्त ने इन्हें किसी ठण्डी जगह में रखने को कहा था, ताकि ये समय से पहले अण्डों से न निकलें।"

"फ़िक्र की कोई बात नहीं," अचानक आदिल बोल उठा, "सबसे ज़्यादा मुश्किल इनके शुरू के दिनों में ज़िंदा रखने में ही पेश आयेगी,

बाद में पत्तियां निकल आयेंगी।" वह एक तरह से हमें तसल्ली दिलाने की कोशिश कर रहा था। चाचा से वह ऐसे बात कर रहा था, जैसे उन्हें कई सालों से जानता हो। चाचा को वह शायद बहुत अच्छा लगा। यह मैंने उनके आदिल की ओर देखने के ढंग से ही भांप लिया। आदिल की मिलिशियामैन से हुई बातचीत के बाद मैं समझ गया कि बड़ों से बात करने के मामले में वह माहिर है।

आदिल के हमारे अहाते में आने तक मेरी किसी और के साथ कोई खास दोस्ती नहीं थी। मेरे खयाल से ऐसा शायद मेरे म्यूज़िक-फ़ोल्डर के कारण हुआ। फ़ोल्डर और फ़ोल्डरों जैसा ही था, कोई खासियत उसमें नहीं थी, दफ़्ती का बना, डोरी के हैंडल, कवर पर उभरा लायर और बांधने के लिए लगे फ़ीते। मुझे अभी तक एक भी ऐसा आदमी नहीं मिला था, जो मेरे वह फ़ोल्डर लेकर जाते समय मेरे पास से शान्तिपूर्वक गुज़रा हो। बहुत ही आश्चर्य-जनक प्रभाव पड़ता था उसका मेरे आस-पास के लोगों पर। इसका कारण यही था कि हमारे महल्ले और शायद पूरे इलाक़े में अकेला मैं ही था, जो ऐसा म्यूज़िक-फ़ोल्डर लिये घूमता था। बीच में कुछ दिनों तक मैं अपनी स्वरलिपियां अखबार में गोल लपेटकर ले जाता रहा था, लेकिन यह अच्छा नहीं था। क्योंकि स्कूल पहुंचने तक वे इतनी मुड़ जाती थी कि सीधा रखने के लिए उन्हें म्यूज़िक स्टैंड से बांधने के सिवा और कोई चारा ही नहीं रहता था। उस फ़ोल्डर के कारण मैं घर से सुबह आधा घंटा पहले निकला करता था, ताकि रास्ते में मुझे कोई न मिले। घर पर मैंने यह बात किसी को नहीं बतायी थी, क्योंकि मुझे बताते शर्म आती थी। पर आदिल को मैंने सब बता दिया, इसी सुबह जब हम स्कूल जाने से पहले रेशम के कीड़ों के लिए शहतूत की पत्तियां के अंखुए तोड़ने निकले। वह मेरी तरफ़ देखकर विचारमग्न हो गया और फिर बोला कि ये सब बेकार की बातें हैं।

हम इल्लियों को चारा खिलाकर स्कूल रवाना हो गये। आदिल की मां हमें रास्ते के नुक्कड़ तक छोड़ने आयीं, आगे उसने उन्हें नहीं आने दिया। उन्होंने मुझसे वचन लिया कि हम सड़क सावधानी से पार करेंगे और पढ़ाई के बाद समय पर घर लौट आयेंगे। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। आदिल चौथी में जानेवाला था, यानी सयाना हो चुका था,

और वे भी उसके बारे में इतनी फ़िक्र करती रहती थीं, मानो वह दूधपीता बच्चा हो। मेरे बारे में कभी किसी ने इस तरह चिन्ता नहीं की थी। उसके मां-बाप घर पर भी उसका बहुत खयाल रखते थे और उससे बात भी बहुत प्यार भरी आवाज़ में किया करते थे। हमारी गली में कभी कोई बच्चों से इस तरह बात नहीं करता था। लेकिन इन सब बातों के बावजूद वह बहुत ही स्वतंत्र व्यक्ति था और मां के आंचल से लिपटा रहनेवाला तो बिलकुल ही न था।

आदिल और मैं बातें करते हुए जा रहे थे। वैसे तो बोल वही रहा था, मैं तो हां-हूं करता, ज्यादातर अग़ल-बग़ल देखता हुआ चल रहा था, क्योंकि मुझे मालूम था कि मुसीबत अब आने ही वाली है। स्कूल नं० १८ की दो लड़कियां पास से गुज़रीं और फ़ोल्डर पर नज़र डालकर हंस पड़ीं, एक ने दूसरी की बग़ल में टहोका मारा। मुझे बुरा तो लगा, पर यह बर्दाश्त किया जा सकता था।

दो गलियां पार करते ही मोड़ पर एक साथ तीन लड़के सीधे हमारी ओर आते नज़र आये। वे आदिल के स्कूल के थे और शायद तीनों ही चौथी में थे। उन तीनों ने एक महीना हुए इसी जगह मुझे रोककर मेरा फ़ोल्डर छीन लिया था। पहले तो मैं उनसे फ़ोल्डर वापस लेने के लिए एक के पास से दूसरे की ओर लपकता रहा, फिर यह सोचकर खड़ा हो गया था, बहुत ऊब गया था मैं। उन्हें मेरा खड़ा हो जाना अच्छा नहीं लगा। पहले तो सबने बारी-बारी से मेरी गर्दन पर हाथ चलाये, फिर फ़ोल्डर खोलकर सारी स्वरलिपियां सड़क पर बिखेर दीं। मैं उन्हें उठाने लगा और वे मेरा मज़ाक़ उड़ाते रहे।

उन लोगों ने भी हमें देख लिया और खुशी के मारे मुस्करा पड़े। मैंने आदिल से कहा कि बेहतर होगा हम उनके हमारे पास पहुंचने से पहले ही वहां से चम्पत हो जायें। लेकिन उसे इस पर बहुत आश्चर्य हुआ: 'हम क्यों भागें यहां से?'

मैं क्या जवाब देता, फिर जवाब देने के लिए वक़्त ही कहां बचा था। वे लड़के हमारे बराबर आने पर ऐसा ढोंग रचने लगे, मानो पास से गुज़र रहे हों, फिर उनमें से एक लम्बू ने मेरे हाथों से फ़ोल्डर छीन लिया। यह अच्छा हुआ कि मैंने फ़ोल्डर को फ़ौरन छोड़ दिया, वरना उसके हैंडल ही उखड़ गये होते।

"मार खानी है क्या?" आदिल ने शान्तिपूर्वक लम्बू से पूछा।

लम्बू का नाम असलन था। वह उनका सरग़ना था। उस समय फ़ोल्डर खोलने में लगा हुआ था। उसने सिर उठाकर कहा :

"क्या तुमसे?"

आदिल ने उसके पास जाकर फ़ोल्डर छीन लिया और मेरी ओर बढ़ा दिया।

"चलो।"

तब वे तीनों तुरन्त उस पर टूट पड़े। सच कहूं, तो मेरा मन किया कि मैं फ़ौरन वहां से भाग जाऊं, लेकिन आदिल के कारण मैं नहीं भागा। आखिर मैं उसे अकेला तो छोड़ नहीं सकता था। मैं उनकी तरफ़ झपटा और असलन का कोट पीछे से पकड़कर पूरे ज़ोर से उसे खींचने लगा। उसने पलटकर मेरे एक उलटे हाथ का मारा। मेरे दर्द तो हुआ, पर मेरा डर जाता रहा। अभी एक मिनट पहले तक डर के मारे मेरे पेट में पानी हुआ जा रहा था, पर मुझे अब इतना गुस्सा आया कि मैं डर-वर सब भूल गया।

इससे पहले मैं कभी किसी से नहीं लड़ा था। और अगर मुझे लड़ना आता होता, तो बेशक मैं कभी ऐसा न करता... हाथापाई फ़ौरन बंद हो गयी। सब मुझसे दूर हट गये और मुंह बाये मुझे देखने लगे। इतने बौरा गये थे वे, क्योंकि मैंने पागल की तरह पूरे ज़ोर से चीख़कर असलन के कान पर काट लिया था। उसके चेहरे पर आतंक छा गया और वह बुत की तरह खड़ा हाथ से अपना कान टटोलने लगा। अपने हाथ पर खून नज़र आते ही उसका चेहरा फक रह गया।

आदिल ने फ़ोल्डर को ज़मीन से उठाकर मुझे दिया और हम आगे चल दिये। वे चुपचाप खड़े हमें जाते देखते रह गये।

उस दिन हम स्कूल नहीं गये। मेरे पास बीस कोपेक थे और आदिल के पास तीस, जो सिनेमा के दो टिकटों के लिए काफ़ी थे। हम पूरे एक घंटे शहर में घूमते रहे, क्योंकि 'बाककम्यून' सिनेमा में पहला शो दस बजे शुरू होता था। मुझे डर था कि आदिल मुझ पर हंसेगा – मैंने एक आदमी को कुत्ते की तरह काट जो लिया था, पर उसने इस बारे में मुझसे कुछ नहीं कहा।

फ़िल्म देखने के बाद जब हम घर के नज़दीक पहुंच रहे थे, आदिल ने मुझसे पूछा कि मुझे असलन के काट लेने की सूझी कैसे थी। मैंने उसकी तरफ़ देखा, वह मुस्करा रहा था, फिर मैं भी हंस पड़ा। सबसे

अहम बात का ध्यान मुझे अब जाकर आया कि मैं म्यूज़िक-फ़ोल्डर उठाये चल रहा हूं। पहले मैं हमेशा यही सोचता रहता था कि सब मेरी तरफ़ ही देखे जा रहे हैं। पर आज सब पास से गुज़र रहे थे और किसी को मेरे फ़ोल्डर से कोई मतलब न था।

रास्ते में मैं आदिल के घर होता गया। मुझे लगा जैसे वह किसी जोखिम भरी यात्रा से घर लौटा है, न कि स्कूल से। उसकी मां उसके घर में आने पर बड़ी खुश नज़र आ रही थीं। उन्होंने आदिल को पांच बार प्यार किया, फिर यह देखने के लिए कि वह कैसा है, उसे बांहों में पकड़े थोड़ा दूर किया और फिर चूम लिया। उन्होंने मेरे साथ भी बड़ी खुशी से दुआ-सलाम किया और अपने साथ खाने के लिए बुलाया। मैं उनके यहां खाने के लिए नहीं रुका, क्योंकि एल्मीरा किसी भी क्षण आ सकती थीं और उन्हें मेरा देर से आना बिलकुल भी पसंद नहीं था। मैं जानता था कि वे सबसे पहले यही पूछेंगी कि मैंने वाल्ज़ के लिए कोई धुन चुनी है या नहीं। मैंने उन्हें धुन बजाकर सुनायी। वे उसे शान्तिपूर्वक सुनकर बोलीं कि उन्हें पता ही नहीं था कि मुझे तालपरिवर्तित संगीत पसंद है। मैंने उन्हें यह बताना ज़रूरी नहीं समझा कि वह तालपरिवर्तित वाल्ज़ पेव्ज़नर क्विंटेर की रचना है। फिर मैंने उन्हें लेशहोर्न और ब्राम्स की दो धुनें सुनायी। वे बहुत खुश हुईं और बोलीं कि अगली बार मैं उन्हें खुद कुछ कम्पोज़ करके सुनाऊं। मैंने पूछा कि क्या होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि एट्यूड से लेकर सिम्फ़नी तक, जो भी मुझे पसंद हो। वे मुझसे ऐसा करने को इसीलिए कहती थीं, क्योंकि वे खुद भी लेशहोर्न का संगीत सुन-सुनकर बोर होती थीं। बाद में मैंने बग़ल के कमरे में उन्हें चाची से यह कहते सुना कि वे मुझसे बहुत खुश हैं।

उसी समय आदिल मेरे पास आ पहुंचा। हम दोनों को शहतूत की पत्तियां लाने जाना था। मैंने उसे वाल्ज़ 'सिसिली आकाश तले' बजाकर सुनाया। वह आंखें फाड़े मुझे देखता रहा। बजाना खत्म किया, तो उसने एक बार फिर सुनाने का आग्रह किया। मैंने बजा दिया। उसने मुझसे कहा कि उसे मेरा पियानो बजाना अच्छा लगा और वैसे भी उसे संगीत से प्रेम है। मैंने मन में सोचा कि यह भी कोई संगीत था, पर कहा कुछ नहीं। लेकिन आदिल पहला आदमी था, जिसे मेरा पियानो बजाना पसंद आया था। चाची और चाचा मेरे

पियानो बजाने पर मुंह बनाते रहते थे। एल्मीरा बस मीन-मेख निकालती रहती थी या ज्यादा से ज्यादा इतना भर कहती थी कि ठीक है। लेकिन वही एक ऐसा आदमी था, जिसने सच्चे दिल से मेरे बजाने की तारीफ़ की थी। मैं उसे कुछ और भी बजाकर सुनाता, क्योंकि उसे सुनाने में मुझे बहुत आनन्द आया था, पर तभी मुझे रेशम के कीड़ों का ध्यान आ गया, जो सुबह का अपना बचा-खुचा चारा कभी का चट कर चुके थे।

जिला सोवियत के पास से मिलिशियामैन ने हमें फ़ौरन खदेड़ भगाया। हमें फिर दूसरी पेरेलल सड़क तक जाना पड़ा, जहां हमने सारी निचली डालें बिलकुल साफ़ कर दीं।

चारे की गंध आते ही कीड़ों में जान पड़ गयी, इससे पहले वे डिब्बे के पेंदे में मुर्दों की तरह पड़े थे। वे फ़ौरन अंखुओं के चूरे पर टूट पड़े। बीच-बीच में वे सिर उठाकर देखते भी जा रहे थे, शायद जानने के लिए कि उनका यह चारा आ कहां से रहा है।

* * *

अपने दूसरे साथियों के मुक़ाबले मैं आदिल को कुछ ही समय से जानता था, पर उसका आदी हो गया था। हम दोनों एक ही उम्र के थे। क़द में वह मुझसे छोटा था, पर उम्र में बड़ा लगता था। इसका कारण शायद यही था कि वह बहुत शान्त और आत्मविश्वास से परिपूर्ण रहता था। दो दिन पहले की बात है। हम सड़क पर फ़ुटबाल खेल रहे थे, १५१ न० घर के दल से। जो लड़के हमारे घर की टीम में शामिल थे, वे खेल रहे थे, जबकि बाक़ी सब फ़ुटपाथ पर खड़े हमारा उत्साह बढ़ा रहे थे। खेल और दर्शकों का उत्साहवर्धक शोर तब तक जारी रहा, जब तक कि याशका ब्राउरमान के शॉट से फ़ायरमैन आग़ासफ़ की खिड़की का शीशा न टूट गया। सब पलक झपकते वहां से भाग गये, क्योंकि आग़ासफ़ को उस लड़के का पता लगाने में कोई दिलचस्पी नहीं थी कि शीशा किसने तोड़ा है। उसे तो बस सबसे पहले हाथ आनेवाले लड़के को पकड़ लेना था, यह सभी जानते थे। इसीलिए सब के सब भाग गये थे, एक आदिल को छोड़कर। आग़ासफ़ भागा हुआ उसके पास पहुंचा, पर आदिल शान्त खड़ा उसकी ओर देखता रहा।

"सलाम अलैकुम," आदिल ने कहा। "क्या आपकी खिड़की का शीशा तोड़ा है इन लोगों ने?"

फ़ायरमैन हाथ नीचे करके चुप खड़ा रह गया, क्योंकि उसकी समझ में नहीं आया था कि उससे पूछा क्या गया है।

"वालैकुम अस्सलाम," वह बोला। "तू कौन है?"

"मैं आपका नया पड़ोसी हूं।"

"पर तुम्हें दूसरों के शीशे तोड़ना आखिर किसने सिखाया है?"

"मैं फ़ुटबाल नहीं खेलता," आदिल ने उससे कहा। "मुझे यह खेल ज्यादा पसंद नहीं है।"

आग़ासफ़ ने उस पर नज़र डालकर सिर हिलाया और अपने घर में लौट गया।

आदिल हैवीवेट बॉक्सर बनना चाहता था और मुझे उम्मीद थी कि वह जरूर बन जायेगा, क्योंकि उसका स्वभाव ही ऐसा था। लेकिन मैं कुछ भी बनने के सपने नहीं देखता था। यह कोई अच्छी बात नहीं थी।

एक बार मैं अहाते में गया, तो मैंने हमारे पड़ोसी शूरा का दरवाज़ा खुला पाया। मैं उनके पास गया। मुझे उनके यहां बहुत अच्छा लगता था। वे रिकार्ड इकट्ठा करते थे। मेरे ख़याल से उनके पास बाकू में रिकार्डों का सबसे बड़ा संग्रह था। उनके घर में ताकें ही ताकें थीं, जो रिकार्डों से अटी पड़ी थीं। वे उन्हें ग्रामोफ़ोन पर नहीं, बल्कि बिजली के अम्प्लिफ़ायरवाले एक खास रिकार्डप्लेयर पर बजाते थे। उनके बहुत-से रिकार्ड मुझे उनके नामों के कारण ही अच्छे लगते थे। जैसे "चिड़ियों का सौदागर", "जिप्सी बैरन", "टरनटेल्ला" वग़ैरह। कई बार मुझे रिकार्ड सुनकर अफ़सोस होता था, क्योंकि उसके बजते ही महसूस होने लगता था कि उसका संगीत शीर्षक से बिलकुल मेल नहीं खाता। ऐसा मुझे पहली बार "मुक्त निष्कासक" सुनते समय महसूस हुआ था। पर बाद में मैंने शीर्षकों पर ध्यान देना बंद कर दिया। अब मैं रिकार्ड सुनने के बाद ही पूछता कि उसका नाम क्या है। शूरा और उनकी पत्नी फ़ांगिज अकसर रिकार्ड सुनते रहते थे। मेरे ख़याल से उन्हें मेरा उनके यहां आना अच्छा लगता था। शूरा मुझे मेरे पिता और दादा के बारे में बताते थे। उनके पास पिता जी के साथ हम्माम में लिया एक फ़ोटो था। तब वे दोनों पंद्रह बरस के

थे। शूरा का सारा कमरा अपने भाई के फ़ोटो से भरा पड़ा था। वे बताते थे कि उनका भाई येरेवान नगर में एक जाना-माना कलाकार थे। उनका नाम अरम करीफ़्यान था। वे सारे फ़ोटो उनकी अलग-अलग भूमिकाओं के थे। शूरा बिजली मिस्तरी थे और फ़ांगिज़ सेमाशको नामक अस्पताल में नर्स थीं।

उस दिन हमने बैठकर एक नया रिकार्ड सुना। उसमें किसी ने पियानो बहुत अच्छा बजाया था। पियानोवादक का नाम भी उसके वादन जैसा अच्छा था – त्स्फ़ासमान। रिकार्ड का शीर्षक था – "फ़िल्मी गीतों की स्वैरकल्पना"।

मैं उसे एक बार और सुनना चाहता था, पर फ़ांगिज़ बोलीं:

"कल सुनेंगे। श-श-श! नागिन अभी घर पर है!"

"नागिन" वे वलीदा चाची को कहती थीं। उनका गलियारा साझा था, जिसमें केवल प्लाइवुड का दीवार लगी थी। इसलिए एक दूसरे को सब सुनाई देता था। वलीदा को संगीत से नफ़रत थी। जहां संगीत शुरू होता कि वह दीवार धमधमाने लगती थी। एक बार उसने एक मुर्गा खरीदकर उसे दीवार के पास बांध दिया था। मुर्गा सुबह पांच बजे इतने ज़ोर से बांग देता कि दूसरी मंज़िल पर मेरे कमरे में भी शोर सुनाई देता। जबकि मेरा कमरा अहाते की तरफ़ नहीं, बल्कि सड़क की तरफ़ था। हमारे मकान के सभी लोगों ने वलीदा को बहुत मनाया कि वह मुर्गे को काटकर क़िस्सा खत्म करे, पर वह तभी मानी, जब फ़ांगिज़ ने वादा किया कि वे संगीत केवल रात के दस बजे तक और इतवार को दोपहर के खाने के समय तक ही सुना करेंगे।

वलीदा खानम का दरवाज़ा भड़ से बंद हुआ, यानी वह कहीं चली गयी थी। हमने रिकार्ड लगाया ही था कि मुझे चाची की आवाज़ सुनाई दी। वे खाने के लिए बुला रही थीं, इसलिए मुझे जाना पड़ा।

चाची ने नज़र उठाकर मेरी तरफ़ देखा भी नहीं, सिर्फ़ कहा कि मैं हाथ धो लूं। इसका मतलब था कि चाचा घर पर नहीं हैं। उनके सामने वे मुझसे कुछ बात ज़रूर करती थीं। लेकिन मुझे इसकी कोई परवाह नहीं थी कि वे मेरी ओर देखती हैं या नहीं। बल्कि वे देखती नहीं थीं, तो अच्छा ही लगता था। हाथ धोने से पहले मैंने जाकर एक नज़र रेशम के कीड़ों को देखा। उनका थोड़ा चारा अभी पड़ा था। पर वे काफ़ी बड़े हो गये थे। उनका रंग भी बिलकुल बदल

गया था, पहले वे बिलकुल काले थे, पर अब ज़रा हल्के रंग के हो गये थे।

रसोई में मैं गया, तो देखा वहां वलीदा बैठी है। मुझे देखते ही बोलना बंद कर दिया। चाची ने मेरे सामने सूप की प्लेट रख दी और वलीदा को दूसरे कमरे में ले गयीं। मैं रसोई में बैठा उनकी हर बात मज़े से सुनता रहा। मेरी जगह कोई और होता, तो वह शायद कुछ न सुन पाता, पर मैं सब सुन रहा था। मेरी श्रवण-शक्ति असाधारण थी। वलीदा आदिल के मां-बाप के बारे में बातें कर रही थी और मैं खाना खाता हुआ सब सुन रहा था। एकाएक मैंने खाना छोड़ दिया। मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। वलीदा ने चाची से कहा कि वे किसी और को कुछ न कहें, क्योंकि यह एक खतरनाक राज़ है। उसे यह कहने की ज़रूरत ही नहीं थी, क्योंकि मूर्ख भी समझ सकता था कि यह एक खतरनाक राज़ है!

सुबह चाची ने मुझसे कहा:

"देखो, तुम्हारा दोस्त सुबह सात बजे से सीढ़ियों पर बैठा हुआ है!"

मैंने बाहर झांककर देखा। आदिल सचमुच सीढ़ियों पर बैठा था। मैंने उसे बुलाकर घड़ी दिखायी। तब सिर्फ़ सात बजकर पच्चीस मिनट हुए थे! मेरे कहने का मतलब था कि मुझे देर नहीं हुई है। हमने साढ़े सात बजे मिलना तय किया था, ताकि स्कूल जाने से पहले शहतूत की पत्तियां तोड़कर ला सकें। आदिल की मां ने हमेशा की तरह बालकनी से हाथ हिलाकर हमें विदा किया।

हम दूसरी पेरेलल सड़क पर पहुंचे, तो रास्ते में देखा कि हाउसिंग आफ़िस के सामने कोई नहीं है। इसका मतलब था कि दाढ़ीवाले पागल को अभी नहीं लाया गया था। आदिल ने कहा कि हम यहीं पत्तियां तोड़ेंगे। हम दोनों शहतूत के पेड़ पर चढ़ गये, पर मैं बराबर नीचे देखता रहा – मुझे डर था कि कहीं वह अचानक मोड़ पर न आ धमके। आदिल मुझ पर ऐसे हंस रहा था, मानो वह उस पागल से बिलकुल भी नहीं डरता हो। पर मुझे अच्छी तरह मालूम था कि वह डरता है।

"तुम्हें इतना डर लगता है, तो नीचे उतर जाओ, मैं खुद तोड़ लूंगा! चलो! चलो!" आदिल बोला।

मेरा उतरने का कोई इरादा नहीं था। हमने पत्तियां तोड़ लीं,

अब उन्हें अंखुए नहीं कहा जा सकता था। इसके बाद घर रवाना हो गये। मेरा उसे कुछ बताने का इरादा नहीं था, लेकिन घर जाते समय, न जाने मुझे क्या सूझी, मैं अचानक उससे पूछ बैठा:

"तुम्हें अपने मां-बाप की याद है?"

उसने अचरज से मेरी तरफ़ देखा और सिर्फ़ मुस्करा दिया।

"तुम मुस्करा क्यों रहे हो?" मैंने पूछा। "ये तुम्हारे मां-बाप थोड़े ही हैं। मेरा मतलब वे जिनके साथ तुम रहते हो।"

"तो फिर किसके हैं?" वह हंस पड़ा।

"किसी के नहीं। उनके अपने बच्चे हुए ही नहीं।"

"कैसे नहीं हुए?! मैं किसका हूं?"

"तुम्हें उन्होंने अनाथालय से गोद ले लिया था, जब लड़ाई शुरू हुई थी। तुम्हें कुछ याद नहीं है?"

"तुम्हें यह क्या सूझी है?" उसने गुस्से से नहीं, गम्भीरता से पूछा। उसकी मुस्कान ग़ायब हो चुकी थी।

"सच मानो, मैंने यह बात गढ़ी नहीं है!"

"झूठ है यह सब! जब लड़ाई छिड़ी थी, तब मैं दो साल का हो चुका था। समझे? ऐसा होता, तो मुझे सब याद होता! तुम बेवक़ूफ़ी की बातें कर रहे हो। मां भी मेरी सगी मां है और पिता जी भी!"

मैंने कहा:

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी! मुझे क्या पड़ी है ऐसी!"

इसके बाद हमारे बीच में इस विषय पर कोई बात नहीं हुई। हमने रेशम के कीड़ों को चारा खिलाया और स्कूल भाग लिये।

मैं घर लौटा, तो देखा वह फाटक पर खड़ा मेरी बाट जोह रहा है।

"तुम्हारी बात सच है," वह बोला। "मुझे अब सब याद आ गया।"

"क्या याद आ गया?"

"ठीक से मुझे याद नहीं आता, पर इतना याद है कि वे मुझे अनाथालय से लाये थे। अनाथालय की मुझे याद है।"

मैंने कहा:

"तुम्हें बहुत दुख होता है?"

उसने इनकार में सिर हिला दिया।

"होना भी नहीं चाहिए, मेरे भी मां-बाप नहीं हैं। पिता जी मोर्चे पर मारे गये, मां भी नहीं रहीं। मुझे कोई दुख नहीं होता। तुम्हें तो बिलकुल भी नहीं होना चाहिए, क्योंकि तुम्हें गोद लेनेवाले मां-बाप तुम्हारे साथ सगे मां-बाप से अच्छा बर्ताव करते हैं।"

उसने सिर हिलाया और घर चला गया। इसके बाद उस दिन हम दोबारा नहीं मिले।

रात को किसी ने मुझे जगा दिया। मैंने आंखें खोलीं, शुरू में कुछ समझ में नहीं आया कि सपना देख रहा हूं या जाग रहा हूं। कमरे में मेरे चाचा और चाची व आदिल के माता-पिता खड़े थे। उनकी आंखों से आंसुओं की झड़ी लगी हुई थी।

चाचा ने मुझसे पूछा:

"आदिल ने दिन में तुमसे कुछ कहा था?"

"क्या? किस बारे में?"

चाचा ने आदिल की मां की तरफ़ मुड़कर देखा और फिर मुझसे पूछा:

"क्या उसने बताया था कि वह घर छोड़कर जानेवाला है?"

मेरे दिमाग़ में सिर्फ़ एक ही बात घूम रही थी कि उन्हें पता लग गया या नहीं कि मैंने उसे सारी बात बता दी है।

"नहीं," मैंने कहा, "उसने मुझे कुछ नहीं बताया।"

तब आदिल के पिता जी ने मुझसे पूछा:

"क्या वह तुम्हें किसी बात से परेशान नज़र आया था? कहीं किसी ने उसे ठेस तो नहीं पहुंचायी थी?"

मैं समझ गया कि उसने उन्हें कुछ नहीं बताया था।

"नहीं," मैंने कहा। "उसने मुझे कुछ नहीं बताया था।"

इसके बाद वे लोग चले गये। चाचा और चाची ने एक दूसरे की ओर देखा, चाचा सिर हिलाकर बोले:

"कैसे-कैसे नीच रहते हैं इस धरती पर!"

चाची बोलीं:

"मुझे पक्का विश्वास है कि वलीदा ने उसे कुछ नहीं कहा है। पूरा विश्वास है!"

"वलीदा ने नहीं, तो किसी और ने बताया होगा! मेरे हाथ आ गया वह, तो उसका गला ही घोंट दूंगा।"

उस दिन सब आदिल ही के बारे में बातें करते रहे। मेरे ख़याल से उस दिन सारे पड़ोसी अपने कामों पर देर से पहुंचे होंगे। मैं भी स्कूल देर से, दूसरे घंटे में ही पहुंचा। उजाला होते ही वलीदा हमारे घर में आ धमकी। उसने कहा कि आदिल के पिता ने रात को मिलिशिया में रिपोर्ट दर्ज करवा दी है और वे सारी रेलों और बाकू से बाहर जाने-वाली गाड़ियों में उसकी तलाश कर रहे हैं। मालूम पड़ा कि आदिल के पिता तेल उद्योग के बहुत बड़े अधिकारी हैं। यह बात भी वलीदा ख़ानम ने ही हमें बतायी। सारे पड़ोसी यही अटकलें लगा रहे थे कि आदिल को यह कौन बता सकता है कि वह गोद लिया हुआ है। उसके पिता रात को उसकी तलाश में जाने के बाद से लौटे ही नहीं थे। आदिल की मां अकेली घर पर बैठी थीं। पड़ोसिनें बारी-बारी से उनके पास जाकर उन्हें तसल्ली दिला रही थीं, लेकिन सब बेकार था। वे सबकी बातें चुप बैठी हुई सुन रही थीं। वे सुबह हमारे यहां आयीं, मैं नाश्ता कर रहा था। वे मेरे सामने बैठ गयीं और बोलीं :

"मुझ पर मेहरबानी करो, याद करके बताओ, शायद उसने तुमसे कुछ कहा हो कि वह कहां जाने का इरादा रखता है। शायद उसने ज़िक्र किया हो और तुम भूल गये हो। कोशिश करो, बेटा, याद करो!"

उसने मुझे कुछ नहीं बताया था। मैं उनसे क्या कहता? वे उठकर चली गयीं।

अगर मुझे मालूम होता कि वह घर से भाग सकता है, तो मैं उसे कुछ बताता ही नहीं! वह तो हमेशा इतना शान्त रहता था, पर देखिये क्या सूझी उसे? कुछ समझ में नहीं आता कि वह घर से भागा क्यों? मैं तो नहीं भागा अभी तक! शायद इसलिए कि उसे गहरा धक्का लगा हो। लेकिन वह भागकर जा कहां सकता है? उसे हर हालत में ढूंढ़ निकाल लिया जायेगा!

मैं सारे रास्ते यही सोचता रहा कि जब वह लौट कर घर आयेगा, तब तो सभी को मालूम पड़ जायेगा कि सारा दोष मेरा ही था। मैं सारे दिन यही सोचता रहा कि तब क्या होगा।

एल्मीरा आयीं, तो मुझे बहुत ख़ुशी हुई।

"सुनो, तुम क्या भूल गये? तुमने मेरे लिए कोई धुन तैयार करने का वादा किया था।"

मैं भूला नहीं था। मैंने कई बार कोशिश की थी, पर कोई नतीजा

नहीं निकला था। जब भी मैं कोई धुन सोचता और उसे बजाता, तो मुझे लगता जैसे उसे मैं पहले भी सुन चुका हूं।

"मैं कुछ तैयार नहीं कर सकता।"

"क्यों?"

"क्योंकि मैं कुछ रच नहीं पाता। और कुछ रचना भी नहीं चाहता। मुझे अच्छा नहीं लगता।"

एल्मीरा ने मेरी तरफ़ ध्यान से देखा और पूछा :

"तुम्हें क्या संगीत में कुछ करने की इच्छा नहीं होती?"

"बिलकुल नहीं होती! यह सब मेरे चाचा ने सोचा था। मैं बिलकुल नहीं चाहता! संगीत से मुझे प्यार है। लेकिन संगीतकार बनने की इच्छा नहीं होती। मुझे साधारण स्कूल में भेज दें, तो अच्छा होगा।"

"तुम्हें मालूम होना चाहिए, मुन्ने," एल्मीरा बोलीं। "मुझे आज तक कोई ऐसा आदमी नहीं मिला, जिसे संगीत और उसके सिद्धान्त सीखना पसंद न हो। और कभी अचानक तुम्हें संगीतकार बनने की इच्छा हुई तो? तब यह सब, जो तुमने सीखा है, तुम्हारे बहुत काम आयेगा।"

"नहीं," मैंने कहा। "मैं चाचा से भी कह दूंगा। आज ही। उनकी जो मर्ज़ी हो, करें।"

"क्या कुछ हो गया है तुम्हें?"

मैं गला रुंध जाने के कारण चाहते हुए भी उन्हें कोई जवाब न दे सका। बस म्यूज़िक-स्टैंड को चुप खड़ा ताकता रहा। उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा और एक ठण्डी सांस लेकर अपना दायां हाथ मेरे गले में डालकर अपनी ओर खींच लिया।

"तुम्हें क्या हो गया है?"

चाची कमरे में आयीं, पर दरवाज़े में ही खड़ी रह गयीं। एल्मीरा और मैं पियानो पर मौन बैठे रहे। मैं उनके कंधे में मुंह छिपाये हुए था।

एल्मीरा ने चाची से कहा :

"आज हम कुछ गायेंगे-बजायेंगे नहीं।"

चाची बोलीं :

"सच?" उन्होंने और कुछ नहीं कहा। इसका मतलब था कि उन्हें

बहुत आश्चर्य हुआ है।

आदिल के पिता कोई पांच बजे घर लौटे। उनका चेहरा उतरा हुआ था। यह कोई मजाक़ थोड़े ही था, वे कल शाम से बिलकुल नहीं सोये थे।

वे अहाते में खड़े पड़ोसियों के पास से गुज़रे, जो उन्हें देखते ही चुप हो गये। जब वे सीढ़ियों पर चढ़ने लगे, तो शूरा ने पूछा कि आदिल के बारे में उन्हें कुछ मालूम हुआ है या नहीं। उन्होंने बिना कुछ कहे सिर हिला दिया।

मुझे आदिल के साथ हुई उस बात के बारे में बहुत अफ़सोस हो रहा था... मैं कोई दो घंटे कमरे में यूं ही चहलक़दमी करता रहा, एक मिनट को भी नहीं बैठा, बस यही सोचता रहा कि अब क्या होगा। अचानक मेरी नज़र रेशम के कीड़ोंवाले डिब्बे पर पड़ी। मैं उसके पास गया। सारे कीड़े सिर उठाकर मेरी तरफ़ देखने लगे। वे सुबह से भूखे थे। डिब्बे में हरी पत्ती का एक भी टुकड़ा नहीं बचा था, वे अंखुओं की भूरी छाल तक चट कर चुके थे। मैं पत्तियां लाने घर से बाहर भागा। ज़िला सोवियत के पास खड़ा मिलिशियामैन मुझे देखते ही चिल्लाया:

"ऐ, चलते नज़र आओ, मैं तुमसे पहले ही कह चुका हूं कि दोबारा यहां देखा, तो चौकी ले जाऊंगा।" वह मेरी ओर बढ़ा और मैं उससे बचकर भाग लिया। कोने पर रुककर मैंने उसकी तरफ़ देखा। वह वहीं खड़ा था।

मैंने दूसरी पेरेलल सड़क की ओर चल दिया। चलते-चलते मैं यही सोचता रहा कि रेशम के कीड़े अब हर हालत में मर जायेंगे, सुबह से उन्हें खाने को जो कुछ नहीं मिला है। मैं हाउसिंग ऑफ़िस तक पहुंचा, तो वहां पेड़ के पास कोई नज़र नहीं आया। मैंने अग़ल-बग़ल देखा, पागल कहीं नज़र नहीं आया। मैं पलक झपकते शहतूत पर चढ़ गया और पत्तियों के अंखुए तोड़ने लगा। निचली डालों पर एक भी अंखुआ नहीं रहा था, आदिल और मैं उन्हें पहले ही साफ़ कर चुके थे, इसलिए ऊपर की डालों पर चढ़ना पड़ा। दस मिनट में अपनी जेबें मैंने पूरी भर लीं। पेड़ से नीचे उतरने लगा, तो देखा, वह पागल नीचे खड़ा मुझे ताके जा रहा है। चेहरा उसका बहुत ही भयानक, पूरा काली दाढ़ी से ढका हुआ और नज़रें मुझ पर ही टिकी हुईं।

वह तने पर हाथ जमाये कुछ बड़बड़ाता हुआ मेरे नीचे उतरने का इंतज़ार कर रहा था। मैंने देखा कि रास्ते में कोई आ-जा नहीं रहा है। और अगर कोई होता, तो भी उससे फ़ायदा क्या होनेवाला था, हमारे इलाक़े में सभी तो उससे डरते थे। मेरे पैर जैसे मन-मन भर के हो गये। मैंने हाथों और पैरों से सबसे मोटी डाल को जकड़ लिया और उसके सहारे सहारे तने से दूर रेंगने लगा। मैंने सोचा कि इस तरह मैं उसकी पकड़ से दूर पहुंचकर नीचे कूदकर भाग जाऊंगा, ज़्यादा ऊंचाई नहीं है। फिर पकड़कर देखे वह मुझे! पर वह डाल के नीचे नीचे मेरा पीछा करता रहा। मैं थोड़ा और पीछे सरका ही था कि डाल चरमराने की आवाज़ आयी। नीचे गिरते वक़्त मुझे सिर्फ़ उसका चेहरा ही नज़र आता रहा था।

मुझे जब होश आया, मैंने ख़ुद को अपने घर के कारिडर में पाया। मैंने आंखें खोलीं, तो देखा कि वह पागल मुझ पर झुका हुआ है। मैं डरकर चीख उठा और फिर बेहोश हो गया। बेहोश मैं इसलिए हुआ, क्योंकि सिर के बल असफ़ाल्ट पर गिरने से मेरे दिमाग़ को चोट पहुंची थी। उस पागल ने मुझे ज़मीन से उठाया था और किसी को दिये बिना मुझे सीधे घर तक उठाकर लाया था। लोग उसका हाथ पकड़े चले जा रहे थे और वह सारे रास्ते उक्राइनी भाषा में चिल्ला-चिल्लाकर बोले जा रहा था। बाद में मालूम पड़ा कि वह चिल्लाता रहा था: "बच्चों को जान से नहीं मारना चाहिए!" वह घर पर भी मुझसे अलग होने को तब तक तैयार नहीं हुआ था, जब तक कि उपचारक उसे अस्पताल से लेने न आये। उन्होंने ही हमें बताया कि वह क्या चिल्लाता रहा था। उन्होंने बताया कि वह पूर्णतः निरापद है और वह पागल तभी से हो गया है, जब उसने लड़ाई के दौरान एक बम से अपने पूरे परिवार को अपनी आंखों से मरते देखा। उपचारकों ने बताया कि वह आज पहली बार बोला है, नहीं तो अब तक बिलकुल मौन रहा करता था।

पहले दो दिनों तक मेरा सिर चकराता रहा, जी थोड़ा मिचलाता रहा, फिर सब ठीक हो गया। लेकिन डाक्टर और उसके बाद मेरे दादा के एक दोस्त प्रोफ़ेसर ने, जिन्हें चाचा बुला लाये थे, मुझे हिलने-डुलने की भी मनाही कर दी। मुझे पढ़ने तक को मना कर दिया गया। मैं ऊब के मारे मर ही गया था। एक बात यह अच्छी हुई कि मेरी

आराम कुर्सी बालकनी में रख दी गयी थी, ताकि मैं कम-से-कम यही देखता रहूं कि अहाते में क्या हो रहा है।

इस दौरान एल्मीरा रोजाना मुझे देखने आकर मेरे स्कूल और उनके संगीत विद्यालय में हो रहे कामों के बारे में सब ब्योरेवार बताती रही। उन्होंने किसी तरह मुझसे वादा करा ही लिया कि मैं ठीक होते ही उनके लिए जरूर कुछ कम्पोज करूंगा। पता नहीं क्या पड़ी थी उन्हें मेरी कम्पोजीशन की। सबसे दिलचस्प बात यह रही कि रेशम के कीड़ों के लिए शहतूत की पत्तियां लाने चाचा ही रोजाना जाते थे। मेरी समझ में नहीं आता कि वे पत्तियां लाते कहां से हैं, क्योंकि पेड़ पर तो वे चढ़ने से रहे। आदिल के बारे में कोई नयी खबर नहीं मिली थी। फिर भी उसके पिता उसकी तलाश जारी रखे हुए थे। इस कारण वे घर पर न के बराबर ही रह पाते थे। आदिल जब आया, तो उसकी मां घर पर अकेली थी। वलीदा पागलों की तरह चिल्ला उठी थी: "आदिल लौट आया!" यह दिन के समय की बात है। मैंने देखा – आदिल सीढ़ियों से ऊपर चढ़ रहा है। उसकी मां बालकनी में निकलकर खड़ी उसे देखती रही। वह मां के पास गया, उन्होंने उसे बांहों में जकड़ लिया और रो-रोकर बार-बार पूछने लगीं: "तुमने ऐसा क्यों किया, बेटा? तुमने ऐसा क्यों किया?" आदिल ने धीरे-धीरे मां से कहा: "मुझे माफ़ कर दो, मां। मेहरबानी करके माफ़ कर दो।"

कोई आधे घंटे बाद वह मेरे पास आया। उसकी मां भी साथ आयीं। वे उसे पहले भी ज्यादा देर अपने से दूर नहीं रहने देती थीं और अब तो वे बराबर उसके साथ लगी रहती थीं। हम दोनों ने थोड़ी देर बात की। मैंने उसे अपने साथ जो हुआ, उसका पूरा क़िस्सा सुना दिया। जैसे ही मैंने अपनी बात खत्म की, उसके पिता जी आ गये। आदिल को देखते ही वे सीढ़ी पर बैठ गये। फिर उसका हाथ पकड़कर बड़ी मुश्किल से उठे और बिना कुछ बोले उसे वैसे ही घर ले गये। उसकी मां उनके पीछे-पीछे चली गयीं।

मुझे आदिल को देखकर बहुत खुशी हुई। मुझे यह खुशी इसका पता लगने से पहले हुई कि उसने मां को मेरे बारे में कुछ नहीं बताया है। मैंने सोचा था कि अब वह मुझसे दोस्ती छोड़ देगा, मैं इसके लिए जरा भी बुरा न मानता। आखिर तो उसे मेरे कारण ही इतना

दुख पहुंचा था, लेकिन उसने फिर भी मुझसे दोस्ती करना नहीं छोड़ा।

आखिर मुझे खड़े होने की इजाजत दे दी गयी। दादा के दोस्त आये, उन्होंने हथौड़ी से मेरे घुटनों पर ठकठकाया, मेरी आंखों के सामने अपनी उंगली इधर-उधर ले जाकर मुझे आंखें चलाने को कहा और सब ठीक पाकर मुझे उठने की इजाजत दे दी।

रेशम के कीड़ों ने खाना बंद कर दिया था, सब के सब ने एक साथ। एक मिनट पहले तक वे उन्हें नजर आनेवाली हर हरी चीज को चरचर करके खाते रहे थे, सिर्फ़ मोटे डंठलों को छोड़कर। पर फिर अचानक सन्नाटा छा गया।

हर कीड़ा बड़े आदमी की कानी उंगली जितना मोटा हो गया था और डिब्बे में बड़ी बेचैनी से घूम रहा था। पिछले कुछ दिनों में उनका रंग कुछ बदल गया था। अब उनके बदनों पर एक भी झुर्री नहीं रही थी, वे पूरे के पूरे तने हुए और तृणमणि जैसे द्रव से भरे हुए लगते थे। उनके सिरों से सुनहले और सफ़ेद रंग की बहुत बारीक धारियां खिंची हुई नज़र आती थीं। चाचा ने झाड़ू की कुछ सीखें निकालकर डिब्बे में रखने की सलाह दी। कुछ घंटों के बाद झाड़ू की सींखें और डिब्बे की सतह चमकीले रेशमी धागों से ढक गयी। कीड़े अब एक ही जगह जमे रहकर लगातार सिर हिलाते हुए अपने चारों ओर की हर चीज़ को कोमल रेशमी जाले से ढक रहे थे।

वे बिजली की रोशनी में भी अपना ताना-बाना बुनते रहे। रात होने तक हर इल्ली ने अपने चारों ओर एक झीना कोया बुन लिया था, जिसमें से उसका सिर हिलता हुआ नज़र आ रहा था।

लेकिन एक अकेला कीड़ा अपने पीछे-पीछे एक सुनहला धागा छोड़ता डिब्बे में भटक रहा था। वह दूसरे सभी कीड़ों की तरह उसी लय में अपनी आंखों के चारों ओर बड़े-बड़े स्याह धब्बोंवाला सिर हिलाकर अन्तहीन धागा निकाले जा रहा था। पर वह रुकने का नाम नहीं ले रहा था, रास्ते में पड़नेवाली हर चीज को रेशमी धागे से ढके जा रहा था, यहां तक कि दूसरे कोयों को भी।

"लगता है इसे इन कीड़ों ने खास तौर पर डिब्बे को बेलबूटों से सजाने के लिए छोड़ दिया है," आदिल ने फुसफुसाकर कहा। हम दोनों पूरे आधे घंटे से डिब्बे के पास उकड़ूं बैठे देख रहे थे। "शायद इसलिए ताकि इन कोयों में निकलनेवाले पतंगों को खाली डिब्बे में न

रहना पड़े।"

"क्या सचमुच इनके दिमाग़ होते हैं?"

"लेकिन यह आखिर दूसरे कीड़ों की तरह कोये में क्यों नहीं छिपता है? कहीं यह अपने लिए औरों से बेहतर जगह की तलाश में तो नहीं है, ताकि मिलते ही कोये में छिप जाये?"

"कहीं यह किसी खास क़िस्म का कीड़ा तो नहीं है, जो अपना सारा रेशम दूसरे कीड़ों को सजाने पर ही खर्च करना चाहता हो?" मैंने कहा।

"लगता है इस कीड़े के दिमाग़ में जरूर कोई ख़राबी है," चाचा ने हमारे ऊपर से देखते हुए कहा।

हम देखने में इतने मग्न थे कि चाचा और चाची के आने का हमें पता ही नहीं चला।

"यह तो निकम्मा है," चाची ने उनसे कहा। "देखिये, इसने कितना रेशम बिगाड़ डाला, दो कोयों के लिए इतना काफ़ी होता।"

"दया आती है इस पर," आदिल एकाएक कह उठा। "बाक़ी सब तो तितलियां बन जायेंगे, पर यह ऐसी ही इल्ली रह जायेगी।"

"अपनी क़िस्मत हर कोई खुद बनाता और बिगाड़ता है!" चाची ने ज़ोर देकर कहा। मैं जानता था कि वे उस अभागे कीड़े की तरफ़ नहीं, मेरी तरफ़ देख रही थीं। कितना ऊब चुका था मैं ऐसी बातों से!

"चलो, खाना खायेंगे," चाचा बोले।

रात को मेरी नींद खुली और मैं उठकर रसोई में गया।

डिब्बा सुनहले रेशम की हमवार तह से ढका हुआ था और उसके ऊपर लैंप की रोशनी में चमकते धागों से लटके रंगबिरंगे कोयों की झालरें झिलमिला रही थीं। कितना सुन्दर था! मानो किसी लम्बे-चौड़े हॉल में क़ालीन बिछा हो, ऊपर सोने-चांदी और बिल्लौरी झाड़-फ़ानूस लटक रहे हों। और उन झाड़-फ़ानूसों तले आखिरी आज़ाद बचा कीड़ा अपना सिर हिलाये जा रहा था।

मुझे ठण्ड लगी, तो मैं रज़ाई लाकर उसे ओढ़ डिब्बे के पास कुरसी पर बैठ गया। मैं आकार में आधे रह गये उस कीड़े को देखता तरह-तरह की बातें सोचता रहा। उसी रात मैंने फ़ैसला कर लिया कि मैं अपनी मां के पास जाऊंगा। गोद लेने का आखिर क्या मतलब होता

है? मैं आखिर इनसान हूं, कोई कुत्ता-बिल्ली नहीं। क्या पता तब मां चाहती थीं या नहीं कि मुझे गोद दिया जाये?

मेरी नींद खुली, तो दिन निकल चुका था। चाचा मेरे ऊपर झुके हुए थे। उन्होंने मुझसे कुछ नहीं कहा, सिर्फ़ सिर भर हिलाया। चाची भागी आयीं और मेरे माथे को हाथ से छूकर बोलीं:

"लगता है बुखार नहीं है।"

"जाकर लेट रहो," चाचा ने कहा।

"मुझे नींद नहीं आ रही है।" मुझे सचमुच सोने की इच्छा नहीं हो रही थी। "सच, मुझे यहां बहुत अच्छी नींद आयी थी।"

"मैं क्या करूं तुम्हारा?" चाचा ने कहा और एक ठण्डी सांस लेकर मेरे पास बैठ मेरे गले में हाथ डाल दिये।

उस कीड़े ने हिलना-डुलना बंद कर दिया। अब वह कीड़े जैसा नहीं लग रहा था। वह बिलकुल काला हो चुका था और सेम के बीज जितना रह गया था। लगता था जैसे किसी ने कोयों के बीच कोयले का टुकड़ा डाल दिया हो।

"लेकिन सोना तो तुम्हें पड़ेगा ही।"

"पर स्कूल का क्या होगा?"

"थोड़ी देर हो जायेगी। मैं हेडमास्टर को फ़ोन कर दूंगा। शायद वे इजाज़त दे देंगे।"

इजाज़त वे बेशक देंगे। स्कूल आखिर मेरे दादा, चाचा के पिता के नाम पर जो था। स्कूल में इसके मारे मेरा जीना हराम हो चुका था। फ़ायदा कुछ नहीं था, पहले घंटे से ही दिन भर एक ही बात सुनाई देती थी: "तुझे अपने को इस लायक़ बनाना है..."

साढ़े नौ बजे मेरी नींद खुली। चाची से "डाक्टरी जांच" करवायी और एक गिलास दूध पीकर फ़ौरन स्कूल भागा। देखा नुक्कड़ पर आदिल खड़ा है।

"तुम्हारे पास दस कोपेक होंगे? मेरे पास तीस हैं; दो टिकटों के लिए काफ़ी हैं। चलो, सिनेमा चलते हैं... मैंने तुम्हारे यहां दो बार फ़ोन किया, पर हर बार चाची ने रिसीवर उठाया, सो मैंने काट दिया।"

हम "निज़ामी" सिनेमा के सामने रुके।

"'तोस्का'* है," आदिल ने कहा।

मैं कुछ समझ नहीं सका।

"क्या मतलब?" पूछकर पोस्टर पर नजर डाली, तो देखा 'तोस्का' लिखा है। खूब नाम सूझा 'तोस्का'!

"यह तोस्का नहीं, औरत का नाम है 'तोस्का', बच्चो!" हमारे पास खड़ी एक अधेड़ उम्र की औरत ने समझाया। वह भी शायद यही सोच रही थी कि फ़िल्म देखे या नहीं।

"टिकट-खिड़की पर एक भी आदमी नजर नहीं आ रहा है," आदिल ने कहा। "शायद बेकार फ़िल्म है।"

फिर भी हमने टिकट खरीद लिये।

"सचमुच ही ऊब है," फ़िल्म शुरू होने के कुछ मिनट बाद आदिल बोला। "और ये हर वक्त गाते क्यों हैं? बकते क्या?"

मैंने कुछ जवाब नहीं दिया, सिर्फ़ सिर हिला दिया। मैं इससे पहले कभी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि लोग इस तरह गा सकते हैं।

आदिल कुछ समय तक बड़बड़ाता रहा, फिर शायद चुप हो गया, या मैंने ही उसकी बड़बड़ाहट सुनना बंद कर दिया था। जैसे ही कवेराडोस्सी ने अपना आख़िरी गाना शुरू किया, तो मुझे झुरझुरी हो आयी। मैं अपने आगेवाली सीट को दोनों हाथों से कसकर पकड़े बैठा उस बेवकूफ़ तोस्का को देख रहा था, जो किसी तरह समझ ही नहीं पायी कि उसने क्या कर डाला है। फिर मुझे उस पर बहुत दया आने लगी, जब वह उस आदमी की लाश के पास घुटनों के बल बैठकर रोने लगी, जिसकी हमारी आंखों के सामने छत पर हत्या कर दी गयी थी।

मैंने आदिल को भी सिहरते देखा, जब तोस्का बुर्ज के कंगूरों के पास आकर नीचे कूद पड़ी और उसका शरीर नीचे धुंधले नजर आ रहे जेल के रास्ते के पतपत्थरों पर गिरकर क्षत-विक्षत हो गया।

"तुम भी क्या!" आदिल बोला। "यह तो फ़िल्म है, यानी यह सब कल्पित है।"

---

* शब्दश्लेष : 'तोस्का' का रूसी में शाब्दिक अर्थ है – ऊब ; यहां आशय पुच्चीनी के ऑपेरा 'तोस्का' से है। – सं०

सिनेमा से बाहर निकलकर हम फिर पोस्टरों के पास रुक गये।

"यान कीपुरा। कितना सुन्दर नाम है!"

"यह कौन है?" आदिल ने पूछा।

"यह वही गायक है, जिसने कवेराडोस्सी का अभिनय किया था... और तोस्का का एला कोन्टी ने किया था... वह मिलान की ऑपेरा-गायिका है।"

घर लौटते वक्त मैंने आदिल को बता दिया कि मैंने अपनी मां से मिलने जाने का पक्का फ़ैसला कर लिया है। वह भी मेरे साथ जाना चाहता था, लेकिन मैंने कहा कि इसकी ज़रूरत नहीं है। सच कहूं, तो मुझे इस बात का बहुत डर था कि मेरी मां मुझे फ़ौरन नहीं पहचान पायेंगी और शायद आदिल को ही अपना बेटा समझ बैठेंगी। क्योंकि उन्होंने आख़िरी बार मुझे तब देखा था, जब मैं दो साल का था... मैं तो उन्हें फ़ोटो से फ़ौरन पहचान जाता, क्योंकि बड़े उम्र के साथ ज्यादा नहीं बदलते हैं... लेकिन आदिल को मैंने ये बातें बिलकुल नहीं बतायीं।

कोयोंवाला डिब्बा चाची ने तिपल्ले शीशे के सामने रख दिया, ताकि उसके सुनहले-रुपहले ताने-बाने तीनों शीशों में एक साथ दिखाई देते रहें। वे सबसे कहती रहीं कि उस डिब्बे को देखकर उनको बहुत शान्ति मिलती है। उनका चित्त पूरी तरह शान्त नहीं हो पाया, क्योंकि कुछ समय बाद कोयों के सिरे काले पड़ गये। और कुछ दिनों में उनमें भद्दे-से लिजलिजे छेद नजर आने लगे। उन छेदों में से घिनौने-से भूरे रंग के कीड़े रेंगकर बाहर निकल आये। आधे घंटे में सूख जाने के बाद वे कीड़े मोटी-मोटी भबरी सफ़ेद तितलियों में बदल गये। उन्हें देखकर कोई सोच भी नहीं सकता था कि वे कोयों में सिकुड़ी-सिमटी रही होंगी और कभी इल्लियां भी रही होंगी। तितलियों के पंखों पर बहुत बारीक पाउडर-सा छिड़का हुआ लग रहा था और वे उन्हें हर वक्त फड़फड़ाती रहती थीं। शुरू में वे उस अभागे कीड़े के बुने क़ालीन पर फुदकती रहीं। उड़ना उन्हें नहीं आता था। फिर डिब्बे में ही वे अपने-अपने जोड़े बनाकर एक दूसरे से बुरी तरह चिपट गयीं, साथ ही पंख भी ज़ोर-ज़ोर से फड़फड़ाती रहीं। चाची को यह बिलकुल अच्छा नहीं लगा। उनका चेहरा एकाएक लाल हो उठा, देखकर लगा, जैसे उन्हें किसी ने धोखा दे दिया है या बुरी तरह झाड़ दिया है।

उन्होंने डिब्बे को गत्ते के टुकड़े से ढक दिया, उसे शीशों के सामने से हटा दिया और हमसे कहा कि जाकर पढ़ाई करें। लेकिन जैसे ही वे रसोई से बाहर जातीं, हम अंदर जाकर गत्ता उठाकर देख लेते। तितलियां जोड़े बनाये एक दिन और आपस में चिमटी रहीं, फिर वे अलग होकर लड़खड़ाती हुई बिखरने लगीं। उनके पंखों से सारा पाउडर झड़ चुका था और पंखों के नाम पर किनारे झड़े, छितरे हुए तिकोने ही रह गये थे।

उसी शाम तक सारी तितलियां मर गयीं। डिब्बे के रेशम से ढके पेंदे में उनके बाद सिर्फ बीजनुमा अण्डों की छोटी-छोटी ढेरियां ही बचीं। चाचा ने उन्हें किसी अंधेरी जगह में रखने की सलाह दी, ताकि अगले वसन्त में उनमें से कीड़े समय से पहले न निकलें। मैं उन मरी हुई तितलियों और उनके छेददार ताबूतों यानी कोयों को देखता रहा और समझ नहीं पाया कि मैं सोच क्या रहा हूं। न जाने क्यों मुझे पिछले ग्रीष्म की वह घटना याद आ गयी, जब मैं चाचा के दोस्तों के यहां पीरशागी गया था और शाम को समुद्र के किनारे अकेला घूमने निकल गया था। मैं किनारे तक पहुंचा ही था कि अंधेरा हो गया। मैं अंधकार में डूबे समुद्र के किनारे खड़ा था, न चांद दिखाई दे रहा था, न तारे। समुद्र तक दिखाई नहीं दे रहा था, इतना घुप अंधेरा छा गया था। उस अंधकार में केवल लहरों का शोर सुनाई दे रहा था। मुझे अचानक लगा जैसे उस भयानक अंधेरे में मेरे सिवा चारों ओर न कोई है और न ही कभी कोई होगा। मैं एक मिनट और खड़ा रहा, इस कारण कि मुझमें वहां से हटने की शक्ति ही नहीं रही थी। फिर मैं मुड़कर दम लिये बिना सीधा घर तक भागता रहा। वह डिब्बा और उसमें जो रखा था, उसे देखकर मुझे वैसी ही महसूस हुआ था, जैसा कि तब समुद्र किनारे हुआ था। किसी अज्ञात और भयानक अनुभूति से उत्पन्न दुरूह भय था वह।

"तुम चुप क्यों हो?" चाचा ने पूछा और मेरी तरफ ध्यान से देखा।

"तो क्या जो कीड़े वसंत में निकलेंगे, वे भी ऐसे ही तितलियां बनकर फिर मर जायेंगे? फिर क्या फ़ायदा है इस सब से?" मैं जानता था कि मैं वह बात बिलकुल नहीं पूछ रहा हूं, जो पूछना चाहता था, पर जो मैं वास्तव में अनुभव कर रहा था, और पूछना चाहता था,

उसे व्यक्त करने के लिए उपयुक्त शब्द मुझे नहीं सूझ रहे थे।

"क्या मतलब?" चाचा ने मुस्कराते हुए कहा। "उन्हें जो करना चाहिए था, वे कर गये, यानी अपने वंश की वृद्धि कर गये। लोगों को इसी से तो फ़ायदा होता है। इस तरह हमें रेशम मिलता है।"

"मेरा मतलब यह नहीं था।" मैं जाना चाहता था, पर चाचा ने मुझे रोक लिया।

"फिर क्या पूछना चाहते थे?"

"मेरा मतलब उनसे होनेवाले फ़ायदे से नहीं था," मैंने कहा। "इन्हें फिर यह सब करने की क्या जरूरत है? एक दिन की जिंदगी के लिए कोयों में निकलने, अण्डे देने और फिर मर जाने की? क्या जरूरत है यह सब करने की इन्हें?"

"उनसे पूछता कौन है कि इन्हें यह करना चाहिए या नहीं," चाचा ने कहा। "प्रकृति का नियम ही ऐसा है।"

"तो क्या आदमी भी यही करते हैं?" मैंने पूछा। "उन्हें मालूम होता है कि हर हालत में उन्हें देर-सबेर मरना है, पर फिर भी जीते हैं? किसलिए?" मैं महसूस कर रहा था कि मैं वह बात नहीं पूछ रहा हूं, लेकिन दूसरे उपयुक्त शब्द मुझे सूझे ही नहीं। मैं यह बात कह ही रहा था कि उसी समय चाची रसोई में आयीं और मुझे घूरकर बोलीं:

"तुम पहले जरा आदमियों की तरह जीना तो सीखो..."

"सुनो, सुनो," चाचा ने उन्हें टोक दिया। "तुम भी खूब हो! अरे, लोगों की रेशम के कीड़ों से कभी तुलना की जाती है!" चाचा मुस्कराये, लेकिन फिर भी मैंने महसूस किया कि उन्हें मेरी बात बुरी लगी है। वैसे देखा जाये, तो किसे यह अच्छा लग सकता है, जब कोई कीड़ों से उसकी तुलना करे, भले ही वे कृषि के लिए लाभकारी क्यों न हों।

"मैं कुछ और ही पूछना चाहता था," मैंने बातचीत का रुख किसी तरह बदलने के लिए कहा। "मुझे तो उस कीड़े पर दया आ रही थी, जिसने अपना कोया बनाया ही नहीं। फिर भी उसने डिब्बे को सजा कितनी अच्छी तरह दिया!"

"अच्छा, अच्छा," चाचा मुस्करा उठे। "उस कीड़े के खिलाफ़ मुझे भी कुछ नहीं कहना है। अब तो खुश हो न? जाओ, थोड़ी देर

15-030

ताज़ी हवा में घूम आओ, आज आखिर इतवार है।"

मेरे जाते समय वे दोनों चुप रहे। मैं उन्हें देख नहीं रहा था, पर मैं जानता था कि मेरे जाने के बाद वे काफ़ी देर तक एक दूसरे की ओर चिन्तापूर्ण दृष्टि से देखते रहे होंगे और चाची ठण्डी सांसें लेती रही होंगी। एक बात मेरी समझ में नहीं आती थी, वह यह कि उन्हें सबसे ज़्यादा दुख मेरे इतने मूर्ख और अप्रिय होने का होता था, या चाचा के और अपने यह सब सहन करते रहने का।

मैं छत पर गया, जहां आदिल मेरा इंतज़ार कर रहा था। हम दोनों पतंग उड़ाने लगे। मैंने उससे भी रेशम के कीड़ों के बारे में बात की। मैं महसूस कर रहा था कि मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए, पर फिर भी अपने आप को रोक न पाया।

"आदमियों के साथ भी तो यही सब होता है," आदिल बोला। "मर्द और औरत होते इसीलिए हैं..."

यह अच्छा हुआ कि उसी समय छत पर आदिल के पिता जी चढ़ आये। मैंने अपनी ज़िंदगी में कभी ऐसा दूसरा बड़ा आदमी नहीं देखा था, जिसे पतंग उड़ाने में इतना मज़ा आता हो। हमने कभी किसी को नहीं बताया कि हमारे लिए पतंग वे बनाते थे। वे उन्हें ख़ास क़िस्म के वाटरप्रूफ़ कागज़ से बनाते थे। आदिल और मेरे ज़िम्मे सिर्फ़ उन्हें सजाकर पूंछें चिपकाने का काम ही रह जाता था। हमसे सब डाह करते थे, क्योंकि इतने बड़े पतंग किसी और के पास नहीं थे, न स्कूल में, न ही हमारे पूरे महल्ले में। उन्होंने मुझसे कहा:

"तुम उदास क्यों हो?"

"आप भी क्या!" मैंने कहा। "मेरा मूड बहुत अच्छा है।"

"अभी और भी अच्छा हो जायेगा।" उन्होंने आदिल से पतंग ले लिया और छत पर हवा के ख़िलाफ़ दौड़कर उसे उड़ा दिया।

"जल्दी-जल्दी डोर छोड़ो!" वे मुझ पर चिल्लाये, हालांकि मैं वैसे ही अपने पूरे ज़ोर से चरखी से डोर छोड़े जा रहा था। पतंग बराबर ऊपर चढ़ता चला जा रहा था। शुरू में वह ग़ोते खाता रहा, पर फिर एक जगह तन गया। मुझे लगा कि वह बड़ी सड़क तक पहुंच चुका है और समुद्र के ऊपर तना हुआ है। पर आदिल के पिता ने कहा कि यह मेरा भ्रम है, समुद्र तक पहुंचने के लिए दो गट्टे कम पड़ेंगे। हम छत के बिलकुल किनारे खड़े थे और सारा शहर नीचे फैला था।

पतंग की डोर मेरे हाथ में थी। मुझे सचमुच यह देखकर बहुत मज़ा आ रहा था कि हमारी पतंग इतनी अच्छी तरह उड़ रही है। लेकिन न जाने क्यों मुझे यह भी महसूस हो रहा था कि आदिल और उसका कंधा पकड़े खड़े उसके पिता को मुझसे कहीं ज़्यादा मज़ा आ रहा है।

तीसरा अध्याय

हम लोग बाहर दरवाज़े के पास खड़े आपस में हंस-बोल रहे थे। बीच-बीच में हम अपने परिचितों का सिर झुकाकर सहर्ष अभिवादन भी कर रहे थे और हमारे हवाई अड्डे पर आने के उद्देश्य के बारे में उनके प्रश्नों के उत्तर ऐसी निश्चिंतता से दे रहे थे, मानो हमारे ग्रुप के लिए तीन महीने के गर्मियों के टूर पर जाना आम बात हो।

एक घंटे बाद हमने बातचीत करना बंद कर दिया और परिचितों का अभिवादन भी आत्मसंयम के साथ, केवल शिष्टाचारवश करने लगे। इस तरह हमें उपर्युक्त प्रश्नों की बौछार को सीमित रखने में सफलता मिल गयी।

फिर हम अपने बाजों और सूटकेसों के ढेर के पास चुप खड़े हवाई अड्डे की चहल-पहल को ज़रा ख़ास दिलचस्पी के साथ देखने लगे। हमारे ग्रुप को छोड़कर सब इधर-उधर दौड़ते नज़र आ रहे थे।

हमारे पास सब बारीकी से और कई बार देखने के लिए काफ़ी समय था। गेट नं० ३ पर पिछले कोई पचास मिनट से बाकू-सिम्फ़ेरोपोल फ़्लाइट के टिकटों और सामान रजिस्ट्रेशन के लिए जो दौड़-धूप नज़र आ रही थी, उसमें हम किसी तरह भाग नहीं ले पा रहे थे, क्योंकि हमारे पास न टिकट थे, न पासपोर्ट। पासपोर्ट हमसे कामरेड तग़ीयेव ने तीन दिन पहले हमारे प्रोग्राम के आखिरी रिहर्सल के बाद ले लिये थे। उन्हीं कामरेड ने, जिन्होंने कल शाम को हम सबको टेलीफ़ोन करके हरेक से वादा कराया था कि हम ठीक समय पर पहुंच जायेंगे और कहा था कि वे खुद भी बोर्डिंग शुरू होने के ठीक दो घंटे पहले हवाई अड्डे पहुंच जायेंगे।

वे एकाएक "माता व बालक" कक्ष से प्रकट हुए और किंचित् रुष्ट मुद्रा में हमारे पास आये।

"आप लोग यहां क्या कर रहे हैं?" उन्होंने गुर्राकर पूछा।

"हर बाज़ी पर जीतनेवाले को तीस कोपेक और मार्कर को बियर पिलाने की शर्त पर बिलियर्ड खेल रहे हैं," सैमूर ने झट जवाब दिया। मैंने मन ही मन उसकी हिम्मत की दाद दी, पर उसके मज़ाक़ को अनसुना कर देने का ढोंग रचा।

हालांकि कामरेड तग़ीयेव के आने से मेरी हिम्मत, जो अब तक पस्त हो चुकी थी, कुछ बंधी, इसके बावजूद मैं सैमूर की तरह मज़ाक़ करने के मूड में नहीं था। अब जाकर मुझे महसूस हुआ कि मैं इस टूर से कितनी आशायें लगाये हुए हूं।

"आप लोग एनाउंसमेंट क्यों नहीं सुनते!" कामरेड तग़ीयेव ने दांत पीसते हुए कहा। मैं उनसे पूरी तरह सहमत था। आखिर यह कोई मुश्किल काम तो था नहीं अपने लिए ज़रूरी एनाउंसमेंट सुनना! "पांच बार एनाउंस किया जा चुका है। चलिये!" हम उनके पीछे-पीछे चल पड़े। "मैं अकेला हूं और आप इतने लोग हैं!.."

"कोई ज़्यादा तो हैं नहीं," सैमूर चूका नहीं, "गायक को मिलाकर कुल आठ ही तो हैं।"

"पर आप आर्केस्ट्रा निदेशक होने के नाते सब लोगों को कम-से-कम वी॰ आई॰ पी॰ रूम में तो ले जा सकते थे," कामरेड तग़ीयेव ने सचमुच गरम होकर कहा। "मुझे आप लोगों के सामान की वजह से देर हो गयी। मुझे विमान-चालक को मनाना पड़ा कि वह आपको सामान समेत प्लेन में सवार होने दे।" फिर वे अचानक रुके और उंगली उठाकर बोले: "देखो! छठी बार एनाउंस किया जा रहा है!"

"'फ़्लेमिंगो' ग्रुप से निवेदन है कि वे दूसरी मंज़िल पर वी॰ आई॰ पी॰ रूम में पहुंच जायें। कृपया एक बार फिर ध्यान से सुनिये..."

हम सबने बिना कुछ बोले एक दूसरे की ओर देखा।

कामरेड तग़ीयेव की भयानक मुख-मुद्रा तत्क्षण बदल गयी। अब वह खिसियाया और शर्म से लाल भी दिखाई दे रहा था। उसने माथे का पसीना पोंछा और क्षमा-याचनापूर्ण मुस्कान के साथ बोला:

"माफ़ कीजिये," उसने न जाने क्यों मुझे सम्बोधित करके कहा। "ग़लती हो गयी। मैं यह बताना ही भूल गया कि आप लोगों के

आर्केस्ट्रा का नाम 'फ़्लेमिंगो' रख दिया गया है। मुझे बिलकुल ही ख़याल नहीं रहा। आप लोगों को पसंद है यह नाम?"

बोर्डिंग के लिए हम सचमुच वी॰ आई॰ पी॰ रूम में से गुज़रे। मुझे पूरा विश्वास था कि हमें वहां से वापस भगा दिया जायेगा। इसका हमारे आर्केस्ट्रा को अच्छा-खासा अनुभव था। लेकिन सब ठीक रहा। वी॰ आई॰ पी॰ रूम में बड़े-बड़े लकड़ी के गमलों में ताड़ के पेड़ लगे थे, बीच में फ़व्वारा चल रहा था, गद्दीदार आराम-कुरसियां लगी थीं और छोटी मेज़ों पर पत्र-पत्रिकाएं रखी थीं। एक मेज़ पर कुछ स्त्रियां और पुरुष बैठे हुए बातें कर रहे थे। उसने हम पर एक उड़ती नज़र डाली। कामरेड तग़ीयेव ने हमसे कहा कि हम वहीं रुककर उसका इंतज़ार करें और गायब हो गये। मेरी आराम-कुरसी के सामनेवाली खिड़की में से हमें लेकर जानेवाला हवाई जहाज़ दिखाई दे रहा था। यानी उसकी सीढ़ियों के पास भीड़ लगाये खड़ी थीं। बोर्डिंग अभी शुरू नहीं हुई थी।

ऐरोफ़्लोट की नीली यूनीफ़ॉर्म में एक क्लर्क हमारी तरफ़ आयी। रास्ते में उसने फ़र्श पर लगे बाजों के केसों और सूटकेसों के ढेर के पास रुककर खीज के साथ सिर हिलाया, फिर ज़रा कर्कश स्वर में पूछा:

"आप लोग क्या 'फ़्लेमिंगो' ग्रुप वाले हैं?"

हम फ़ौरन जवाब न दे सके, जो इतना अजीब लगा कि पास की मेज़वाले लोग भी अपनी बातचीत बंद करके हमारी तरफ़ देखने लगे। हमने सैमूर की तरफ़ इस आशा से देखा कि वह जवाब देगा, पर उसे न जाने क्या सूझी कि उस क्लर्क को उसने आंख मार दी। वह भौचक्की रह गयी, बल्कि वही क्या, हम सब भी और खुद सैमूर भी चकरा गया।

"हां, हम 'फ़्लेमिंगो' ग्रुप वाले हैं," आदिल ने कहा और उठ खड़ा हुआ।

क्लर्क ने बड़ी मुश्किल से सैमूर से नज़रें हटायीं। पर जब तक वह हमसे बात करती रही बीच-बीच में सहमी हुई नज़रों से उसकी ओर देखती रही और हर बार वह गधा उसे आंख मारता रहा। बाद में उसने अपने इस तरह आंख मारने के कारण समझाये। मेरे सिवा सब लोग उसकी बातों में आ गये। मैं तो फ़ौरन समझ गया था कि पहली बार उसने क्लर्क को डर के मारे आंख मारी थी, क्योंकि

उसे लगा था कि वह हमें निकालने आयी है। और उसके बाद वह यंत्रवत आंख मारता रहा।

"मैं आप लोगों को हवाई जहाज़ तक ले जाने आयी हूं। अपना सामान उठाकर मेरे साथ चलिये।"

हम यात्रियों की भीड़ को चीरकर हवाई जहाज़ में सबसे पहले घुसे।

कामरेड तग़ीयेव हमें दरवाज़े पर मिला। उसने हमें अपना सामान जल्दी से बेगेज सेक्शन में रखने को कहा। फिर उसने हमारा परिचय विमान-चालक और नेवीगेटर से करवाया। उन लोगों से कामरेड तग़ीयेव ने हमारे बारे में न जाने क्या कह रखा था, क्योंकि वे लोग हमसे ऐसी बातें कर रहे थे, जैसे हम वास्तव में बहुत ही प्रतिष्ठित लोग हों। विमान-चालक को जब मालूम पड़ा कि हम इल-१८ से पहली बार उड़ रहे हैं, तो उसने हमें बाद में उड़ान के दौरान कॉकपिट में आने का निमंत्रण दिया। हमने भी उन सबको हमारे कंसर्टों में आने का न्योता दिया, जिसके लिए उन्होंने हमारे प्रति हार्दिक आभार व्यक्त किया।

कामरेड तग़ीयेव ने हम सबको टिकट, पासपोर्ट और एक-एक बंद लिफ़ाफ़ा भी दिया।

हम लोगों के अपनी-अपनी सीटों पर बैठ जाने के बाद ही बोर्डिंग शुरू हुई। मैंने लिफ़ाफ़ा फ़ौरन खोल डाला। उसमें नये करारे नोट और कुछ रेज़गारी थी, कुल मिलाकर एक सौ बीस रूबल चालीस कोपेक। आदिल के लिफ़ाफ़े में पचानवे रूबल थे। जैसा कि कामरेड तग़ीयेव ने बाद में बताया यह हमारा एडवांस था। कितना सुन्दर सपना लग रहा था यह सब! पर मुझे लगा कि दूसरे सब सपनों की तरह यह भी जल्दी ख़त्म हो जायेगा।

उसकी सीट मेरे पास ही थी। मैंने उनसे पूछ ही लिया कि क्रू ने हमारा इतना ख़याल रखा, इसका आख़िर क्या कारण है। कामरेड तग़ीयेव ने मेरी तरफ़ देखा, मुझे लगा कि वे बात को मुस्कराकर टाल देना चाहते थे, पर उसका इरादा फ़ौरन बदल गया और उन्होंने गम्भीर स्वर में कहा:

"ताकि आप लोग इस बात के आदी हो जायें कि आप बहुत अच्छे संगीतकार हैं। अभी तक आप लोगों का नाम न हो पाना मात्र

संयोग है। सब ठीक हो जायेगा, देख लेना। आपको मुझ पर विश्वास है?" उन्होंने पहले मुझ पर नज़र डाली, फिर आदिल पर। लेकिन इस बार मैंने सहमति में सिर नहीं हिलाया, क्योंकि मैं यह फ़ैसला नहीं कर पा रहा था कि वे मजाक कर रहे हैं या गम्भीरता से कह रहे हैं।

सिम्फ़ेरोपोल हवाई अड्डे पर हमें फ़िलारमोनी का प्रतिनिधि हमारा ही हमउम्र लड़का लेने आया। उसने बताया कि हमारा टूर याल्ता से शुरू होगा। कामरेड तग़ीयेव को वह आदरपूर्वक नाम और पितृनाम से दाऊद बालायेविच कहकर सम्बोधित कर रहा था। वैसे वलेरा केवल उन्हीं के साथ शिष्ट और विनम्र व्यवहार कर रहा हो, यह बात नहीं थी। बाद में मालूम पड़ा कि उसे हमारे ग्रुप के साथ कामरेड तग़ीयेव के आग्रह पर लगाया गया था, वे पिछले टूरों से एक दूसरे से अच्छी तरह परिचित थे। हम जब बस में अपना सामान लाद रहे थे, वे दोनों थोड़ी देर के लिए ग़ायब हो गये। कामरेड तग़ीयेव लौटकर आया, तो काफ़ी प्रसन्नचित्त दिखाई दे रहे थे। मैं बाकू में अपने महीने भर के रिहर्सलों के दौरान ही भांप गया था कि वे अपना मूड इतना जल्दी कैसे सुधार लेते हैं। यह सच है कि हमने नशे में उन्हें कभी नहीं देखा था, पर उनकी आंखों में आयी चमक और हलकी-सी बू अपना भेद खुद खोल देती थी। सैमूर के शब्दों में कहा जाये, तो "कामरेड शराब और फलों के मामले में खूब चुस्त-दुरुस्त रहते हैं।" उसने एक बार उनकी यह तैयारी फ़िलारमोनी के स्नैक-बार में देख चुका था। तब कामरेड तग़ीयेव ने काउंटर पर जाकर बारमैन से दुआ-सलाम किया था और उसने फ़ौरन उन्हें ब्रेंडी का एक गिलास और एक प्लेट में आधा खीरा दे दिया था। तभी उसकी नज़र सैमूर पर पड़ गयी, न जाने क्यों उसने उससे दुआ-सलाम नहीं किया, सिर्फ़ ग़ुस्से से देखा और एक सांस में गिलास खाली कर डाला। कुछ मिनट बाद ही वह हॉल में बैठा हमारा रिहर्सल देख रहा था, मानो कुछ हुआ ही न हो। रिहर्सलों के दौरान वह हमेशा मौन बैठा ध्यान से सुनता रहता था। उसने इनी-गिनी टीका-टिप्पणियां की थीं, पर वे सब सटीक थीं। उसने अपनी कोई टिप्पणी किसी भी वादक पर व्यक्तिगत रूप से नहीं की। वह मध्यांतर में या रिहर्सल के बाद स्टेज पर आता और अपनी बात ऐसे शुरू करता, मानो उसके सामने सैमूर नाम या चट्टान उपनाम का कोई मामूली संगीतकार नहीं, बल्कि कम से कम एड्डी रोज़नेर

या मैक्स प्रेगर हो। कहता : "माएस्ट्रो, आपको क्या नहीं लगा कि..." शुरू में "माएस्ट्रो" कहकर पुकारने पर सैमूर चौंकता और उसकी ओर सतर्क दृष्टि से देखता। केवल उसे ही नहीं, हम सबको लगता कि कामरेड तगीयेव ने हमारा मजाक़ उड़ाने का एक धूर्ततापूर्ण तरीक़ा ढूंढ़ लिया है, पर बाद में वह इसका आदी हो गया, हालांकि उस सम्बोधन में व्यंग्य छिपे होने का सन्देह उसे बराबर रहा। उसने हमारे कंसर्टों का प्रोग्राम बनाने का काम भी सैमूर को ही सौंपा और उसमें केवल दो-तीन आइटम जोड़कर लगभग ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया। सैमूर ने आपत्ति करने की कोशिश की, पर कामरेड तगीयेव ने उस पर विनीत दृष्टि डालकर समझाया कि वह वैसे तो उससे पूर्णतः सहमत है, पर उसको उन परिवर्त्तनों को इस कारण स्वीकार करना पड़ेगा, क्योंकि हमारा आर्केस्ट्रा कंसर्ट शून्य में या किसी एकान्त स्थान में नहीं, बल्कि श्रोताओं की उपस्थिति में देगा और हमें उनकी इच्छाओं और पसंद-नापसंद का ध्यान रखना ही पड़ेगा।

हम लोगों को होटल 'ओरीएंडा' में ठहराया गया, जो बिलकुल समुद्र के किनारे पर बना था। वलेरा ने हमें कमरों की चाबियां दीं, तब पता चला कि तीन आदमी सिंगल रूम में रहेंगे : कामरेड तगीयेव, सैमूर और मैं। बाक़ी सबको डबल-बेडवाले कमरों में रहना था। मैंने वलेरा के पास जाकर धीरे-से कहा, ताकि आदिल न सुन पाये, कि वह आदिल और मुझे एक ही कमरे में रखे। वलेरा ने कहा कि यह कोई बड़ी समस्या नहीं होगी, क्योंकि मेरे कमरे में दो आदमियों के लिए जरूरत से ज़्यादा जगह है।

कामरेड तगीयेव ने अपनी घड़ी पर नज़र डालकर कहा कि वे हमें अपना सामान जमाने और लंच के लिए पचास मिनट का समय दे रहा हैं। उसके बाद हम सबको उसके कमरे में इकट्ठा होना है। कामरेड तगीयेव के साथ पहली मुलाक़ात से ही मैं काफ़ी जल्दी सुखद आश्चर्यों का अभ्यस्त हो गया था, फिर भी अपने कमरे में क़दम रखते ही हमें इस सुख की एक बार और अनुभूति हो गयी। हमारे दोनों कमरों की सभी खिड़कियों से निस्सीम नीला समुद्र और उस पर जहां-तहां बिखरे यॉटों के तिकोने सफ़ेद पाल नज़र आ रहे थे। एक क्षण के लिए हमें लगा जैसे होटल के आगे न तो तट ही है और न ही दीवार और समुद्र का शीतल जल आह्लादक छपाकों के साथ हमारी खिड़कियों

के नीचे आकर थपेड़े मार रहा है।

इस भव्य पिक्चर कार्ड सदृश दृश्य के कारण मैंने शुरू में ध्यान ही नहीं दिया कि हमारे लम्बे-चौड़े, बढ़िया फ़र्नीचरवाले कमरे के कोने में एक पियानो रखा है। और वह भी सजावट के लिए रखा कोई बेसुरे स्वर निकालनेवाला पालिशदार खटारा नहीं, बल्कि काफ़ी अच्छे स्वरोंवाला पुराना "ज़िम्मरमैन"। मैंने इसका पता फ़ौरन उसके कीबोर्ड पर उंगलियां चलाकर एक-दो पीस बजाकर लगा लिया। मैं बैठा हुआ कोई धुन निकाल रहा था, पर इस बीच मुझे सुबह से ही आदिल के व्यवहार में आये बदलाव का ख़याल आ रहा था। गुस्लखाने के अधखुले दरवाज़े से आती आवाज़ों से लग रहा था कि वह शॉवर ले रहा है। पर वह न गुनगुना रहा था, न सीटी बजा रहा था और न ही मुझसे कोई बात कर रहा था। इससे कोई दस मिनट पहले उसने अपना सूटकेस खोलकर सामान भी बिना कुछ बोले जमाया था। हवाई जहाज में मुझे उड़ान शुरू होते ही नींद आ गयी थी, पर अब मुझे याद आया कि हवाई अड्डे पर और मेरे थोड़ी देर जागते रहने के दौरान भी वह काफ़ी उदास दिखाई दे रहा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि इसका क्या मतलब लगाऊं।

हम लोग खाना नहीं खा सके, क्योंकि जब तक मैंने आदिल से सवाल-जवाब किये, जिस से मुझे कोई ख़ुशी हासिल नहीं हुई, कामरेड तगीयेव के कमरे में इकट्ठा होने का समय हो गया।

"अरे, भाड़ में जाने दो उसे," मैंने उसे सलाह दी। "अगर तुम मेरी सलाह मानो, तो मैं यही कहूंगा कि वह तुम्हारे योग्य बिलकुल नहीं है। सच कह रहा हूं, सच!" मैं आदिल को प्रतिवाद करने को इच्छुक देखते ही चिल्ला पड़ा। "थूको उस पर और भूल जाओ!"

"उसने मुझसे कहा था कि उसे केवल एक आदमी पसंद था और पसंद है और वह हो तुम!" आदिल ने मुझे बताया।

"देखा! क्या तुम अब भी नहीं समझे कि वह किस क़िस्म की है? यह सब उसने तुम्हें जलाने के लिए गढ़ा है।"

"ऐसी क्या पड़ी है उसे मुझे जलाने की!" आदिल ने खिन्न मुस्कान के साथ कहा। "यह सच है। उस रात को उसने तुम्हें जब फ़ोन किया था, इसके बारे में भी उसने मुझे साफ़-साफ़ बता दिया था।" उसने मुझ पर उलाहना भरी नजर डाली, और मुझे सचमुच

उस पर बहुत दया आयी। "तुमने मुझसे यह बात छिपायी क्यों? अगर मुझे मालूम हो जाता कि उसने तुम्हें फ़ोन किया था, तो मैं उससे कल बात ही नहीं करता।"

"अच्छा, चलो," मैंने उसका हाथ पकड़कर आराम-कुरसी से उसे दरवाजे की ओर खींचा। "तुम चाहे बुरा मानो या न मानो, पर फिर भी मैं यही कहूंगा कि वह निकम्मी है। कूड़मग़ज़, पत्थरदिल लड़की है वह। जब वह तुम जैसे आदमी को ही ठीक से नहीं समझ पायी है, तो उसकी पसंद के क्या कहने।" आदिल को अच्छी तरह जाननेवाला आदमी ही उसकी वर्तमान मनःस्थिति और उसके भावी दुष्परिणामों को ठीक से समझ सकता था। ऐसे आदमी कुल तीन थे – उसके माता-पिता और मैं। इस "पीली ड्रेसवाली" से पहले आदिल को काफ़ी अरसे से कोई लड़की पसंद नहीं आयी थी।

पिछली बार उसके साथ ऐसी घटना दो साल पहले घटी थी। तब गर्मियों में हमने सेना छोड़ी ही थी और हमारे कहने पर हमें घर रवाना होने से पहले रेजिमेंट के कुछ और संगीतकारों के साथ अक्त्यूबिंस्क प्रान्त के दोम्बारोव्का गांव के "सेवेरनी" (उत्तरी) सरकारी फ़ार्म भेज दिया गया था। हमने असैनिक कपड़ों में कुछ कंसर्ट दिये। आदिल ने फ़ौजी क्लैरिनेट के बजाय सैक्सोफ़ोन बजाया। हमने बहुत सीमित कार्यक्रम रखे – "बुखेनवाल्ड अलार्म", "रूसियों को युद्ध नागवार है" और कोई पांच-छः दूसरे गीत। एक हफ़्ते बाद हमें पास के एक सरकारी फ़ार्म भेजा गया, जहां हमें विद्यार्थियों और मशीन-आपरेटरों के लिए दो-तीन कंसर्ट देने थे। हम एक नये, दो पेट्रोल टंकियों और पावरफ़ुल इंजनवाले ट्रक में वहां पहुंचे। उसे झोरा नाम का, बाल्टिक बेड़े का एक भूतपूर्व नाविक चला रहा था, जो हमारा मित्र, शुभचिन्तक और ड्राइवर भी था।

हो सकता है, आनेवाले कई सालों तक मैं अगस्त के इन दो गरम सप्ताहों को अपने जीवन के सबसे सुखद और बेफ़िक्री के दिन समझता रहूं। पर शायद आदिल ऐसा न करे। हां, तो उसी सरकारी फ़ार्म की अनाज की कोठियों के पास बने डांसफ़्लोर पर, जिसे तीन हार्वेस्टरों और दो ट्रैक्टरों की हैड-लाइटों से रोशन रखा गया था, आदिल को काफ़ी अरसे बाद एक लड़की अच्छी लगी थी। मैं कंसर्ट के बाद उन्हें साथ देखते ही यह समझ गया था।

अगले डांस का इंतजार करते हुए आदिल लड़की के साथ, जो एक आकर्षक, सुगठित युवती और लेनिनग्राद मेडिकल इंस्टीट्यूट की छात्रा थी, बात कर रहा था। दूसरे सभी भावी डाक्टरों की तुलना में वह अपने सम्भाषी से क़द में कोई दो सेंटीमीटर छोटी थी, जिससे उसका नारीसुलभ रूप और आकर्षण असीम हो उठा था।

आदिल ने जीवन का पूरा आनन्द लेते हुए उसके साथ एक और डांस किया। उसके बाद उसे किसी ने इशारे करके एक ओर बुलाया।

"ऐ, सैक्सोफ़ोन, इधर आना जरा!" उस हट्टे-कट्टे आदमी ने उंगली से इशारा करते हुए दोबारा कहा।

"मत जाइये।" युवती ने आदिल की आस्तीन पकड़कर खींची। "यह गुण्डा है। हर वक़्त मेरे पीछे पड़ा रहता है, छिछोरी बातें करता है। मत जाइये! यहां इससे सब डरते हैं।"

"मैं सैक्सोफ़ोन नहीं हूं," आदिल ने संयत स्वर में दूसरी बार उस आदमी की बेतुकी ग़लतफ़हमी दूर करने की कोशिश की।

"ठीक कहा," उसने अप्रत्याशित सहमति प्रकट की। "तू सैक्सोफ़ोन हो भी कैसे सकता है? चुहिया है तू तो! बौना! क्यों?"

नयी आयी लड़कियों को परेशान करनेवाले उस इलाक़े के दादा के कथन में सच्चाई का पुट अवश्य था। आदिल सचमुच वजन में बड़ी बिल्ली जितना भी न था, लेकिन इसका लाभ उस बुलडॉग को बिलकुल न मिला और इसका पता उसे तुरन्त ही चल भी गया...

...झोरा और मैं वहां पहुंचे, तब तक आदिल ने अपने बायें हाथ से दुश्मन के कोट को कसकर पकड़कर, दायें हाथ से उसके घिनौने थोबड़े का कचूमर ही निकाल दिया था। हम जब आदिल को कोट के उस कालर समेत डांस-फ़्लोर उर्फ़ रिंग से खींचकर बाहर ले गये, तभी पता चला कि उसका प्रतिद्वंद्वी बहुत बहादुर आदमी है। अपना प्रथम उपचार करके यानी नाक से अपना रूमाल लगाकर उसने ऐलान किया, कि वह जल्द ही आदिल को परलोक पहुंचा देगा। आदिल की जवाबी कार्रवाई के कारण, जिसके पीछे शान्त करनेवालों की भारी भीड़ भाग रही थी, बड़बोले की बोलती बंद हो गयी। हैड-लाइटों की रोशनी में हमें साफ़ नजर आ रहा था कि आदिल अपने दायें हाथ में आधे मीटर लम्बी घिनौनी-सी छड़ ताने हुआ था। बाद में मुझे बताया गया कि वह आटोमेटिक हार्वेस्टर की मरम्मत

के लिए रखा हुआ एक दुर्लभ, ज़रूरी पुर्ज़ा था।

आदिल गुण्डे की ओर लपका। सारे दर्शक बुत खड़े रह गये। उसने छड़ गुण्डे के सिर पर दे ही मारी होती, अगर उससे क्षण भर पहले ही वह सूअर की तरह घुरघुर करता वहां से भाग न लिया होता।

झोरा और मैं आदिल को दिन निकलने तक स्तेपी में ढूंढ़ते रहे। मिलते ही उसने हम से कहा : "यहां से जल्दी-से-जल्दी निकल चलें।" और हम चल दिये। दोपहर तक हम "सेवेरनी" सरकारी फ़ार्म पहुंच गये और कुछ दिन में बाकू। लेनिनग्रादवाली लड़की से उसने विदा नहीं ली थी, क्योंकि उसने बताया कि उसे बहुत शर्मिंदगी उठानी पड़ी है...

मैं मन-ही-मन अपनी दूरदर्शिता पर ख़ुश हो रहा था कि आदिल और मैं एक ही कमरे में ठहरे हैं। मैंने उसी क्षण फ़ैसला किया कि मैं उसे कभी अकेला नहीं छोड़ूंगा।

कामरेड तग़ीयेव का कमरा मेरे कमरे जैसा ही था, केवल दो बातों को छोड़कर – पियानो और भव्य दृश्य को। उनके कमरे की खिड़कियां शहर की एक गली में खुलती थीं।

वलेरा ने रेडियो चलाया और मुझे अचानक अपनी आवाज़ सुनाई दी। कार्यक्रम "नेकी के फूल" से शुरू हुआ। उसके बाद एक सम्मोहक नारी स्वर ने हमारे आर्केस्ट्रा के बारे में बताना शुरू किया। मैं अप्रत्याशितता के कारण ठीक से समझ नहीं पाया कि उद्घोषिका क्या कह रही है। मैं यह भी अंदाज़ न लगा पाया कि यह बाकू से हमारे रवाना होने से पहले टेप किया हुआ प्रोग्राम है। प्रोग्राम कोई पन्द्रह मिनट चला। कामरेड तग़ीयेव उसे असन्तुष्ट मुखमुद्रा बनाये सुनते रहे, बाद में बोले कि रिकार्डिंग अच्छी नहीं है और सोलो बाजे ठीक से सुने नहीं जा सकते।

हमने अपना पहला कंसर्ट एक साधारण से हॉल में दिया। रेडियो पर दिये गये आकर्षक प्रोग्राम और सारे शहर में चिपकाये गये हमारे फ़ोटोवाले पोस्टरों के बावजूद ज़्यादा लोग नहीं आये। हॉल मुश्किल से एक तिहाई ही भरा। हम कार्यक्रम से एक घंटा पहले पहुंच गये थे। तब दरवाज़े का ताला खोलनेवाले चौकीदार को और हमें छोड़कर वहां आधा घंटे तक कोई नहीं आया था। कंसर्ट शुरू होने के मिनट

भर पहले कामरेड तग़ीयेव ने कोई पन्द्रहवीं बार दर्शकों पर नज़र दौड़ायी, फिर हमारी ओर देखा। हमारे चेहरों पर अपने टूर के आरम्भ होने की ख़ुशी का कोई चिन्ह न देखकर उन्होंने होंठ चबाये और एक छोटा-सा भाषण दिया।

"आप लोग मुझ पर विश्वास रखिये, सब हमारी योजना के अनुसार हो रहा है," दाऊद बालायेविच ने कहा। अगर सैमूर ने खीसें न निपोड़ी होतीं, जैसा कि कामरेड तग़ीयेव को लगा, तो उनका भाषण इसी पर समाप्त हो गया होता। बाद में मध्यांतर में सैमूर ने बताया कि उसने तो अपनी स्वाभाविक ठण्डी सांस ली थी। "इसमें हंसने की कोई बात नहीं!" दाऊद बालायेविच ने गुस्से से कहा। "आप क्या सोचते हैं कि सब अपना काम-धाम छोड़कर आपका कंसर्ट सुनने चले आयेंगे? अभी आप लोगों को कोई नहीं जानता। हां, अगर पांचवें कंसर्ट के बाद एक भी टिकट बिना बिके रह जाये, तब मैं कहूंगा कि हम किसी काम के नहीं, न आप सब और न मैं बेवक़ूफ़ बुड्ढा।"

वह नेपथ्य में मेरे पास आकर बैठ गया। मेरे साथी स्टेज पर परदे की ओट में खड़े रहे। सैमूर हौले-हौले की-बोर्ड पर उंगलियां चलाने का ढोंग रच रहा था। नेपथ्य में से जहां मैं खड़ा था, देख पाना मुश्किल था कि वह कौन-सी धुन निकाल रहा है। लेकिन मुझे लगा कि वह मोत्सर्ट के "रिक्वीएम" की धुन निःशब्द निकाल रहा है। बाक़ी सब उसकी ओर देखते इंतज़ार कर रहे थे। कामरेड तग़ीयेव भी न जाने क्यों पियानो की ओर देख रहा था, हालांकि कोम्पेयर उस के पास खड़ा था और वह भी निःशब्द सैमूर की ओर देख रहा था।

चट्टान ने की-बोर्ड से सिर उठाया। उसका चेहरा उतरा हुआ था। उसने आश्चर्य से चारों ओर देखा, मानो फ़ौरन न समझ पाया हो कि सब लोग यहां कैसे आ पहुंचे हैं। उसने पूछा :

"शुरू करें?" किसी ने जवाब नहीं दिया। "शुरू हो जाओ!" सैमूर ने कहा और हमेशा की तरह ज़ोर से सिर हिलाया।

हमने लंच 'ओरिएंडा' होटल के केफ़िटीरिया में लिया। धूप तेज़ थी, पर ज़्यादा गर्मी नहीं थी। नीला समुद्र मन्द-मन्द हिलोरें

ले रहा था, प्रमुदित हिमधवल समुद्री-चिल्लियां चीख-चिल्ला रही थीं। निश्चिन्त, सजा-धजा जन-समूह ग्रेनाइट तटबंध पर घूम रहा था। विनम्र, हंसमुख बेट्रेस मेज़ों के बीच दौड़-धूप कर रही थी। कामरेड तर्गायेव हैडवेटर द्वारा, जो हमारे दो कंसर्टों में मौजूद रह चुकी थी, दो मेज़ों को जोड़कर बनायी एकमात्र बड़ी मेज़ के एक सिरे पर बैठे हमारे साथ संगीत और पाक-कलाओं की चर्चा कर रहा था। सुबह चार घंटे रिहर्सल करने के बाद सबको तेज भूख लगी थी और सब छककर खा रहे थे। तभी बलेरा आ पहुंचा। वह मेज पर अपनी सीट के पास से गुज़र कामरेड तर्गायेव के सामने आ खड़ा हुआ। उसने खाना रोककर नैपकिन से मुंह पोंछा और चुप खड़े बलेरा पर नज़र डाली।

"सारे टिकट बिक गये," बलेरा ने मेज़ पर छायी चुप्पी के बीच धीरे-से कहा।

"हैलो!" कामरेड तर्गायेव ने बेट्रेस को बुलाया। "हैलो!" उसकी कांपती आवाज़ दूसरे प्रयास में स्वाभाविक हो सकी। "ज़रा ब्रेंडी लाओ। बेशक, एक गिलास ही," उसने खीज के साथ कहा और फिर बलेरा की ओर मुड़ा: "तुम फ़ौरन ही कह सकते थे! खड़े रहने की क्या जरूरत थी... हूं, क्या कहा था मैंने?!"

"आपने कहा था कि पांचवें कंसर्ट के बाद एक भी टिकट बिना बिका नहीं रहेगा, पर यह तो सातवां है," बलेरा ने जवाब दिया।

"खुदा करे, ऐसी ग़लतियां मैं हमेशा करता रहूं," कामरेड तर्गायेव ने बेट्रेस से सावधानीपूर्वक गिलास लेते हुए कहा। "ऐसे मौक़े पर मुझे जरूर थोड़ी पीनी चाहिए।" मुझे उसकी बुदबुदाहट में किंचित् क्षमा याचना की झलक महसूस हुई। मुझे याद आया कि मैं उसको पहली बार पीते हुए देख रहा हूं। "दोस्तो!" वह बोला, "मैं आप सबको मुबारकबाद देता हूं। आज हमारे लिए अच्छा दिन है।" उसने चेहरे पर शिकन आये दिये बिना ब्रेंडी पूरी पी डाली, पर धीरे-धीरे। यह नज़ारा देखकर मैं सिहर उठा। उसने खाली गिलास रख दिया और कुछ खाये बिना संयत स्वर में आगे बोला: "सब ठीक रहेगा, बस... मैं सारी ज़िंदगी क़िस्मत के फेरों से डरता रहा हूं..."

लंच के बाद हम समुद्र किनारे घूमने निकल पड़े। राहगीर अकसर हमें कुतूहल से देखते रहे थे – इसमें हमें कोई भ्रम नहीं हो रहा था।

याल्ता में लोग हमें पहचानने लगे थे।

"अब वह अपना खयाल रखने लगा है," आदिल ने मुंडेर के पास रखी एक बेंच पर बैठे कामरेड तर्गायेव की ओर देखते हुए कहा। सचमुच फ़ैशनेबल भूरा सूट, भूरे जूते और हल्का व चौड़ा टोप उस पर खूब फब रहे थे। उसकी फुर्ती देखकर हमें आश्चर्य होता था। वह हम सबसे पहले जागता था, जब तक हम उठते, वह पन्द्रह मिनट का रास्ता पैदल तय करके ऑफ़िस में हो आता था, हमारे सारे रिहर्सलों में मौजूद रहता था और लगे हाथों मेरे कमरे में झांककर भी देख जाता था कि मैं कैसा गा रहा हूं। उस सुबह उसने मुझसे कहा कि वह मुझे किसी निकोलाई फ़्योदोरोविच से मिलाना चाहता है, जो लेनिनग्राद संगीत विद्यालय में उसका सहपाठी रहा था। कामरेड तर्गायेव चाहता था कि वे भी मेरा गाना सुनें।

"इससे तुम्हें सिर्फ़ फ़ायदा ही होगा!" उसने गर्व के साथ कहा। हमारे साथियों में अकेला मैं ही ऐसा था, जिससे वह "तुम" कहकर बात करता था। "निकोलाई फ़्योदोरोविच बहुत अच्छे पारखी हैं। उनकी पहुंच भी काफ़ी है।"

हमारे और कामरेड तर्गायेव की बेंच के बीच कुछ ही क़दमों का फ़ासला रह गया था कि वह उठ खड़ा हुआ। उसके पास दो परिचित आकर रुके – एक मर्द और एक औरत। हमें उसकी आवाज़ें साफ़ सुनाई दे रही थीं।

"ओ-हो!" कामरेड तर्गायेव बोला। "कब से मुलाक़ात नहीं हुई आपसे! बहुत खुशी हुई मिलकर!"

आवाज़ मैं फ़ौरन पहचान गया, हालांकि चेहरा नहीं देख पाया था। पहले जब मुझे और किसी बात का खयाल ही नहीं आता था, मैं यही सोचता रहता था कि वह मुझे फिर कभी नज़र आयेगी, तो मुझे कैसा महसूस होगा... पर अब सब बिलकुल बदला हुआ लग रहा था। मैंने कभी सोचा भी न था कि ऐसा भी हो सकता है। वह नहीं जानती थी कि मैं पास ही खड़ा उसकी हर बात सुन रहा हूं! ऐसी मुलाक़ात की मुझे बिलकुल भी आशा न थी। बस मेरी उंगलियों के पोर सुन्न हो रहे थे, गला रुंधा जा रहा था, पर यह तो अप्रत्याशित घटना की एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी।

आदिल ने घबराकर मेरी तरफ़ देखा।

“चलो, यहां से निकल चलें,” उसने कहा।

“क्यों निकल चलें?” मैंने लापरवाही से कहा। “हम तो टहलने निकले हैं न? तो फिर आगे चलते हैं। सब ठीक है, आदिल। तुम फ़िक्र मत करो।”

“क्यों नहीं, ज़रूर सब ठीक होगा,” आदिल ने कुछ क़दम दूर निकल आने पर राहत की सांस ली। “कितने साल हो गये!”

सचमुच बहुत साल हो चुके थे इस बात को। लेकिन मैं अपनी कहानी कहां से शुरू करूं? यह उस दिन सुबह की बात है, जब मैं अपने एक मुख्य विषय की परीक्षा देने संगीत विद्यालय जा रहा था। सुहावनी सुबह थी वह। मैं इस्तरी रसोई में रखने गया था। चाची वहां नाश्ता तैयार कर रही थीं।

“इस्तरी कर ली? इतनी जल्दी?”

उनसे रहा न गया और वे कमरे में गयीं। कुरसी पर लटकायी क़मीज़ उतारकर उसे उन्होंने ग़ौर से देखा और मीन-मेख निकालने को कुछ न मिलने पर केवल सिर हिला दिया। अगली बार उनका जी खुश करने के लिए मुझे कम से कम एक सिलवट तो छोड़नी ही पड़ेगी। सारी क़मीज़ ऐसी चमक रही थी, जैसे किसी सफ़ेद धातु की बनी हो, न कहीं कोई सिलवट थी, न कोई धब्बा। मैंने खुद उसमें नील देकर कलफ़ लगाया था और थोड़ा नम रहते उस पर बड़े मज़े से लोहा किया था। मैंने अपनी कार्डुराय की पैंट पहनने की ठानी, आखिर यह ग्रीष्म सत्र की मेरी सबसे महत्त्वपूर्ण परीक्षा थी। वह भी मुख्य विषय की, तिस पर मुझे पूरा भरोसा था कि मैं उसमें अच्छे अंक पाऊंगा। जहां तक हार्मोनी की परीक्षा का प्रश्न है, तो मुझे पहले से मालूम था कि उसमें मैं फेल हो जाऊंगा, इसीलिए मैं उसे देने मोटे सूती कपड़े की पैंट पहनकर गया था। कार्डुराय की पैंट मैं ज़रा कम पहना करता था और सिर्फ़ ऐसे मौक़ों पर उसे इस्तेमाल करता था।

चाची ने क़मीज़ और पैंट के बाद मुझ को भी वैसे ही ग़ौर से देखा।

“काफ़ी अच्छे लग रहे हो,” चाची ने अपनी बात अधूरी छोड़ दी, मानो कहना चाहती हों कि मैं बस देखने में ही अच्छा लगता हूं। “पास हो जाओगे?” मैंने सिर हिला दिया। उन्होंने कपड़े की अलमारी के पास जाकर कुछ पैसे निकाले और मेरे हाथ में रख दिये। “ये लो। चाचा ने तुम्हें जेब खर्च के लिए दिये हैं, इस हफ़्ते के।”

‘कितनी अच्छी निकली मेरी क़िस्मत!’ मैंने सोचा। हफ़्ते के आखिर तक का तो कुछ पता नहीं था, पर उस दिन वे दो रूबल हमारे बहुत काम आनेवाले थे। आदिल और मैंने कबसे सोच रखी थी सड़क पर शाम को होनेवाले उस मेले में जाने की। आदिल ने अपने सैमूर या तैमूर नाम के एक दोस्त को लाने की बात भी कही थी, जो क्लब में उसके साथ एक आर्केस्ट्रा में बजाता है। आदिल ने बताया था कि उसके दोस्त के आने से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा, वैसे तो वह बहुत ज़िंदादिल है, पर उससे कह दिया जाये, तो वह चुप भी रह सकता है। उसका वज़न कोई नब्बे किलो है और पूरा वज़न सिर्फ़ ठोस मांसपेशियों का ही है। वह शर्त लगाकर अपनी दायीं बाइसेप्स से तांबे का मोटा तार तोड़ सकता है। मेले में क़िलेवाले लड़के आकर ज़रूर कुछ शैतानी करेंगे और ऐसे में आदिल के दोस्त को देखकर उनका सारा जोश ठण्डा पड़ जायेगा।

मुझे परीक्षा में पांच में से चार अंक मिले, जो बुरे न थे। सच कहूं, तो मैं इससे ज्यादा अंक पाने की आशा करता था, क्योंकि फ़ेरेंस लिस्ट का वह कंसर्ट मैं आंखों पर पट्टी बांधकर भी बजाकर सुना सकता था। पर मैं आखिर में कुछ अटक गया। कुछ क़िस्मत ही खराब थी। मैं उसे दसियों बार गड़बड़ाये बिना बजा चुका था। रोज़ालिया कहती थीं कि मैं उसमें माहिर हो चुका हूं। लेकिन बस परीक्षा में बायां हाथ धोखा दे गया। मुझे वे लोग दादा के सम्मान में पांच में से पांच अंक भी दे सकते थे। वैसे मुझे इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़नेवाला था, क्योंकि मैं कोई स्वार्थजीवी तो था नहीं। हर हालत में हार्मोनी में फेल हो जाने से मैं अपनी छात्रवृति तो गंवा ही चुका था। हां, रोज़ालिया के सामने ज़रा बुरा महसूस होता था। मैं उतरकर हॉल में उनके पास जा बैठा। उन्होंने फुसफुसाकर पूछा:

“ओफ़, कितनी खराब निकली तुम्हारी क़िस्मत! कोई भला कभी सोच सकता था! तुम बहुत दुखी हो रहे हो न?”

मैंने दिखावे के लिए उदासी से सिर हिला दिया।

"कोई बात नहीं, रोज़ालिया नऊमोवना," मैंने कहा। "अगले साल पांच में से पांच लेकर रहूंगा।" मैं शिष्टाचार के नाते थोड़ी देर बैठा रहा और फिर चुपचाप खिसक गया।

घर के पास पहुंचा, तो देखा आदिल फाटक पर खड़ा इंतज़ार कर रहा है। पैंट के पायंचों को मोड़कर उसने कपड़े लटकानेवाले क्लिप लगा रखे थे। उसका इरादा साइकिल पर थोड़ी देर सैर करने का था।

"तैमूर अभी नहीं आया। मैं अभी आता हूं..."

"अरे, इतने स्वार्थी मत बनो," मैंने कहा। "मैं परीक्षा का दुख भुलाना चाहता हूं," और मैं खुद उसकी साइकिल पर सवार हो गया। "मैं अभी चौराहे का एक चक्कर लगाकर वापस आया। ज़्यादा से ज़्यादा आठ मिनट लगेंगे मुझे!"

"सच? बस एक चक्कर!"

"क्यों दिल दुखाते हो!"

मैंने दो पैडल मारे, बस उसके बाद इसकी ज़रूरत ही नहीं पड़ी, क्योंकि ढलान पर मैं तीर की तरह उड़ चला। असफ़ाल्ट पर सिर्फ़ टायरों की रगड़ की आवाज़ ही सुनाई देती रही मुझे। कितना अच्छा लग रहा था! जब कोई तेज़ रफ़्तार से सवारी करता है, भले ही सवारी इस रेसिंग साइकिल के बजाय किसी ट्राम में कर रहा हो, तो न जाने कैसे-कैसे सुखद विचार आने लगते हैं मन में। मन गाने को करने लगता है! ट्राम में तो कोई क्या गा सकता है, पर साइकिल पर बड़े मज़े से गाया जा सकता है, कोई सुनता जो नहीं। सो, तीर की तरह उड़ता हुआ मैं गाने लगा...

न जाने वह बदमाश बीच सड़क में कहां से निकल आया! मुश्किल से पांच मीटर का फ़ासला रह गया हमारे बीच। मैं पागलों की तरह चीख़ उठा। तब उसने मुझे देखा और बुरी तरह घबरा गया। उसका चेहरा उस क्षण मुझे खरगोश के थोबड़े से मिलता-जुलता लगा। और दस साल का वह छोकरा खरगोश से ज़्यादा बड़ा भी नहीं दिख रहा था। लपककर एक तरफ़ हटने के बजाय वह वहीं इधर-उधर कूदने लगा। मैंने हैंडिल को जितना मोड़ सका एक ओर पूरा मोड़ दिया। बाक़ी सारा काम साइकिल ने खुद ही कर डाला। पहले तो अगला पहिया पूरे ज़ोर से ग्रेनाइट की पटरी के किनारे से टकराया और

फिर मैं साइकिल समेत दो कलाबाज़ियां खाकर उलटा जा गिरा। इस दौरान न जाने मैं किसी राहगीर से टकराया या मेरी साइकिल।

पहले मैं समझ नहीं पाया कि मेरी आंखों के सामने असफ़ाल्ट ही है, क्योंकि इतने नज़दीक से मैं उसे पहली बार देख रहा था। मैंने सिर उठाया, तो देखा लोग मुझे घेरे खड़े हैं और सबके चेहरों पर भय छाया हुआ है। मैं किसी तरह खड़ा हो गया, लड़खड़ाता हुआ। मुंह में कुछ अजीब-सा स्वाद महसूस हुआ। इतना बुरा स्वाद था कि लगा मिनट भर यही हालत रही, तो मुझे सबके सामने उलटी हो जायेगी। मैं मन-ही-मन सोच रहा था कि बस किसी तरह दीवार के पासवाले उस पेड़ के पास पहुंच जाऊं।

पेड़ तक मैं पहुंच गया और उसे दोनों बांहों में जकड़ मैंने आंखें आनन्द से मीच भी लीं, पर तुरन्त उन्हें खोलना पड़ गया, क्योंकि माथे से कुछ गरम-गरम टपक रहा था।

लगा जैसे मैं कोई सपना देख रहा हूं। मेरे सामने एक आदमी खड़ा था, उसके चेहरे से गुस्सा टपक रहा था। उसने अपने कोट के अंदर की जेब से एक कार्डबोर्ड का डिब्बा निकाला। डिब्बे में से उसे टिंचर की शीशी और फाहा निकालते देख मेरे तो होश फ़ाख़्ता हो गये।

उससे यह पूछने के बजाय, कि वह अपना यह डिब्बा लिये कहां से आ टपका, मैं कह उठा:

"टिंचर से मेरी खाल पर फफोले पड़ जाते हैं!" पर वह शीशी खोलकर सारा टिंचर फाहे पर डाल चुका था। मुझे बचपन से ही हर तरह की दवाई से नफ़रत थी, खास तौर से टिंचर और सरसों के प्लास्टर से।

"खून में ज़हर फैल जाने से खाल पर थोड़े फफोले निकल आना कहीं बेहतर होगा!" उसने भी फ़ौरन कहा और मेरे बिदकने से पहले ही वह मुआ फाहा मेरे माथे पर लगा दिया। दर्द के मारे इच्छा हुई कि बस लपककर पेड़ पर चढ़ जाऊं। इतना दर्द हुआ कि मेरा सिर चकराना तक बंद हो गया।

फिर एक औरत आ धमकीं। उनका चेहरा भी गुस्से से तमतमा रहा था। शुरू में तो मुझे वे जानी-पहचानी और भली औरत लगीं। फिर अचानक मेरी नज़र उनके कुरते पर पड़ी, जो दायें कंधे से कमर

तक फटा हुआ था। वे दो जगहों से उसे हाथों से भींचे खड़ी थीं। अब जाकर मैंने देखा कि उनका कुरता कैसे कपड़े का बना है और बड़ी मुश्किल से बेहोश होते-होते बचा। इतना क़ीमती कपड़ा था वह कि उसे दर्जी के पास न छोड़ना ही बेहतर होता था, क्योंकि मौक़ा मिलते ही वह उसमें से आधा मार ले और फिर काफ़ी महंगा दाम लगाकर बेच दे। उनका फटा कुरता देखते ही मैं समझ गया कि बुरी तरह फंस गया हूं। तीन साल हुए मेरी चाची ने ऐसे ही कपड़े का कुरता सिलवाया था और इस अरसे में उस कपड़े की सारी ख़ूबियां मुझे मालूम हो गयी थीं।

"मेहरबानी करके माफ़ कर दीजिये मुझे," मैंने उन स्त्री से क्षमा मांगी।

सच पूछिये, तो मैं माफ़ी सिर्फ़ टक्कर मारने के लिए मांग रहा था, क्योंकि इतना महंगा कुरता फाड़कर सिर्फ़ माफ़ी मांगकर पिण्ड छुड़ा पाना असम्भव था।

"मेहरबानी करके माफ़ कर दीजिये।"

उन स्त्री ने जवाब में कुछ नहीं कहा, उनके होंठों पर कटु मुस्कान आ गयी, अचानक वे मुड़कर चल दीं।

फिर न जाने कहां से एक मिलिशियामैन आ धमका। उसने एक हाथ से साइकिल पकड़ी, दूसरे से मेरा कंधा और पूछने लगा:

"किसकी साइकिल है यह?"

"मेरे एक दोस्त की," मैंने कहा।

"समझ गया। चलो। सुना, क्या कहा मैंने? चलो!"

मेरे टिंचर लगानेवाले ने मेरी तरफ़दारी करनी चाही, पर मिलिशियामैन ने उसकी एक न सुनी:

"आप, जनाब, चलते नज़र आइये यहां से, जल्दी-से-जल्दी।"

वह मेरा कंधा पकड़कर खींचने लगा। अगर साइकिल न होती, तो मैं कभी का उससे पिण्ड छुड़ाकर भाग लिया होता, फिर वह अपने बूटों और रिवाल्वर के खोल के कारण मुझे पकड़ ही नहीं पाता।

"इसे छोड़ दीजिये!" फटे कुरतेवाली स्त्री ने कहा। वे लौट आयी थीं। उन्होंने बहुत शान्त व संयत स्वर में कहा। मिलिशियामैन उन्हें घूरने लगा। उसकी शायद समझ में नहीं आ रहा था कि उनको कैसा जवाब दे। वह अभी जवाब सोच ही रहा था कि मिलिशिया

का एक लेफ़्टिनेंट और आ पहुंचा। उसने पूछताछ शुरू करने से पहले सेल्यूट किया, मुझे या उस मिलिशियामैन को नहीं, बल्कि उन फटे कुरतेवाली नारी को।

"इस लड़के ने," मिलिशियामैन बोला, "साइकिल पर सवारी करते हुए इन महिला को टक्कर मार दी।" सचमुच ऐसे ही कहा उसने।

"इसमें इसका कोई क़सूर नहीं है," उन महिला ने लेफ़्टिनेंट से कहा। "मैंने देखा कि एक बच्चा अचानक इसके सामने आ गया था, उसे बचाने की कोशिश में..."

लेफ़्टिनेंट उन्हें कोई जवाब दे पाये, उससे पहले वे मुझसे बोलीं:

"अपना हुलिया ज़रा ठीक कर लो तुम।"

इसके बाद मुझे जैसे किसी चीज़ से कोई वास्ता ही नहीं रहा। अब जो हो गया, सो हो गया। क़मीज़ पर लगे ख़ून के धब्बे तो बड़ी आसानी से ठण्डे पानी में भिगोकर साफ़ किये जा सकते हैं... पर क्या फ़ायदा उसे ठण्डे पानी में भिगोने से, जब उसकी पूरी दायीं आस्तीन चिथड़े-चिथड़े हो चुकी है और कार्डुराय की पैंट के दायें पायंचे में से मेरा नंगा घुटना बाहर झांक रहा है?।

"तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है?.. ज़रा मदद कीजिये इसकी।" उन्होंने साइकिल की ओर सिर से इशारा किया। मैंने अपनी कोहनी पर उनके हाथ का स्पर्श अनुभव किया। "चलो," उन्होंने कहा।

"मैं ले चलता हूं इसे," लेफ़्टिनेंट ने कहा और मिलिशियामैन से साइकिल ले ली।

वह महिला अगले चौराहे के पास ही रहती थीं। हम लेफ़्टिनेंट का तीसरी मंज़िल पर इंतज़ार करते रहे, क्योंकि साइकिल लिफ़्ट में नहीं आ सकती थी।

"माफ़ कीजिये," महिला बोलीं। "आपको बहुत तकलीफ़ हुई।"

"बिलकुल नहीं," लेफ़्टिनेंट ने तत्परता से कहा। "ऐसी कोई बात नहीं है, और कोई सेवा हो, तो बताइये, मैं बड़ी ख़ुशी से पूरी कर दूंगा।"

"शुक्रिया। सब ठीक-ठाक है," उन्होंने कहा।

"मेहरबानी करके बुरा मत मानिये," लेफ़्टिनेंट ने कहा। "वह

मिलिशियामैन वैसे काफ़ी मुस्तैद है।"

"विश्वास रखिये, ऐसी कोई बात नहीं है," महिला ने सहृदय मुस्कान के साथ कहा और चाबी लगाकर दरवाज़ा खोल दिया। "आप साइकिल यहां रख सकते हैं। हमारी मदद करने के लिए आपका बहुत-बहुत शुक्रिया। अरे, तुम दरवाज़े पर खड़े क्यों हो," उन्होंने आश्चर्य के साथ मुझे कहा। "आओ, अंदर आ जाओ!"

मैं अंदर गया।

बरामदे की दीवारें फ़र्श से छत तक भित्ति-पत्रकों से ढकी हुई थीं। ऑथेलो, मैडम बटरफ़्लाई, पेरिकोला ... तो ये मरिअम क़ादरी हैं। मैंने उनके गाने रेडियो पर सुने थे और रिकार्डों से भी ... वे मध्यम-सोप्रेनो थीं और हमारे जनतंत्र की जन-कलाकार भी।

"थोड़ी देर बैठो, मैं अभी कपड़े बदलकर आती हूं।"

उस चिर-परिचित ग्रेंड पियानो पर नज़र पड़ते ही मेरा दिल धक से रह गया। मैंने उसका ढक्कन उठाकर देखा – वह 'मुल्बाख़' कंसर्ट ग्रेंड पियानो था। और उसके सुरों का तो कहना ही क्या! उसके दायें किनारे पर मॉडरेटर के लिए एक झिरी बनी हुई थी। मुझे याद आया कि एक बार मैं स्कूल से जब घर लौटा था, तब उसकी जगह एक बेसुरे पियानो को रखा पाया। उसे पियानो नहीं, बल्कि शीशे के टुकड़ों और अलार्म घड़ियों के पुर्ज़ों से भरी पेटी ही कहा जा सकता था। मैंने उस पर उंगलियां चलायीं, तो मेरे रोंगटे ही खड़े हो गये थे।

"देखा," मेरी चाची ने वालीदा से कहा। "देखा, इसे यह अच्छा नहीं लगता! यह तो बस 'मुल्बाख़' ग्रेंड पियानो पर ही बजाना सीख सकता है! कैसे मुंह फुला लिया है इसने!"

"वह मेरे दादा का ग्रेंड पियानो था।"

"बेशक था ... लेकिन उन्होंने उसे अपनी मेहनत की कमाई से ख़रीदा था और वे ख़ुद ही उसे बजाते थे। लेकिन हमें अभी से क्या मालूम कि तुम आगे ज़िंदगी में क्या बनोगे! अगर तुम ऐसे न पढ़ते होते, जैसे कि पढ़ते हो, तो शायद मैंने उसे बेचा न होता। ख़राब अंक तो तुम ऐसे पुराने पियानो को बजाकर भी पा सकते हो। तुम्हें कम से कम इतना तो ख़याल रखना ही चाहिए कि तुम्हारे पियानो सिखाने की हमें कितनी क़ीमत चुकानी पड़ रही है।"

उस ग्रेंड पियानो पर सारे में म्यूज़िक स्कोर-शीटें बिखरी पड़ी

थीं। मेसने की "एलीजी" भी थी उनमें ... न जाने क्यों मैंने सोचा एक अच्छी कम्पोज़ीशन होगी वह, हालांकि शीर्षकों से निष्कर्ष निकालना व्यर्थ है।

"लो, यह गाउन पहन लो और ग़ुस्लख़ाने में जाकर अपना हुलिया ठीक कर लो।" कपड़े बदलने के बाद वे क़द में कुछ छोटी लग रही थीं।

जब मैं ग़ुस्लख़ाने में था, तो मैंने उन्हें किसी को फ़ोन करके कहते सुना कि वे उनका इंतज़ार न करें।

उनका कुरता लापरवाही से लपेटकर कोने में फेंका हुआ था। मैंने उसे उठाया। उसमें से इत्र की भीनी ख़ुशबू आ रही थी। मैंने उसे फिर वहीं डाल दिया। फिर अपनी क़मीज़ और पैंट उतारकर मैंने गाउन पहने लिया।

मैं छोटी-सी ताक़ में रखी इत्रों की शीशियों, क्रीम की ट्यूबों वग़ैरह को निहारता थोड़ी देर और ग़ुस्लख़ाने में रुका रहा। कितना बुरा लग रहा था मुझे उस ढीले-ढाले गाउन में! इतना बड़ा था वह कि उसमें एक और आदमी बड़े मज़े से समा सकता था।

गाउन पहने जब मैं बाहर निकला, तो वे मुझ पर नज़र डालकर मुस्करा पड़ीं।

"आपको तकलीफ़ न हो, तो मुझे एक सूई और थोड़ा धागा दे दीजिये," मैंने सोचा कि मैं अपनी पैंट का फटा हिस्सा सीकर वहां से फ़ौरन खिसक लूंगा, इससे पहले कि उन्हें अपने फट गये कुरते का ख़याल आ पाये।

"ज़रूर," वे बोलीं। "अब तुम्हारा सिर का दर्द कैसा है? यह अच्छा है कि तुम्हें अब चक्कर नहीं आ रहे हैं। इसका मतलब है कि तुम्हारे दिमाग़ को चोट नहीं पहुंची है। तुम ज़रा बैठो, मैं इतने में सूई-धागे का डिब्बा लेकर आती हूं।"

वे एक ट्रे में चाय की केतली, दो प्यालियां और एक प्लेट में एक पाई का टुकड़ा ले आयीं। मैं अभी पहला कौर निगल भी न पाया था कि मैंने उन्हें मेरी पैंट उठाते देख लिया। मैंने झट से उठकर उनके हाथों से पैंट छीन ली।

"माफ़ कीजिये," मैंने कहा। "मैं ख़ुद ठीक कर लूंगा इसे।"

वे चौंकीं।

"मैंने पहली बार देखा है किसी मर्द को अपनी पैंट की इतनी फ़िक्र करते," वे बोलीं।

"मुझे पैंट की कोई परवाह नहीं है। पर अपने सारे काम खुद करना मुझे अच्छा लगता है।"

मैंने सूई में धागा पिरोकर सिलना शुरू कर दिया। वह अब किसी काम की नहीं रही थी, इसीलिए मैंने उसकी घर जाने लायक़ मरम्मत कर ली। अब निश्चित था कि मुझे सूती कपड़े की पैंट गर्मियों के अन्त तक पहननी पड़ेगी। वे मौन बैठी मुझे टांके लगाते देखती रहीं।

"बहुत सफ़ाई से सिया। मैं इतनी अच्छी तरह कभी न सी पाती। तुम क्या दर्ज़ी हो?"

तब तक मैं पैंट सीकर फालतू धागा दांतों से काट चुका था। मैंने जवाब दिया:

"नहीं, मैं दर्ज़ी नहीं हूं। मैं ममेदबेली हूं।"

"ममेदबेली क्या कोई पेशा है?"

उन्होंने जब पूछा, तो मैंने तुरन्त महसूस कर लिया कि वे सारा मामला भांप गयी हैं।

"नहीं, यह कोई पेशा नहीं है। यह तो मेरा और मेरे दादा का कुलनाम है। वे एक महान संगीतकार थे।"

"क्या कहा – महान?"

मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। मैं पहली बार किसी ऐसे आदमी को देख रहा था, जो मेरे दादा को महान नहीं मानता था। मैं किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गया।

"बेशक, महान थे। उनके नाम पर तो एक मार्ग और संगीत विद्यालय के नाम रखे गये हैं... आपको मालूम है उन्होंने क्या-क्या कम्पोज़ किया है?"

"क्यों नहीं।" और उन्होंने लापरवाही से दादा की सारी कम्पोज़ीशनों के नाम गिना दिये – एक ऑपेरा, दो सिम्फ़ोनियों और कई गीतों के भी, सब गिना दिये। "इससे क्या? इससे कोई महान हो जाता है? हां, वे एक अच्छे शिक्षक और कोई बुरे कम्पोज़र नहीं थे..."

मैं उनकी ओर देखकर हैरान हो रहा था कि वे कह क्या रही हैं।

"अच्छा, अच्छा," वे मुस्करायीं। "तुम्हारे दादा के बारे में

और कोई बात नहीं करेंगे।"

तब तक मैं अपनी फटी क़मीज़ ठीक कर चुका था।

"तुम यह पाई खाकर खत्म करो न।"

वैसे तो मेरा चला जाना ही बेहतर होता, पर दूसरी तरफ़ से देखा जाये, तो यह अशिष्टता होती। मैंने आखिर उनको साइकिल से टक्कर मारी थी... जबकि उन्होंने सिर्फ़ मेरे दादा को मामूली कहा था, पर मुझसे बदला लेने के इरादे से नहीं, हो सकता है, वे वास्तव में उनके बारे में ऐसे विचार रखती हों। मैंने जल्दी से पाई का बचा टुकड़ा खा लिया और चाय पीता हुआ सोचने लगा कि किसी तरह उठकर इनसे विदा लेनी चाहिए। वे भी मेरे सामने मौन बैठी कुछ सोच रही थीं। फिर अचानक उन्होंने एक ऐसी बात पूछी कि मैं भौचक्का रहा गया:

"तुम गाते हो?"

"क्या मतलब?"

"अरे, मैं पूछ रही हूं, कभी गाने की कोशिश की तुमने?"

"हां, की।"

"तो फिर इधर आओ!" उन्होंने ग्रेंड पियानो के पास बैठकर उसका ढक्कन उठा दिया। "आओ, आओ। क्या गाओगे? 'प्रेम का नृत्य'?" उन्होंने प्रसन्नता से सिर हिलाया। "कौन-सा सुर पसंद है तुम्हें?"

मैंने गाकर सुनाया, पर वे चुप रहीं। ग्रेंड पियानो के ढक्कन पर कोहनियां टिकाये चुप बैठी रहीं। फिर मुझ पर नज़र डालकर ज़ोर से हंस पड़ीं।

मैं मुड़कर दरवाज़े की तरफ़ बढ़ा। वे बोलीं:

"ज़रा ठहरो। तुम्हारी आवाज़ अच्छी है, टिम्बर और ओवरटोन्स भी बुरी नहीं। बस यह बताओ कि तुमने ऐसा डिक्शन कहां से सीखा है?"

डिक्शन का आखिर क्या वास्ता था इससे?

"क्या मतलब?" मैंने पूछा।

"मेरे कहने का मतलब है, बहुत खराब है, खटकता है कानों में... बुरा मत मानना!"

लेकिन हमारे घर और बाहर, आस-पड़ोस के सभी लोगों को मेरा गाना पसंद आता था। मैंने "प्रेम का नृत्य" में अपनी तरफ़ से

कुछ नहीं जोड़ा था। उसे वैसे ही गाया था, जैसा यूजीनिआ डेविस ने बाकू बंदरगाह के क्लब में गाया था। आरिफ़ केरेफ़ोव भी बिलकुल ऐसा ही गाता था।

पर वे ठहाके पर ठहाके लगाती रहीं। तब मुझे भी हंसी आ गयी। मेरे दिल का कुछ बोझ मुझे हल्का होता हुआ महसूस होने लगा।

"आपने अंदाज़ कैसे लगा लिया कि मैं गाता हूं?"

"मैंने कोई अंदाज़ नहीं लगाया। तुम्हारे गले से आवाज़ खुद-ब-खुद फूटी पड़ती है, ख़ास तौर से जब तुम अपने दादा की तारीफ़ करते हो। अच्छा, अच्छा, तुम्हारे दादा के बारे में मैं और कुछ नहीं कहूंगी। तुम्हारे दादा सचमुच महान थे। ठीक है न?"

उस क्षण, जब मैं जाने के लिए दरवाज़े के पास बिलकुल तैयार खड़ा था, एकाएक मुझे एहसास हुआ कि वे कितनी सुन्दर हैं। मैंने उन्हें जवाब देना चाहा, उनका आभार व्यक्त करके विदा लेनी चाही, पर मुझे कुछ कहने को सूझ ही न पाया। वैसे अब तक मैं उनसे बिलकुल खुलकर बात कर रहा था। मैंने यह भी महसूस किया (और यह भावना मुझमें काफ़ी देर बनी रही) कि मुझे उनसे और कुछ भी नहीं चाहिए। बस वे हमेशा मेरे नज़दीक इसी तरह खड़ी रहें, मैं उनकी ज़ुल्फ़ों की खुशबू सूंघता रहूं, उनके होंठों और आंखों को देखता रहूं। उन आंखों को, जो स्नेहपूर्वक मुस्कराती हुई मेरी ओर देख रही थीं, बस मैं हाथ बढ़ाने का साहस करता, तो उनका स्पर्श भी कर सकता था।

...श्रोताओं ने हमें काफ़ी देर तक स्टेज से नहीं जाने दिया। उनके आग्रह पर हमने दो नंबर और दोहराये और फिर परदा डाल दिया। मेरे ख़याल से दाऊद बालायेविच कंसर्टों के दौरान हम लोगों से ज़्यादा थक जाता था। हमारे पूरे प्रोग्राम के दौरान वह नेपथ्य में से कहीं नहीं जाता था और उसकी नज़रें आर्केस्ट्रा पर ही जमी रहती थीं। जैसे ही परदा डाला गया, उसने लपककर सबसे हाथ मिलाया और बोला: "सफलता है यह तुम्हारी, सच्ची सफलता!" एकमात्र बात, जिसका उसे दुख था, वह थी पहली क़तार में ख़ाली पड़ी दो सीटें, उसके वे रहस्यमय प्रभावशाली मित्र नहीं आये थे।

लोग दरवाज़े के पास खड़े हमारे निकलने का इंतज़ार कर रहे थे। अब यात्रा में हमारे बहुत-से नये परिचित हो गये थे। कुछ तो लगातार हमारे सभी कंसर्टों में आ रहे थे। दाऊद बालायेविच उनके बारे में कहता था कि वे असली, निःस्वार्थ कलाप्रेमी हैं। लेकिन सैमूर ने फ़ौरन यह कहा कि इसका कारण समझ में आता है, क्योंकि सेहतगाह में करने को और कुछ है नहीं और बोरियत से बचने का कोई और तरीक़ा भी नहीं है—या रेस्तरां में बैठिये या बार-बार समुद्र के किनारे टहलते रहिये, या फिर हमारा कंसर्ट सुनिये। लेकिन किसी ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। आर्केस्ट्रा में सभी जानते थे कि वह अंधविश्वासी है और हमें नज़र लगने से डरता है। मारे दोस्त बहुत खुश थे, मैं तो सब समझता था, क्योंकि हमें इतनी सफलता पहले कभी नहीं मिली थी!

सैमूर थोड़ी देर मेरे साथ-साथ चलता रहा, फिर उसने दबी आवाज़ में पूछा:

"सुनो, मुझे शायद ग़लतफ़हमी हुई हो, पर लगता है आज तुम्हें उच्च स्वर में गाने में ज़रा ज़ोर लगाना पड़ रहा था, क्यों?"

मैंने और आदिल ने एक दूसरे की तरफ़ देखा। सैमूर कोई बात व्यर्थ नहीं कहता, लेकिन उसकी बात सच होती, तो मुझे भी तो महसूस हुआ होता। मुझे यह बड़ी चुभ गयी! और आदिल ने जवाब में उससे कहा:

"मेरे ख़याल से तुम्हें ग़लतफ़हमी ही हुई होगी, क्योंकि उसकी आवाज़ बिलकुल ठीक निकल रही थी।"

"खुदा का शुक्र है," सैमूर ने कहा, "फिर भी तुम सुबह जब रियाज़ करो, तो इस पर ध्यान देना। तुम्हारी तबीयत कैसी है? तुम कंसर्टों से बहुत थक तो नहीं जाते हो?"

"नहीं," मैंने सच्ची बात कही। "नाम को भी नहीं थकता हूं।"

"तुमने यह क्या अपने अंधविश्वास के कारण सोचा है?" आदिल ने गुस्से से कहा।

सैमूर हीं-हीं करने लगा, कभी-कभी बहुत खिजा देता था वह। "देखो इनको," वह बोला, "इन्हें यह भी पसंद नहीं कि कोई इनकी चिन्ता करे।" लेकिन कौन जाने, वह वास्तव में मेरे बारे में चिन्तित हो?

सैमूर ऐसी बातें कहे, तो भला कोई निश्चिन्त रह सकता है?

मैं कमरे में घुसते ही ग्रेंड पियानो पर बैठकर अपने गले की जांच करने लगा। तभी दाऊद बालायेविच ने दरवाजे में से झांककर मुझे हैरत से देखा कि रात को राग अलापने की मुझे यह क्या सूझी है। लेकिन उसने कुछ कहा नहीं, अंदर आकर दरवाजा बंद किया और थोड़ी देर सुनकर बोला :

"तुम्हारी आवाज़ बहुत अच्छी है!"

इससे मुझे थोड़ी शान्ति मिली, लेकिन मैं पूरी तरह आश्वस्त नहीं हुआ। मैं तो अच्छी तरह जानता था आवाज़ फटना क्या होता है, और यह मुझे हमेशा याद रहेगा। मेरा कोई अभी तक ऐसा दुश्मन भी नहीं था, जिसके लिए मैं ऐसे दुर्भाग्य की कामना करता।

इस बीच कामरेड तग़ीयेव ने किसी को फ़ोन किया।

"अरे, तुम आये क्यों नहीं?" वह बोला। मैं तुरन्त समझ गया कि वह अपने दोस्त निकोलाई फ़्योदोरोविच से बात कर रहा है। "माफ़ी-वाफ़ी मांगने की कोई ज़रूरत नहीं, मैं सब समझ गया। मेरी बहुत इच्छा है कि तुम जाने से पहले एक बार तो हमारे लड़कों का कंसर्ट सुन लो... परसों हम कलाकार संघ भवन में कंसर्ट दे रहे हैं," दाऊद बालायेविच मुस्करा उठा। "बिलकुल ठीक समझे, यह मुफ़्त में कंसर्ट होगा। उनके लिए यह कोई माने नहीं रखता, वे हमेशा की तरह बड़े उत्साह से प्रोग्राम देंगे। तुम खुद सुन लेना!"

चौथा अध्याय

मैं मेज़ के किनारे पर कोहनियां टिकाये वलीदा और चाची को वसन्त के त्योहार के लिए मीठी चीज़ तैयार करते देख रहा था। दाल-चीनी और जायफल की सौंधी-सौंधी खुशबू आ रही थी। चाची शीशे के एक बड़े बरतन में से कुटे और बादाम डाले चीनी मिश्रित दिव्य मसाले को चम्मच से लोइयों में भर-भरकर वलीदा को देती जा रही थीं, जो चांदी की नन्ही चिमटी से उन पर बहुत बारीक बेलबूटे बनाती जा रही थी।

मैं बड़ी बेसब्री से चाची और वलीदा के कमरे से जाने का इंतज़ार कर रहा था।

"वलीदा ख़ानम," चाची बोलीं, "ज़रा ओवन में से ड्रिपिंग पैन बाहर निकाल देना।"

जितनी देर वे रसोई में रहीं, उतनी देर में मैंने चार चम्मच चीनी मिला बादाम खा डाला। चाची ने लौटकर मुझ से बिना कुछ कहे चम्मच छीन लिया और उसे घृणापूर्वक दो उंगलियों में पकड़े रसोई में रख आयीं। उनके गाल पल भर में गुस्से से फूल गये।

"तुम कभी इनसान नहीं बन सकते," वे बोलीं। "अच्छे इनसान तो कभी नहीं। जाओ अपने कमरे में!"

मैं अपने कमरे में चला आया।

"मैं अब समझ गयी," वलीदा बोली, "क्या-क्या बर्दाश्त करना पड़ता है तुम्हें!"

जब एल्मीरा आयीं, मैं एक एट्यूड बड़ी मेहनत से याद करने का ढोंग रच रहा था। वे ठेठ वसन्त के लिबास में थीं, हल्की ड्रेस के ऊपर सिर्फ़ जाकेट पहने। जब वे बैठक में घुसीं, तो चाची और वलीदा ने एक दूसरी की ओर कैसी नज़रों से देखा, यह मैं समझ गया।

"अच्छा, अच्छा, अब बस करो," एल्मीरा बोलीं, "अब मुझे पूरा विश्वास हो गया कि तुम दिन-रात अभ्यास करते रहते हो।"

उनके कमरे में क़दम रखते ही वातावरण आनन्दमय और शन्त हो गया। लेकिन एल्मीरा थीं बहुत चालाक। वह अपने साथ एक फ़ोल्डर पता नहीं क्यों उठा लायी थीं।

"तुम्हारे ख़याल से इसमें क्या हो सकता है?" उन्होंने फ़ोल्डर के फ़ीते खोले। उसमें स्वरलिपियां थीं। "अब मुंह बनाना बंद करो! हां, ये बीथोवन का संगीत है... तुम्हें मालूम है, कौन था बीथोवन?"

"लुडविग वान... उनका जन्म... जर्मनी में हुआ था।"

"बिलकुल ठीक," एल्मीरा बालीं। "अच्छा, देखो, उसने कैसा संगीत रचा था।"

"सोनाटा"।

"तुम बहुत ही होशियार हो," एल्मीरा बोलीं। "हां, सोनाटा। अब रह गयी सबसे आसान बात। बताओ, इसे मैं इतनी दूर से उठाकर क्यों लायी हूं?"

"मुझे कैसे मालूम होगा?" मैंने पेचीदा स्वरलिपि में लिखे स्कोर-शीटों पर नज़र डाली और मेरी अंदाज़ लगाने की सारी इच्छा

तुरन्त समाप्त हो गयी।

"लगता है तुमने अंदाज लगा लिया है," एल्मीरा ने कहा और वह एक कुरसी लाकर पियानो के पास बैठ गयी। फिर उन्होंने मेरे दोनों हाथ अपने हाथों में दबा लिये, जो मुझे हमेशा की तरह बहुत अच्छा लगा। "सुनो," एल्मीरा बोलीं, "दो महीने बाद गर्मियों की छुट्टियां शुरू हो रही हैं। तुम्हें यह तो मालूम ही है कि स्कूल में पढ़ाई के अन्तिम दिन सब क्लासें कंसर्ट देती हैं। मालूम है? अच्छा, तो बताओ, तुम क्या सुनाओगे उस दिन?"

"गेडिके की एक कम्पोजीशन।"

"तुम क्या कोई अपंग हो?" एल्मीरा ने स्नेहपूर्वक पूछा। "सच-सच बताओ... कुछ छिपाना नहीं! फिर तुम्हें गेडिके की कम्पोजीशन सुनाने की क्या जरूरत है? और जिस क्लास में तुम्हारे अलावा पन्द्रह और लोग पढ़ते हैं, उनमें तुम्हें सबसे कमजोर क्यों माना जाना चाहिए?"

"क्या मतलब!" मैंने खीजकर कहा। "सबसे कमजोर वासिफ़ ममेदोव और गूल्या अलीवेली हैं!"

"शायद है। लेकिन, मुन्ने, तुम्हारे बारे में भी लोग यही सोचते हैं कि तुम कुछ नहीं बन सकोगे।"

"कौन सोचते हैं?!"

"तुम्हारे अध्यापक। विश्वास रखो, यह बात मैंने नहीं गढ़ी है। वे कहते हैं कि तुम खराब लड़के नहीं हो, बेवकूफ़ भी नहीं हो, पर तुम में प्रतिभा अधिक नहीं है।"

मैंने महसूस किया कि वे सच बोल रही हैं और मुझे बहुत बुरा लगा।

"पर तुम्हें मालूम है, मैंने इस पर क्या जवाब दिया?... कुछ भी नहीं। अभी कहने को कुछ है भी नहीं। लेकिन मुझे एक तरकीब सूझी है।" उन्होंने पियानो पर स्कोर-शीटें खोलकर रखीं और सोनाटा बजाने लगीं। बजाने के बाद उन्होंने मुड़कर मुझसे पूछा:

"क्यों, पसंद आया?"

"बहुत अच्छा बजाया!"

"तुम कंसर्ट में यह सोनाटा बजाओगे!"

इन्हें आज हो क्या गया है? मैं हंस पड़ा।

"ज़रा सोचो तो सही!" एल्मीरा ने स्वप्निल स्वर में कहा। "तुम फ़्रॉक कोट में स्टेज पर जाओगे। खैर छोड़ो फ़्रॉक कोट को," मेरे हंस पड़ने पर एल्मीरा ने मेरी बात मान ली। "सब तुम्हारा इंतजार कर रहे होंगे। बेशक उन्हें तुमसे कोई ज्यादा उम्मीद नहीं होगी। सब यही सोचते रहेंगे कि तुम किसी न किसी तरह गेडिके की कम्पोजीशन सुना दोगे, जिसे तुम पिछले दो महीने से रट रहे हो... पर तुम एकाएक पियानो पर बैठकर शुरू करते हो।" उन्होंने की-बोर्ड पर हाथ मारा। "देखने लायक हो जायेंगे सबके चेहरे।" उन्होंने हौले से बराबर के कमरे के दरवाजे की ओर सिर से इशारा किया।

मैं मंत्रमुग्ध-सा उनकी ओर देखता रह गया। जिस दृश्य का चित्रण उन्होंने किया, वह मुझे बहुत मनमोहक लगा।

"शाबाश!" एल्मीरा ने मेरी तारीफ़ की। "सब समझ गये न? बजाओगे?"

मैंने एक बार फिर स्कोर-शीटों पर नज़र डाली।

"नहीं यह मेरे बस का नहीं। सच।"

"बुद्धू!" एल्मीरा ने गुस्से से कहा। "मैंने भी तो बजाया था इसे, जब मैं पांचवीं में थी! पांच में से पांच अंक मिले थे मुझे तब!"

"पांचवीं में!" मैं खुश हो गया। "पर मैं तो अभी चौथी में ही हूं।"

"यहां आओ।" उन्होंने फिर मेरी कलाइयां हाथों में दबा लीं। "एक बात मैं बता दूं तुम्हें... वादा करो कि तुम किसी को नहीं बताओगे! करते हो? मैंने यह पांचवीं में बजाया था, पर तुम तो मुझसे ज्यादा होशियार हो। समझे? सच मानो, मैं तुमसे झूठ नहीं कह रही हूं। तुम मुझसे ही नहीं, बल्कि अपने सारे सहपाठियों और तुम्हारे स्कूल के सारे अध्यापकों से ज़्यादा होशियार हो।"

मैं तुरन्त समझ गया कि यह एक मनोवैज्ञानिक तरीक़ा है।

"तुम में आत्म-सम्मान नाम की कोई भावना नहीं है, सच मानो," उन्होंने गुस्से से कहा। "तुममें संगीत की बहुत अच्छी प्रतिभा है, तुम्हारी श्रवण-शक्ति बहुत अच्छी है।" उन्होंने मेरे दायें हाथ की उंगलियां अलग-अलग दिशाओं में खींचीं, "देखो! तुम अभी से पूरा ओक्टेव निकाल सकते हो..."

"फिर मैं इतना खराब क्यों बजाता हूं?"

"क्योंकि तुम संगीत से, नहीं पढ़ाई से घृणा करते हो। मेरी समझ में नहीं आता क्यों! तुम सबसे चिढ़ते हो! सबसे नफ़रत करते हो! खुदा का शुक्र है कि मेरे साथ अच्छा बर्ताव करते हो। क्यों, ग़लत तो नहीं सोचती हूं मैं? तो सीखोगे सोनाटा?"

"मैं जानता हूं कि यह मेरे बस का काम नहीं है। मेरा बायां हाथ तो देखिये ज़रा, मैं दो साल में भी नहीं सीख सकता यह!"

"मैं तो सोचती थी," एल्मीरा बोलीं "कि तुम शायद मुझे पसंद करते हो और मेरी खातिर एक अच्छा काम करना चाहते हो। विदाई की निशानी के तौर पर।"

"तो आप मुझे छोड़कर जा रही हैं?" मैंने उनकी बात का अर्थ समझने की कोशिश करते हुए पूछा।

"हां," एल्मीरा बोलीं। "अप्रैल में हम अपने-अपने रास्ते चले जायेंगे। तुम्हें तो मालूम ही है कि मेरा मंगेतर है और अप्रैल में मैं उससे शादी करने जा रही हूं। मैं तुम्हें अपनी शादी में आने की दावत दे रही हूं। पर मैं चाहती हूं कि तुम यह सोनाटा मेरे लिए एक सौग़ात के तौर पर बजाओ। मेरी बहुत इच्छा है कि परीक्षा में तुम सबसे अच्छा करके दिखाओ।"

"यानी आप आगे मुझे नहीं सिखाया करेंगी?"

"तुम्हें अब अध्यापक की कोई ज़रूरत भी नहीं रह गयी है," एल्मीरा बोलीं। "बस, तुम आलस न करो," वे मुस्कराकर बोल रही थीं। लेकिन मैं उनकी बात जैसे सुन ही नहीं रहा था, क्योंकि समझ गया था कि वे मुझे छोड़े जा रही हैं।

"पर मेरा क्या होगा?"

"देखो," एल्मीरा ने मुझे सीने से लगाने की कोशिश करते हुए स्नेहपूर्वक कहा, पर मैंने उनके हाथ झटक दिये और उठकर एक ओर खड़ा हो गया। मुझे उनसे बात करने की इच्छा नहीं हो रही थी।

परीक्षा में बचे पूरे दो महीने मैंने डटकर मेहनत की।

और जीवन में पहली बार परीक्षा में मुझे मुख्य विषय में पांच में से पांच अंक मिले।

मैं शाम को बड़ी बेसब्री से खाना खत्म होने का इंतज़ार करता रहा। चाची जब चाय ले आयीं, तो मैंने अपनी प्रगति-पत्रिका चाचा को दी।

"शाबाश!" चाचा ने कहा। उन्होंने प्रगति-पत्रिका चाची को दी और बोले:

"देखा तुमने? इसे एक भी विषय में पांच में से तीन अंक नहीं मिले हैं!"

वे जब बड़े ग़ौर से प्रगति-पत्रिका को पढ़ रही थीं, मैंने कहा कि मैं अपनी मां से मिलने जाना चाहता हूं। वे दोनों ही फ़ौरन मेरी प्रगति-पत्रिका को भूलकर मुझे घूरने लगे।

"मैं अपनी मां से मिलना चाहता हूं!" मैंने कहा।

चाचा ने जवाब में कुछ नहीं कहा, लेकिन मेरी तरफ़ देखना उन्होंने बंद कर दिया और मर्तबान में से थोड़ा मुरब्बा निकालकर चाय में डाल पीने लगे।

"अगर आप मुझे नहीं जाने देंगे उनके पास, तो मैं खुद ही चला जाऊंगा!"

"अगर वह तुम्हें प्यार करती होती, तो तुम्हें दो साल का छोड़कर कभी न जाती," चाची ने कहा।

"सुनो," चाचा ने चाची से कहा, "तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिए।" फिर मेरी ओर पलटकर बोले: "तुम यह बात मुझसे दूसरी बार कह रहे हो। तुम क्या सचमुच अपनी मां के पास जाना चाहते हो?"

"कहीं नहीं जायेगा यह!" चाची ने कहा। पर चाचा ने उनकी बात पर कान नहीं दिया। मैंने देखा कि वे मेरे जवाब का इंतज़ार कर रहे हैं, मैंने सिर हां में हिला दिया।

रविवार को मैं चाचा के साथ स्टेशन गया। चाचा ने पांचवें डिब्बे के पास जाकर कंडक्टर से दुआ-सलाम किया और मेरा टिकट उसे दे दिया। मालूम पड़ा वे एक दूसरे से परिचित थे। उन्होंने कंडक्टर से मेरा ख़याल रखने को कह दिया। चाचा मेरे साथ डिब्बे में थोड़ी देर बैठे रहे। वे चुप बैठे कुछ सोच रहे थे, लेकिन गुस्सा नहीं हो रहे थे। जब घंटी बजी, तो उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा, मेरी जाकेट की अंदरूनी जेब में एक लिफ़ाफ़ा रखकर कहा कि मैं उसे मां को दे दूं और फिर चले गये। वे गाड़ी के

17-0300

रवाना होने तक नहीं रुके, फ़ौरन चले गये। मैंने यह गाड़ी में से देखा। मैंने लिफ़ाफ़ा निकालकर देखा, वह चिपकाया हुआ नहीं था, उसमें नोट थे। सुबह गाड़ी रोस्तोव पहुंच गयी। जैसे ही कंडक्टर मेरे साथ प्लेटफ़ार्म पर उतरा, मेरी मां फ़ौरन हमारे पास आ पहुंचीं। वे मुझे फ़ौरन पहचान गयीं और गले लगाकर बोलीं कि मैं बहुत बड़ा हो गया हूं। पहले तो वे मुस्कराती रहीं, फिर रो पड़ीं, लेकिन साफ़ मालूम पड़ रहा था कि ये खुशी के आंसू थे। उनके पास एक पुरुष खड़ा था। उसने मुझसे नज़र मिलते ही मुझे आंख मारी और हाथ मिलाकर खुद ही अपना परिचय दिया। वे विकतोर चाचा थे और मेरे मां के पति। बहुत ही हंसमुख और भले आदमी थे वे।

जब तक मैं रोस्तोव में रहा, विकतोर चाचा मुझे लगभग रोज़ाना अपने थियेटर में ले जाते रहे। वहां मैं बहुत जल्दी सबसे घुलमिल गया और आर्केस्ट्रा पिट में बैठकर वे नाटक भी देखता रहा, जिनमें विकतोर चाचा अभिनय करते थे। मुझे इस बात का बहुत अफ़सोस रहा कि मैं अपनी मां को स्टेज पर नहीं देख पाया। थियेटर में सभी का कहना था कि वे बहुत अच्छी अभिनेत्री हैं। बात यह थी कि एक महीना पहले उनके बेटी हुई थी। मैंने उसे स्टेशन से घर पहुंचते ही देखा था। मां की एक सहेली वेरा स्तेपानोवना इस बीच बच्ची की देखभाल करती रही थीं। वे भी मां के थियेटर में काम करती थीं। मां ने बताया कि उन्होंने अपनी बेटी का नाम लेना रखा है और मुझसे कहा था कि मैं उसे बहुत प्यार करूं, क्योंकि वह मेरी नन्ही बहन है।

विकतोर चाचा मेरे लिए एक फ़ोल्डिंग पलंग ले आये थे, जिस पर सोने में मुझे बहुत मज़ा आता था। हम सब एक ही कमरे में रहते थे, पर विकतोर चाचा ने कहा था कि जल्दी ही थियेटर को कुछ फ़्लैट मिल जायेंगे, तब उन्हें एक अलग फ़्लैट दे दिया जायेगा।

मैं रोस्तोव में पूरे एक हफ़्ते रहा और फिर चला आया। मां ने मुझसे कहा कि वे मुझे बहुत प्यार करती हैं और उस दिन का इंतज़ार कर रही हैं, जब हम सब साथ रह सकेंगे, पर अभी एक-दो साल हमें अलग-अलग ही रहना पड़ेगा। मेरे रवाना होते समय वे बहुत दुखी हुईं और सारे वक़्त रोती रहीं। मैंने उनको तसल्ली दिलायी, पर बाद में, जब मैं गाड़ी में बैठ गया, तो मुझसे न रहा जा सका और मैं भी रो पड़ा।

पांचवां अध्याय

जब भी मैं कोई पत्र पढ़ता हूं, चाहे वह कैसा भी हो, उसकी शैली या लिखावट कैसी भी हो, मेरे मन में सदा ईर्ष्या से मिलती-जुलती भावना उत्पन्न होती है। मैंने कई बार स्वयं भी लिखने की कोशिश की, पर "प्रिय ... नमस्ते!" से आगे किसी तरह बढ़ ही नहीं सका। पत्र की पहली पांच-छः पंक्तियां लिखने की कष्टप्रद प्रक्रिया में मुझे कम से कम एक घंटा लग जाता था। उसके बाद मैं फिर लिखे हुए पर नज़र दौड़ाने के लिए रुक जाता था। वह मुझे किसी संगीत-रचना के पूर्वरंग जैसा प्रतीत होता था, जिसका हर स्वर कर्णकटु लगता था। और तब मैं उसके रूप, शैली और लय में तादात्म्य स्थापित करने और उसे स्वरलिपि के अनुरूप ढालने में जुट जाता था। सबसे पहले मैं कागज़ की कई तहें कर लेता था और फिर देर तक आनन्द लेने के लिए धीरे-धीरे उसके छोटे-छोटे टुकड़े करता था।

बस यही हुआ कि अपने जीवन में मैं एक भी पत्र नहीं लिख सका। इतना बता दूं कि इससे मुझे कोई विशेष असुविधा अनुभव नहीं हुई, क्योंकि अत्यन्त आवश्यक परिस्थितियों में अपने सीमित परिचितों से सम्पर्क स्थापित करने का अवसर आने पर मेरा काम टेलीफ़ोन या तार से खूब अच्छी तरह चल जाता था।

मेरे चाचा की लिखावट हालांकि बहुत महीन थी, इसके बावजूद उन्हें चार पन्नों में अपने पत्र को सीमित रखने में बहुत मुश्किल हुई थी। संयोग से सूटकेस में झांकने पर मेरी नज़र उस पत्र पर अभी-अभी पड़ी थी। बाकू से रवाना होने से पहले जल्दी में मैंने उसे सूटकेस में डाल दिया था। मेरे चाचा के पत्र डायरी जैसे होते थे, जिसमें हर घटना की चर्चा, चाहे उसका महत्त्व कैसा भी क्यों न हो, कालक्रमानुसार ही होती थी।

पहले पन्ने पर उन्होंने चाची की ठण्ड लगने की बात लिखी थी, जिससे उन्हें निमोनिया होने का खतरा पैदा हो गया था। बाद में उनके कष्टों का विस्तार में वर्णन किया गया था, लेकिन उनका अन्त क्या हुआ, यह मैं न जान सका, क्योंकि सबसे रोचक स्थान पर अचानक उन्होंने वनस्पति जगत की चर्चा छेड़ दी, जिसका सार यह था कि घर के आगे उन्होंने अंगूर की जो दो क़लमें मई में लगायी थीं, वे

बढ़ने-फैलने लगी थी, हालांकि क़लमें लगाने के लिए वह सबसे अच्छा मौसम नहीं माना जाता था। चाची की तबीयत का आगे का हाल तीसरे पन्ने के शुरू में ही मालूम पड़ा कि वे ठीक हो गयी हैं और कमजोरी महसूस होने और डाक्टरों के मना करते रहने के बावजूद कभी-कभी उठकर घर में दौड़-धूप करती रहती हैं।

मेरी कल्पना में त्बिलिसी में उनका घर स्पष्ट रूप से साकार हो उठा, जिसमें मैं दो साल पहले एक दिन रहा था। सैनिक सेवा से लौटते हुए मैं उनसे मिलने गया था।

मालूम पड़ा कि वे शहर के केन्द्र में रहते थे। मैं शोर भरी, चहल-पहलवाली चौड़ी सड़क से मुड़ा और दो-तीन ब्लाक पार करने के बाद अचानक शान्त और छायादार गली में आ पहुंचा। फाटक बंद नहीं था और वहां से छोटे-से पक्के घर तक ईंट जड़ा रास्ता बना था। मैं बरामदे में चढ़ा और वहां मुझे चाची खड़ी नजर आ गयीं। वे मुझे फ़ौरन न पहचान पायीं। "सलाम अलैकुम, चाची! आपने क्या नहीं पहचाना मुझे?" मैंने कहा। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया, बस फटी-फटी आंखों से मुझे देखती रहीं और फिर पास आकर मुझे गले लगा लिया। मुझे सीने से चिपटाये वे वैसे ही मौन खड़ी रहीं। मुझे वे बहुत छोटी और दुबली लगीं। मुझे उस वक़्त यह खयाल नहीं आया कि मेरी ग़ैर-हाज़िरी में वे बहुत बुढ़ा गयी हैं, काफ़ी बीमार रही होंगी। उन्होंने मुझसे नज़रें नहीं हटायीं और चाचा को दफ़्तर में फ़ोन करके केवल इतना कहा:

"वह आ गया है।"

मैंने चाची से रिसीवर लेकर चाचा से दुआ-सलाम किया और पूछा कि वे कैसे हैं। चाचा बोले:

"तुम मेरे घर आने तक कहीं मत जाना। ठीक? मैं दस मिनट में घर पहुंच जाऊंगा।" मुझे लगा जैसे वे बोल नहीं, फ़ुसफ़ुसा रहे हैं।

हम तीनों पूरी शाम बरामदे में बैठे रहे। चाचा अगले दिन भी काम पर नहीं गये, बेकार ही, क्योंकि उन्होंने मेरे काम पर लगाने के बारे में जो बातें शुरू कीं, तो लगभग दोपहर के खाने तक उसका सिलसिला जारी ही रहा। मैंने लगभग इसलिए कहा, क्योंकि खाने पर मैं नहीं रुका, न मुझमें इतनी ताक़त रही थी और न ही धीरज। वे थोड़ी देर के लिए चुप हुए, मैं उठकर बगीचे में टहलने लगा,

लेकिन इससे मेरा चित्त ठीक नहीं हुआ। तब मैं बाहर निकल गया और उनसे विदा लिये बिना ही रवाना हो गया।

पत्र में आगे तीसरे पन्ने के दूसरे हिस्से में सरकारी खबरें भी थीं। उससे पता चला कि बाकू में चाचा के मंत्रालय का वह विभाग अंततः बंद कर दिया गया है, जो अपनी अव्यवस्थित गतिविधियों के कारण कई वर्षों से जनतंत्र के बाहर स्थित उसकी शाखाओं के साथ तालमेल बिठाने में रोड़े अटकाता रहा था। शाखाओं की विशिष्टता की चर्चा नहीं की गयी थी, क्योंकि चाचा ने ठीक ही अनुमान लगाया था कि उनका ज्ञान मुझे उनके पिछले पत्रों से हो ही गया होगा।

लेकिन चौथे पन्ने पर जो समाचार दिया गया था, उसका मेरे दिमाग़ पर इतना जोरदार असर हुआ था कि बग़ल के पलंग पर ऊंघता आदिल भी मेरे ही साथ उससे अछूता न रह पाया था। वरना क्यों चौंक कर उठ बैठता और बड़े कुतूहल से मुझे क्यों घूरने लगता?

चाचा ने लिखा था कि मेरी बहन लेना इर्कुत्स्क से आकर कई दिनों से उनके यहां ठहरी हुई है। उसके आने का एकमात्र उद्देश्य था अपने इकलौते भाई से मिलना। वह पिछले कई सालों से इसके सपने देखती आयी थी और मौक़ा मिलते ही उसका फ़ायदा उठाकर आ गयी थी। चाचा त्बिलिसी में सपरिवार रहते हैं, इसका पता उसने चाचा के मंत्रालय में पत्र लिखकर लगा लिया था। चाचा ने लिखा था कि लेना बहुत प्यारी और संवेदनशील लड़की है। इससे मैं फ़ौरन समझ गया कि वह बीमार चाची की तीमारदारी कर रही है और घर के काम-काज में हाथ बंटा रही है।

मैंने पत्र आदिल को दे दिया। वह पत्र पढ़ने लगा और मैंने मेरी बहन लेना से जुड़ी हुई कई बातों को याद करने की पूरी कोशिश की।

"यह तो बहुत ही अच्छी बात है कि तुम्हारी बहन भी है!"

"हां, यह तो सच है। लेकिन इससे क्या होता है?" मैंने कहा। मुझे बहुत पहले से मालूम है कि मेरी मां के दूसरे पति से एक बच्चा है और उस सयाने बच्चे का नाम लेना है।

"लपककर तार दे आओ कि वह हवाई जहाज़ से यात्ला आ जाये!"

"किसलिए?" मुझे सचमुच आश्चर्य हुआ। "मैं तो उसे बिलकुल भी नहीं जानता हूं और मेरे दिल में उसके लिए न किसी तरह का

प्यार है, न ही दिलचस्पी। रहने दो उसे थोड़े दिन त्बिलिसी में। चिट्ठी से यही मालूम होता है कि वह चाचा-चाची को पसंद आ गयी है। बाद में जब उसकी छुट्टियां खत्म हो जायेंगी, तो चली जाये अपने इर्कुत्स्क।"

आदिल मेरी बात सुन ही नही पा रहा था। वह तो स्नेहमय भाई की भूमिका निभाने लगा था।

"अगर मुझे मालूम पड़ता कि मेरी कहीं कोई बहन है," उसने स्वप्निल स्वर में कहा और विचारमग्न हो गया।

"तो फिर तुम क्या करते?" मैंने पूछा।

"तो मैं एक मिनट भी इंतज़ार न करता, फ़ौरन उसे ढूंढ़ने निकल पड़ता। खुद ही सोचो, मेरा कहीं कोई सगा है और मैं उससे मिल भी नहीं सकता! उसे रोज़ाना देख भी नहीं सकता!"

"ये हृदयस्पर्शी विचार तुम्हारे पेशेवाले को शोभा नहीं देते," मैंने आदिल को समझाया। "सैक्सोफ़ोनवादक को इतना भावुक नहीं होना चाहिए, देर-सवेर इसका उसकी कला पर असर ज़रूर ही पड़ता है। हां, तुम अगर वायोलिन या बांसुरी बजानेवाले होते, तो और बात होती। वे तो पैदा होते भी रोने-झीखने के लिए हैं।"

"सुनो," आदिल बोला। "डाकखाने चलते हैं, कंसर्ट शुरू होने में अभी काफ़ी वक्त है, त्बिलिसी तार दे देते हैं।"

"दूर हट जा!" मैंने झल्लाकर कहा।

मुझे यह अजीब लगा कि मैं उसकी इस बात से चिढ़ उठा और बुरा इसलिए महसूस हुआ कि आदिल ने यह देख लिया था। वह खिड़की के पास खड़ा समुद्र की ओर देखता रहा। मैंने उसके पास जाकर कहा:

"मुझे माफ़ कर दो!"

"जाओ, जाकर तार दे आओ।"

"बस!" मैंने राहत की सांस लेकर कहा। "तब मैं अपनी माफ़ी वापस लेता हूं!"

हम दो बजे कंसर्ट देने के लिए कलाकार संघ भवन रवाना हुए। वलेरा ने बताया कि वह शहर के बाहर याल्ता और पायोनियर कैंप आर्तेक के बीच में है। वहां पहुंचने में हमें कोई डेढ़ घंटा लगा। शुरू में हमारी बस चौड़ी सड़क पर चलती रही, फिर चट्टानों के बीच से निकलती पक्की सड़क से, जो सांप की तरह बल खाती सीधी समुद्र

तक जा रही थी।

तैमूर सारे रास्ते यही बड़बड़ाता रहा कि इतनी दूर मुफ़्त कंसर्ट देने जाना बिलकुल ग़लत है, वह भी यह मालूम होते हुए कि शाम को हमें और ज़्यादा मेहनत करनी है। मैं आशा कर रहा था कि कामरेड तग़ीयेव, जो मेरे पास बैठा था, ज़रूर कुछ कहेगा, पर न जाने क्यों वह चुप ही रहा। वह उदास बैठा किसी सोच-विचार में डूबा हुआ था।

मुझे वह हॉल, जिसमें हमें कंसर्ट देना था, बहुत पसंद आया। वह ज़्यादा बड़ा न था, पर उसमें कुछ बालकनियां थीं, कांसे का एक बड़ा झाड़फ़ानूस लटका था और लकड़ी का रंग किया फ़र्श था। दीवारें हालांकि फ़र्श से छत तक नक़्क़ाशीदार लकड़ी से ढकी थीं, पर इससे वह हॉल निरानन्द नहीं लगता था, शायद गहरे लाल व हरे रंग के शीशे जड़ी बड़ी-बड़ी खिड़कियों के कारण। मैं वहां पहले कभी नहीं आया था, पर उसमें क़दम रखते ही मुझे लगा, जैसे मैं यहां पहले भी आ चुका हूं या इसे सपने में देख चुका हूं।

तैमूर ने चिन्तापूर्ण दृष्टि हॉल पर डाली और कहा कि हमें इस छोटे-से हॉल में, जिसमें आवाज़ न जाने कैसे गूंजेगी, आज बिना एंपलीफ़ायर के काम चलाना पड़ेगा और उसका परिणाम क्या होगा, वह कह नहीं सकता, क्योंकि हम सब माइक्रोफ़ोन के आदी हो चुके हैं। हमारे सारे बाजे स्टेज पर बालकनी की ओर जानेवाली सीढ़ियों के नीचे लाकर रख दिये गये थे।

वलेरा ने बताया कि भवन के सारे वासी खाना खाने गये हैं और कोई आधा घंटा बाद आयेंगे। तैमूर ने फ़ौरन हम शिकायत न करनेवाले कलाकारों के प्रति आदर के अभाव और सभी स्थानों पर कलादेवियों के निःसहाय आराधकों के प्रति घृणा के भाव के बारे में भाषण देना शुरू कर दिया और कहा कि वे हमें अपने साथ खाने का निमंत्रण तक देना भूल गये।

उसके भाषण में कामरेड तग़ीयेव के आने से व्यवधान पड़ गया। उसने हमें बताया कि हमारी राय उसे मालूम होने के कारण उसने प्रबंधकों के खाने के निमंत्रण को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि हम कंसर्ट से पहले कुछ नहीं खाते हैं। यह सच भी था। हमें जब यह मालूम हो कि आधा घंटा बाद ही हमें स्टेज पर जाना है, तो हममें

से किसी को भी खाने की बात सूझती ही नहीं। कामरेड तग़ीयेव हमें बताने लगा कि जिस हॉल में हम कंसर्ट देने जा रहे हैं, वह पिछले दो सौ वर्षों से अनेक उच्चस्तरीय ऐतिहासिक भेंटों, जिन पर विश्व का भाग्य निर्भर करता था, साक्षी रहा है। वह यह सब अन्यमनस्कता से बार-बार दरवाज़े की ओर देखते हुए बता रहा था, फिर अचानक बात अधूरी छोड़कर बाहर चला गया।

इस तरह किसी अज्ञात कारणवश हम अतीत के महान व्यक्तित्वों की भेंटों का ब्योरा जान पाने से वंचित रह गये, जो हमारा एक समकालीन बहुत दिलचस्प ढंग से सुनाना चाहता था।

कामरेड तग़ीयेव पांच मिनट बाद लौटकर आया, तो उनका कायापलट हो चुका था। वह उत्तेजित था और हाथ मल रहा था, यह इस बात का पक्का संकेत था कि उसकी मनःस्थिति बहुत अच्छी होती जा रही है।

"सुनो," कामरेड तग़ीयेव बोला। "वे आ गये हैं!" उसने हमारे चेहरों पर नज़र डाली और अपेक्षित प्रतिक्रिया न देखकर उसको निराशा हुई। "मैंने आप लोगों से कहा था न," वह बोला, "कि निकोलाई फ़्योदोरोविच आनेवाले हैं। वे इंस्टीट्यूट में मेरे सहपाठी थे। बहुत ही प्रभावशाली व्यक्ति हैं और मिलनसार भी। उन पर बहुत कुछ निर्भर करता है।"

"हम पहले भी सुन चुके हैं कि वे बहुत प्रभावशाली हैं," सैमूर ने मुस्कराते हुए कहा।

"आप बेकार मुस्करा रहे हैं, माएस्ट्रो," कामरेड तग़ीयेव ने बेरुख़ी और घमण्ड से कहा। "और आज जो सोच रहे हैं, वह भी बेकार है। मेरे बारे में कोई ऐसा नहीं कह सकता कि मैंने कभी किसी की चापलूसी या ख़ुशामद की है या मुझे ऐसी आदत है। हां, हां! आप यही सोच रहे थे। मैं जब निकोलाई फ़्योदोरोविच को प्रभावशाली व्यक्ति कहता हूं, तो मेरा मतलब सबसे पहले यही होता है कि प्रभावशाली व्यक्ति होने और हमारी कला में एक उच्च सरकारी पद पर होने के साथ-साथ वे संगीत के पारखी हैं और एक पेशेवर संगीतकार की तरह उसकी सारी बारीकियों को भी जानते हैं, जो आजकल एक बहुत ही दुर्लभ देन मानी जाती है। और मैं यह भी कहना चाहता हूं कि आज अगर वे आप लोगों की ख़ूबियों को सही ढंग से आंक लेते

हैं, तो आपकी क़िस्मत बदल सकती है।"

"कैसे?" सैमूर ने अगोचर मस्कान, पर अत्यन्त कुतूहलपूर्ण मुद्रा में पूछा।

"उदाहरण के तौर पर मास्को के किसी कंसर्ट हॉल में या अखिल सोवियत टेलीविज़न पर कार्यक्रम देने का अवसर मिल सकता है आपको..." उसने सब पर एक विजयपूर्ण दृष्टि डाली और इस बार उसे हम सब के चेहरों पर आशा की किरण दिखाई दी। "मुझे डर था कि वे नहीं आयेंगे। लेकिन वे आ गये हैं और अब सब कुछ आप लोगों के हाथों में है। बस, यही कहना था मुझे।"

मैं समझ गया कि उसकी बात से सब प्रभावित हुए हैं, यहां तक कि सैमूर भी। यह उनके बजाने के ढंग से भी मुझे फ़ौरन महसूस हो गया। वैसे वे इस टूर में अच्छा बजाते रहे थे, किसी तरह की ढील नहीं कर रहे थे। पर उस दिन तो वे बस कमाल ही कर रहे थे। पहली दो धुनों में सैमूर ने हर साथी को अपना पूरा कौशल दिखाने का अवसर दिया। मैं एक छोटे-से कमरे में बैठा था, वहां से मैं देख नहीं सकता था, पर आदिल और बोरिस के सोलो पर श्रोताओं ने जो प्रतिक्रिया दिखायी, उससे मैं समझ गया कि यहां आये लोगों को संगीत की समझ है। हालांकि सैमूर सुबह ही कह चुका था कि लेखकों, संगीत-निर्देशकों और अभिनेताओं के लिए कंसर्ट देना व्यर्थ और कठिन काम होता है।

फिर मेरी बारी आयी। हॉल खचाखच भरा था। श्रोताओं की पहली क़तार स्टेज से मुश्किल से दो मीटर दूर थी और दूसरे छोर पर कुरसियां खुले दरवाज़ों के बीच भी रखी हुई थीं।

सैमूर ने जब तक "वफ़ा" की प्रस्तावना धीरे-धीरे आरम्भ की मैंने लगभग सारे हॉल पर नज़र दौड़ा ली। मैंने सोचा था कि कामरेड तग़ीयेव अपने मित्र के पास बैठे होंगे और इससे मैं आख़िर उनकी प्रतिक्रिया देख लूंगा। पर वे हॉल में थे ही नहीं। उनकी जगह मुझे मरियम दिखाई दी। वह दूसरी क़तार में बैठी थी।

याल्ता में मैं उसके नज़र आने के बाद जितने दिन रहा, मुझे यही आशा रही कि मैं उससे मिलूंगा। अपने कमरे से बाहर निकलते ही मैं भावी मुलाक़ात के सपनों में खो जाता। पर मुलाक़ात नहीं हो पायी।

18-0300

मुझे लगा कि इन तीन सालों में वह बिलकुल भी नहीं बदली है। पैंतीस की उम्र में भी वह पहले जैसी किशोरी और कोमलांगिनी लग रही थी। वह दूसरी क़तार में ठीक मेरे सामने बैठी थी और मुस्कराती हुई मेरी तरफ़ देख रही थी। आखिरी बार जब हमारी मुलाक़ात हुई थी, तब वह मुस्करा नहीं रही थी।

उसने तब कहा था:

"वे मेरे पति हैं, समझे? उनसे मेरी मुलाक़ात तुमसे दस साल पहले हुई थी।"

"पर तुम तो मुझे प्यार करती हो!" मैं बड़ी मुश्किल से कह पाया। "तुम उसे और मुझे एक साथ प्यार कैसे कर सकती हो? यह कैसा प्यार हुआ? ऊब चुका हूं मैं इन सब बातों से। तुम उसे छोड़ोगी या नहीं?"

उसने सिर हिला दिया।

"नहीं।"

"लेकिन तुम इतना तो समझती हो," मैंने कहा, "कि जब तक तुम उसके साथ रहती हो, मैं तुमसे नहीं मिल सकता। मैं तुमसे आखिरी बार पूछ रहा हूं।"

उसके बाद हम नहीं मिल सके थे। मैं दिन-रात उसी के बारे में सोचता रहता था। उसकी यादों ने मुझे पागल बना दिया था। पहला साल सबसे ज़्यादा खतरनाक रहा था। मैं दिन में कुछ काम नहीं कर पाता था, आधी रात तक आंखें खोले लेटे रहने पर ही नींद आती थी मुझे। उन दिनों को, जो उसके साथ गुज़ारे थे, याद कर-करके मैं ईर्ष्या के मारे छटपटाता रहता था और वह समय बीतने के साथ कम ही नहीं होती थी। पहली बार ईर्ष्या मुझे उस दिन अनुभव हुई, जब मैं उसके पति से मिला। उस मुलाक़ात से पहले मैंने न उसके बारे में कभी सोचा था और न ही उसे कभी याद किया था, हालांकि उसके अस्तित्व के बारे में मुझे मालूम था। उसने बताया था कि वह बाकू और आस्त्राखां के बीच चलनेवाले एक जहाज़ का कप्तान है। जब वह जहाज़ की ड्यूटी पर नहीं होता था, तब हम दिन में मिला करते थे। मैं थियेटर में उसके सभी रिहर्सलों में जाता रहता था और अकसर जब हम कमरे में अकेले रह जाते थे, मैं उसे गाकर सुनाया करता था या उसके साथ नये गाने सीखता था। कभी-कभी हम शाम को उसके शो

के बाद भी मिला करते थे। उन दिनों वह "मैडम बटरफ़्लाई" और "येवगेनी ओनेगिन" ऑपिराओं में गाया करती थी। उसकी आवाज़ बहुत सुन्दर थी। मुझे उसे सुनने में बहुत आनन्द आता था, यह मालूम होने के कारण कि वह स्टेज से मुझे देखती और मेरे बारे में सोचती रहती थी। उसके पति के दिखाई देते ही मुझे इस बात का अफ़सोस हुआ कि मैं उससे मिलने आने को तैयार हो गया। उसने मुस्कराते हुए हमारा आपस में परिचय कराया और मेरे बारे में कहा कि मैं एक युवा और होनहार गायक हूं और एक अच्छा लड़का भी। उसने सोफ़े से उठकर मुझे घूरते हुए मुझसे ज़ोर से हाथ मिलाया। क़द में हम बराबर थे, पर मुझे वह घनी भौंहों, बेढंगी, चौड़ी नाक तले फैली कड़ी मूंछों, लम्बे-चौड़े बदन व चेहरेवाला भयानक पशु जैसा लगा, जिसके रोम-रोम से अनियंत्रित, दुर्दम्य शक्ति फूटी पड़ रही हो। तभी मुझे खयाल आया और बाद में मैं उसे कभी भूल नहीं सका कि वह जब चाहे उसे दबोचकर उसके होंठों को चूम सकता है। इसके अलावा मुझे यह डर भी लगा कि उसे पता लग सकता है कि मैं उसकी पत्नी का प्रेमी हूं और यह भय उसके प्रति घृणा भाव से भी शक्तिशाली था। मैं यह बात किसी को भी नहीं बता सकता था और इस कारण मैं न कभी अपने आपको माफ़ कर सका और न ही मरियम को।

लेकिन उस समय उसकी ओर देखते हुए मुझे आश्चर्य हुआ कि मुझे न किसी प्रकार की घृणा हो रही थी, न मेरे मन में किसी प्रकार का द्वेष था। सच कहूं, तो ऐसा कुछ महसूस नहीं हो रहा था, जैसा कि पहले हुआ करता था।

मैं खुलकर, अपनी आवाज़ का पूरा आनन्द लेता हुआ गा रहा था। अपने गले पर मेरा पूरा नियंत्रण था और सभी स्वर बिना विशेष दबाव या तनाव के आरोह-अवरोह के सभी स्तरों का सटीक स्पर्श करते हुए निरन्तर ऊंचे उठते जा रहे थे। श्रोताओं की तालियों की तड़तड़ाहट के बीच मैंने सैमूर के पास जाकर उससे टोलियाफ़ेरी के "प्रेमोत्सव" की धुन निकालने को कहा। पर उसकी मुख-मुद्रा से मैं समझ गया कि वह धुन उसे याद नहीं रही है। और यह बात स्वाभाविक ही थी, क्योंकि पिछली बार मैंने उसकी संगत में यह गीत दो साल पहले गाया था। तब से मुझे उसे सुनाने की बिलकुल इच्छा नहीं हुई

थी। मैंने दो बार उसका रिहर्सल किया था, दूसरी बार मरियम के निर्देशन में। उसने जब उसे पहली बार सुना था, तो उसे बिलकुल भी अच्छा नहीं लगा था। उसने कहा था कि मैं ग़लत ढंग से गाता हूं, ऊंचा स्वर उठाने की कोशिश में गले में से उमड़ निकलनेवाले मंद्र स्वर के प्रवाह को बलात रोके रहता हूं। अगर मैं इस तरह स्वर-तंत्रियों पर ज़ोर देता रहा, तो स्वर शायद ऊंचा उठ जाये, पर उसकी गहराई हमेशा के लिए जाती रहेगी। उसने तब तक मेरा पीछा नहीं छोड़ा, जब तक कि मैं उसके अनुसार अपनी स्वाभाविक टिम्बर में न गाने लगा।

सैमूर ने सिर हिलाकर मना किया, पर धुन छेड़ ही दी। यह शायद उस लय का मुझ पर प्रभाव था, जिसे मैंने अरसे से नहीं सुना था। धुन के छेड़ते ही मुझे लगा कि मेरे पूरे शरीर में एक मधुर तरंग दौड़ गयी है और मैं पूर्णतः उस सुखानुभूति में लीन हो गया हूं। शुरू के शब्द मैंने फुसफुसाकर कहे, हालांकि मेरा ऐसा इरादा नहीं था, यह अपने आप ही हो गया। मैंने फुसफुसाकर कहा कि आज मेरे जीवन का सबसे ज़्यादा ख़ुशी का दिन है, ऐसा दिन, जो इनसान को ही नसीब होता है, क्योंकि ऐसा सुख न पैसे से हासिल हो सकता है, न ताक़त से, न शब्दों से, क्योंकि उस आनन्दमय त्योहार से बढ़कर आनन्दमय और कोई त्योहार हो ही नहीं सकता, जिसका यशोगान करने के लिए लोगों ने यह गीत रचा है...

कंसर्ट रात तक चलता रहा और उसके बाद भी लोग हमें नहीं जाने देना चाहते थे। हम बड़ी मुश्किल से निकलकर रवाना हो पाये। कामरेड तग़ीयेव बहुत चिन्तित आदमी का नक़ाब डाले हुए था। वह कई बार डाइरेक्टर के दफ़्तर में हमारा शाम का कंसर्ट कैंसिल करने के लिए फ़ोन करने गया था। लेकिन सब देख रहे थे कि वह बहुत ही ख़ुश था। उस शाम हम सब का मूड बहुत ही अच्छा था। मुझे लगा कि उस भवन के सभी लोगों ने, बावरचियों, ड्राइवरों ने, सभी ने बारी-बारी से आकर हमसे हाथ मिलाया और हर प्रकार के उत्साहवर्धक शब्द कहे। मरियम ने भी आकर मुझसे हाथ मिलाया और फ़ौरन चली गयी। मैं देख भी नहीं पाया कि वह किधर गयी, क्योंकि उसी क्षण कामरेड तग़ीयेव निकोलाई फ़्योदोरोविच और उनकी पत्नी को लिये मेरे पास आ पहुंचा और हमारा उनसे परिचय कराने लगा।

सच कहूं, तो हमने ख़ुद ही एक दूसरे को अपना परिचय दिया, क्योंकि इससे पहले कि कामरेड तग़ीयेव मुंह खोल पाता निकोलाई फ़्योदोरोविच की पत्नी ने मेरा चुम्बन ले लिया, जबकि वे खड़े खिली आंखों से मुझे देखते हुए बार-बार यही कहते रहे: "शाबाश, कमाल कर दिया! सचमुच कमाल कर दिया! इतना अच्छा गायक आख़िर था कहां अब तक?!"

मरियम कहीं नज़र ही नहीं आ रही थी। सैमूर बीच-बीच में बड़े ध्यान से मेरी ओर देख रहा था कि मैं कहीं कोई ऐसी-वैसी हरकत तो नहीं कर बैठता हूं और वह बस में बैठने के बाद ही शान्त हुआ।

बस में बैठने के बाद कामरेड तग़ीयेव ने हमें बताया कि हमने सब पर बहुत ही अच्छा प्रभाव डाला है। और अब हमें बस यही चाहिए कि हम घमण्डी न बनें और निकट भविष्य में होनेवाले सुखद परिवर्त्तनों की धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करें, क्योंकि अब समय के साथ-साथ हमारी ख्याति फैलती चली जायेगी। आदिल मेरे पास बैठा था और जब तक कामरेड तग़ीयेव बोलता रहा, वह उसकी बात मुंह बाये और आंखों में चमक लिये सुनता रहा। हमारी बस चांदनी में नहायी सड़क पर चलती रही और मेरे दोस्त जल्दी ही ऊंघने लगे। आदिल भी मेरे कंधे पर सिर टिकाकर सो गया। इससे मुझे उन दिनों की याद हो आयी, जब हमारा आर्केस्ट्रा कृषि क्लब में बजाया करता था। उन दिनों हम लगभग रोज़ाना शहर से अस्सी से डेढ़ सौ किलोमीटर दूर तक की जगहों का सफ़र किया करते थे। कभी-कभी तो डेढ़ घंटे का कंसर्ट देने के लिए हमे क़रीब-क़रीब पूरा दिन ही बस में हचकोले खाने पड़ते थे। तब तक मैं घर छोड़ चुका था और कहीं पढ़ भी नहीं रहा था। मैं कह नहीं सकता कि हम वहां और कितने दिन काम करते रहते, अगर मेरी आवाज़ न जाती रहती। मैं अपनी आवाज़ पूरी तरह खो बैठा था। तब सैमूर ने क्लब के डाइरेक्टर से जाकर कहा कि हम काम छोड़कर जा रहे हैं। हम सब वहां मौजूद थे। सैमूर ग़ुस्से के मारे कांप रहा था। हमसे दो सप्ताह और काम करते रहने का हठ करने-वाले डाइरेक्टर पर उसने चिल्लाकर कहा कि उनके क्लब की कंजूसी और नीचता के कारण एक आदमी अपनी सुन्दर आवाज़ गंवा बैठा है। सैमूर ने जीवन में पहली बार कोई बात मज़ाक़ किये बिना कही थी और डाइरेक्टर पर दावा करने की धमकी भी दी थी। सैमूर और

आदिल मुझे गले के रोगों के एक अच्छे विशेषज्ञ के पास ले गये। उसने मेरी जांच करके कहा कि मैं अपनी आवाज मानसिक तनाव के कारण खो बैठा हूं। वह मुझे तसल्ली दिलाने लगा, लेकिन तब तक मैं हर बात के प्रति उदासीन हो चुका था। विशेषज्ञ ने मुझे एक्युपंक्चर का कोर्स लेने की सलाह दी। अगर सैमूर और आदिल न होते, तो मैं किसी क़ीमत पर पूरा इलाज नहीं करवाता, क्योंकि मुझे एक बार में आठ-दस कंबख़्त सुइयां चुभवाने में कोई तुक नहीं नजर आता था। वे दोनों हर बार मुझे डाक्टर के पास ले जाते थे। दो महीने में मेरी आवाज़ बिलकुल ठीक हो गयी। लेकिन उसके बाद कृषि क्लब में हमने फिर कभी क़दम न रखा।

निकोलाई फ्योदोरोविच और उनकी पत्नी ने पूरे एक सप्ताह तक हमारे एक भी कंसर्ट का नाग़ा नहीं किया। उनके जाने से पहलेवाली शाम को वे हमारे होटल में आये और बोले कि उन्होंने मेरे बारे में संस्कृति मंत्रालय में सब बातें पक्की तौर पर तय कर ली हैं। एक महीने बाद ही हंगरी में एक संगीत उत्सव होनेवाला था, जिसमें मुझे भाग लेना था। मैं फौरन नहीं समझ पाया कि फ़िलहाल केवल मेरे बारे में बात हो रही है। निकोलाई फ्योदोरोविच ने कहा कि मुझे दो-तीन दिन बाद मास्को जाना होगा, जहां एक अनुभवी संगीत-निर्देशक की देख-रेख में एक महीने तक रहकर अपना कार्यक्रम तैयार करना होगा। मुझे शुरू में बड़ा अटपटा महसूस हुआ, पर बाद में जब पता चला कि मेरे दोस्त और कामरेड तग़ीयेव भी इस बात से प्रसन्न हैं, तब मैं शान्त हो गया। एक कारण और भी था – निकोलाई फ्योदोरोविच ने हमें आश्वासन दिया था कि वे याल्ता के बाद के हमारे टूर के सभी कंसर्टों को कैंसिल करने से फ़िलारमोनी के लिए उत्पन्न होनेवाली समस्याओं का इस तरह समाधान करेंगे कि उससे हमारे आर्केस्ट्रा को किसी प्रकार की आर्थिक हानि नहीं होगी।

उस रात मुझे काफ़ी देर तक नींद न आ सकी।

मेरी नींद हमेशा की तरह जल्दी खुल गयी। घड़ी पर नजर डालने की भी कोई ज़रूरत नहीं थी – पांच बजने में दस मिनट थे। जैसे मेरे शरीर में ही चाबीवाली घड़ी हो, जो अनन्त काल तक चलती रह सकती हो। ऐसा मेरे साथ बचपन से ही हो रहा था। मैं रात को चाहे जितनी देर से क्यों न सोऊं, मेरी नींद पौ फटते ही खुल जाती है।

इससे मुझे किसी प्रकार का सुख नहीं मिलता, क्योंकि उस समय मेरे मन में बहुत ही बुरे विचार आते हैं। वैसे उस दिन शिकायत का कोई कारण न था, उनींदी हालत में ही मुझे लग रहा था कि मेरा मूड अच्छा है और नींद पूरी तरह खुल जाने पर तो लगा कि मैं उसे अच्छा भी मान सकता हूं।

मैं उठकर खुली खिड़की के पास गया। सुखद प्रभात की अनुभूति मुझे उदय होते सूरज की किरणों के साथ शनैः शनैः हुई, जो समुद्र की शान्त सतह, निर्जन तट और पुष्पों व स्वच्छता की गंध से सिक्त पवन को अरुणाभ कर रहा था।

आदिल सो रहा था। वह आम तौर पर नींद में कुछ न कुछ बड़बड़ाता रहता था। पर आज उसके शान्त मुख को देखकर लग रहा था कि उसने ज़रूर कोई सुखद सपना देखा है। शायद सपने में उसकी मुलाक़ात उस "पीली ड्रेसवाली" से हुई होगी और इस समय वे 'ओरीएंडा' होटल की खिड़कियों तले, समुद्र के किनारे घूम रहे होंगे या कास्पियन सागर के तट पर उसके सुप्रसिद्ध मकान की पहली मंज़िल पर बैठे हुए नाश्ता कर रहे होंगे। आर्केस्ट्रा के सभी वादकों को मालूम था कि आदिल भविष्य में समुद्र-तट पर एक विशाल भवन बनाना चाहता है। आदिल के तैयार किये डिज़ाइन के अनुसार उस भवन की दूसरी मंज़िल पर उसके निकट व प्रिय लोगों को रखा जानेवाला था। पहली मंज़िल पर एक लम्बा-चौड़ा हॉल बनाया जाना था, जिसमें एक भी पार्टीशन नहीं रखा जाना था। उसमें एक लम्बी मेज पर दूसरी मंज़िल के सभी निवासी रोज़ाना सुबह नाश्ते के लिए बैठा करेंगे। आदिल पहली मंज़िल पर नाश्ता करने को विशेष महत्त्व देता था। उसका कहना था कि एक मेज़ पर सभी प्रिय लोगों को एक साथ बैठे देखने और उनके अलावा किसी और का घिनौना चेहरा न नज़र आने से सुखद और कुछ हो ही नहीं सकता।

मैंने चुपचाप कपड़े पहने और कमरे से निकल गया।

मैं तट के छोर तक गया और जेटी से मुड़कर शान्त, ठण्डे रास्तों में घूमने लगा।

दो घंटे लगातार पैदल चलते रहने के बाद बोटानिकल गार्डेन पहुंचने तक मुझे जरा भी थकान नहीं महसूस हुई।

दोनों ओर सरू वृक्ष लगी वीथि के दूसरे छोर पर, एक बड़े से

पौधा-घर के दरवाज़े के पास एक बैंच पर नीला ओवरआल पहने और स्ट्राहैट लगाये एक अधेड़ उम्र का आदमी बैठा था। फाटक में मेरे घुसते ही उसकी नज़र मुझ पर पड़ गयी थी, पर उसकी आंखों में मुझे न वैमनस्य अनुभव हुआ था, न चौकन्नापन, जो सुबह-सवेरे इतने महत्त्वपूर्ण स्थान में बिना पास के आ पहुंचनेवाले लोगों के प्रति पूर्णतः स्वाभाविक होता है।

उसने आगे भी मेरे साथ उस सुखद प्रभात के नियमानुसार व्यवहार किया, मुझे देखकर उठा और सौजन्यता से मेरा अभिवादन किया। और उसने जो सवाल मुझसे किया, वह मुझे एक रहस्यमय संकेत-शब्द जैसा लगा।

"आप कैक्टस लेने आये हैं?"

"नहीं। मैं सिर्फ़ उन्हें एक नज़र देखना चाहता हूं।"

उसको सोचने-विचारने में कुछ क्षण लगे और इस दौरान वह अपनी निर्मल हरी आंखों से मुझे देखता रहा, फिर उसने निःशब्द स्वीकृति में सिर हिला दिया। वह बेंच पर बैठा रहा और मैं हर आकार-प्रकार के कैक्टसों से भरे पौधा-घर में घुस गया। उस सुबह से पहले मैंने कभी सोचा भी न था कि मोटे-मोटे और जीवनदायी रस से परिपूर्ण इन कांटों के अवलोकन में भी कभी इतने आनन्द की अनुभूति हो सकती है।

मैं मादक सुगंध से मिश्रित नम हवा में सांस लेता, छोटी-छोटी पट्टियों पर लिखी कैक्टसों के उद्भव और उनके व्यक्तिगत संक्षिप्त इतिहास सम्बन्धी सूचनाओं को पढ़ने के लिए बीच-बीच में रुकता हुआ उनकी कतारों के बीच करीब एक घंटा घूमता रहा। मैंने उनके सख्त तनों को छूकर देखा, कुछ चमकदार थे, कुछ मखमली, उनके भरे-भरे फूलों की मन-ही-मन सराहना की और इस दौरान एक बार भी मुझे कोई कांटा नहीं चुभा।

"धन्यवाद। मुझे यहां आकर बहुत अच्छा लगा," मैंने पौधा-घर से निकलते समय उस व्यक्ति से कहा।

उसने मुझसे कुछ नहीं पूछा, न मेरे अनुभवों के और न ही मेरे आने के उद्देश्य के बारे में। उसने प्रभात के किसी भी नियम का उल्लंघन किये बिना मुझसे हाथ मिलाया और मुस्कराकर आगे भी आते रहने का निमंत्रण दिया।

मैं नौ बजे विश्राम-गृह पहुंचा। मैंने कमरे के दरवाज़े पर दस्तक दी, पर किसी ने जवाब नहीं दिया। तब मैं उतरकर पहली मंज़िल पर खाना खाने के कमरे में गया। निकोलाई फ़्योदोरोविच दरवाज़े से दूसरी मेज़ पर अपनी पत्नी के साथ बैठे थे। शायद मेरे आने पर उन्हें आश्चर्य हो रहा था, लेकिन उन्होंने अपने चेहरों से इसे ज़ाहिर नहीं होने दिया। लेकिन एक बात, जिसे पहचानने में मैं कभी ग़लती नहीं करता, वह यह थी कि मेरे आने से उन्हें बहुत ख़ुशी हुई थी। कुछ भी हो, बहुत अच्छा लगता है, जब आपको देखकर किसी को ख़ुशी हो। मैं कभी इसका आदी नहीं हो सकता। मुझे सचमुच खाने की इच्छा नहीं हो रही थी, पर मुझे उनके साथ नाश्ता करना ही पड़ा, हालांकि मैंने इसके लिए बहुत मना किया। हमने इधर-उधर की बहुत-सी बातें कीं। इस बीच मैं हिम्मत बटोरता रहा। सबसे मुश्किल काम होता है कि बात कहां से शुरू की जाये, ख़ास तौर से जब किसी भले आदमी को कोई अप्रिय बात कहनी हो। अन्त में मुझे उपयुक्त अवसर मिल गया, वैसे वह कोई अधिक उपयुक्त भी नहीं कहा जा सकता। उनकी पत्नी उठकर सामान लगाने अपने कमरे में चली गयी। मैंने कहा:

"आप बस, मेहरबानी करके, मेरी बात का ग़लत मतलब न लगाइये..." और चुप हो गया।

निकोलाई फ़्योदोरोविच की भौंहें तन गयीं और वे सुनने को तैयार हो गये, पर मैं आगे बोल ही न पाया।

"कहो, कहो," वे बोले। "तुम चिन्ता मत करो, मैं तुम्हारी बात को ठीक से समझने की कोशिश करूंगा। क्या हुआ?"

"कुछ नहीं। कल से कोई ख़ास बात नहीं हुई। बस मुझे यही डर है कि कहीं आप मुझे ढीठ या अकृतज्ञ न समझ लें... आपने मेरे भले की ख़ातिर किसी को फ़ोन किया, मेरी सिफ़ारिश की, और मैं हूं कि..."

"तुम इसको लेकर परेशान न होओ," उन्होंने मुझे फ़ौरन टोक दिया। "तुमने जाने का इरादा छोड़ दिया है। क्यों?"

"मैं सचमुच जाना चाहता हूं," मैंने सच्ची बात कही। "पर जा नहीं सकता। मैंने बहुत सोचा और इस नतीजे पर पहुंचा कि सितम्बर तक मैं नहीं जा सकता।"

"यानी तुम लोगों का टूर खत्म होने तक?" निकोलाई फ्योदोरोविच मुस्कराये। उन्होंने मुझ पर नज़र डाली। इतनी जल्दी उनकी मुखमुद्रा बदलते देख मुझे आश्चर्य हुआ। क्षण भर पहले वह सहृदय और अन्यमनस्क थी और अब कठोर व सतर्क हो गयी थी। "क्या तुम्हारे दोस्त खिलाफ़ हैं तुम्हारे जाने के?"

"नही। बल्कि वे सब तो खुश हैं!"

"अजीब हो!" उन्होंने कहा और हंस पड़े। "मैं दाऊद के सामने तुम्हें सारी बात समझा चुका हूं कि तुम्हारे जाने से उन्हें एक भी कौड़ी का नुक़सान नही होगा।"

"बात पैसों की नही है," मैंने कहा। "बात यह है कि मैं उन्हें बहुत अरसे से जानता हूं, हम साथ काम करते हैं... कहने का मतलब है, वे मेरे दोस्त हैं..."

मैंने उन पर नज़र डाली और चुप हो गया। मैंने मन में सोचा: 'आप क्या इतना भी नही समझते कि मैं आपसे इसके अलावा और कुछ नही कह सकता? क्या आप सचमुच यह नहीं समझते कि बात पैसों की नही है? आखिर मैं आपसे यह तो कहूंगा नहीं कि अगर मैं चला जाऊं, तो टूर रद्द हो जायेगा, सारा खेल खत्म हो जायेगा, और मेरे दोस्त अपने आपको फिर दूसरे दर्जे के संगीतवादक समझने लगेंगे। वे अभी यह नहीं जानते कि उन्हें ऐसा महसूस होने लगेगा। पर मैं यह जानता हूं क्योंकि मुझे इस का काफ़ी अनुभव है। इसके अलावा मैं यह भी जानता हूं कि अगर मैं चला जाता हूं, तो फिर आज सुबह जैसा मेरा मूड कभी नहीं होगा।'

"तुम बेकार सोचते हो," निकोलाई फ्योदोरोविच ने कहा, "कि मैं परख न पाया हूं कि तुम्हारे दोस्त कितने अच्छे संगीतवादक हैं। और यह अच्छी बात है कि तुम लोग एक दूसरे का साथ देते हो," न जाने क्यों वे मुस्करा पड़े। "मैं एक और बात तुमसे यह कहना चाहता था कि तुम कभी न पीना, न वोद्का, न वाइन और न बीयर। खास तौर से सुबह। तुम्हें अपने गले का बहुत ध्यान रखना चाहिए। यह बहुत बड़ी देन है। मुझे भी पीना बिलकुल मना है।" उन्होंने बेट्रेस को रोककर उससे शैम्पेन की एक बोतल लाने को कहा। "आज की सुबह को छोड़कर! हम दोनों अभी तुम्हारे और तुम्हारे उज्ज्वल भविष्य के नाम पर पियेंगे!"

हम काफ़ी देर साथ बैठे रहे। खाना खाने के कमरे में हमारे सिवा कोई नहीं रहा था। हमें वहां से जाने की इच्छा नहीं हो रही थी।

मैंने जैसे ही अपने कमरे में क़दम रखा, आदिल को मुंह टेढ़ा किया देख फ़ौरन देहलीज़ पर ही रुक गया। वह विषण्ण मुद्रा में मेज़ पर निश्चल बैठा था, लगता था जैसे शून्य में अपनी दृष्टि जमाये हुए है।

"क्या हो गया, श्रान्तमना?" मैंने अपने स्वर में स्नेह और मित्र भाव का अधिक से अधिक पुट देते हुए कहा।

उसकी दृष्टि मुझ पर क्षण भर टिकी होगी, पर इससे उसने मुझे साफ़-साफ़ जता दिया कि मैं कोई तुच्छ कीड़ा हूं। मुझे यह अच्छा नहीं लगा। मैं उसके पास से निकलकर सोने के कमरे में चला गया। कपड़े उतारते हुए मैं अपने दोस्त के खराब मूड के कारण का पता लगाने की कोशिश करने लगा।

"क्या सैक्सोफ़ोन चोरी हो गया है?" मैंने ज़ोर से अपने आप से पूछा और तुरन्त जवाब दिया: "अरे, नही, यह पड़ा है मेरी अभी-अभी इस्तरी की हुई क़मीज़ पर... शायद उस बदतमीज़ सैमूर ने किसी से महिलाओं के सामने कह दिया होगा कि जाओ, लपककर सिगरेट तो ले आओ।" जहां तक मुझे मालूम था, आदिल से ऐसी बात बर्दाश्त नहीं हो सकती थी।

"तुम कहां मारे मारे फिरते रहते हो, शैतान के बच्चे?" उसने अंदर आकर कहा। "लो, यह तो पसर ही गया! तुम जिंदगी भर रहे स्वार्थी ही!"

मैं आदिल से यह नहीं पूछ सका कि वह मुझे स्वार्थी क्यों मानता है, क्योंकि तभी कामरेड तग़ीयेव और सैमूर आ पहुंचे। दाऊद बालायेविच किसी कारण बहुत चिन्तित था। जबकि सैमूर के होंठों पर कटु मुस्कान खेल रही थी।

"लेटे रहो, लेटे रहो," सैमूर ने बड़ी शिष्टता से कहा, हालांकि मेरा उठने का कोई इरादा नहीं था। "हम बस एक मिनट के लिए तुम्हें निहारने को आये थे, अभी जाते हैं, परेशानी के लिए माफ़ी

"चाहते हैं!" वह चुप तो हो गया, पर उसकी जबान से चूते जहर के कारण लकड़ी के फ़र्श पर एक छोटा-सा डबरा बन गया।

कामरेड तग़ीयेव मुझसे "आप" कहके बहुत शिष्टतापूर्वक बात कर रहा था। उसने कहा कि वह सदा वयस्कों के अधिकारों का आदर करता आया है और उसका हनन उसने कभी नहीं किया है, पर दल में अनुशासन और नैतिकता के कुछ बुनियादी नियम होते हैं, जिनकी अवहेलना करने का अधिकार किसी को नहीं होता। अगर कोई सारी रात बाहर गुज़ारने चला जाता है, तो यह उसका निजी मामला है, पर उसे इस बारे में पहले से जरूर बता देना चाहिए।

"मैं रात भर बाहर रहा ही नहीं था!" बिस्तर पर लेटे लेटे अपनी सफ़ाई देने की मुझे आदत नहीं थी, पर मैंने यह काम काफ़ी सन्तोषजनक ढंग से किया। "इस आदमी ने," मैंने आदिल की ओर उंगली उठाकर कहा, "आपको ग़लतफ़हमी में डाल दिया। मेरी नींद जल्दी खुल गयी थी और मैं उठकर घूमने चला गया था।"

सबने एक दूसरे की तरफ़ देखा और फिर खिसिया गये आदिल को घूरने लगे।

"तो दरबान ने भी तुम्हें नहीं देखा?" तैमूर ने किंचित् सन्देहजनक स्वर में पूछा।

"वह भी सो रही थी... जैसे आदिल।"

"अजीब बात है," कामरेड तग़ीयेव ने कहा। "तुम्हारे अलावा सभी सो रहे थे।" मैंने देखा कि वह फिर मुझसे "तुम" कहकर बोल रहा था और मैं समझ गया कि मुझे क्षमा कर दिया गया है।

"दाऊद बालायेविच ने सारा शहर छान मारा तुम्हें ढूंढ़ने के लिए," आदिल ने उनके चले जाने के बाद कहा, "बहुत घबरा गया था वह।"

मेरी नींद उड़ गयी, मैं उठ खड़ा हुआ और उसके पीछे बैठक में चला गया।

"अच्छा, अब मुझे समझाओ कि तुमने मुझे स्वार्थी क्यों कहा?"

"तो फिर तुम कौन हो?" उसने यह बात बड़ी चतुराई से ऐसे कही कि वह प्रश्न जैसी नहीं लगी और मैं अनायास मन-ही-मन उसकी सराहना कर उठा। "पूरा एक हफ़्ता हो गया, पर तुम अभी तक अपनी बहन को तार ही नहीं दे पा रहे हो।"

यह आदिल की कोरी लफ़्फ़ाज़ी थी, जिस पर ध्यान देना जरूरी नहीं था। पर अपनी स्वाभाविक विशालहृदयता के कारण मैंने उसे बता दिया कि याल्ता से तार भेजने में कोई तुक नहीं थी और यह मैं पत्र पर लगी डाक की मोहर से ही समझ गया था। मेरी बहन लेना केवल एक सप्ताह के लिए त्बिलिसी आयी थी और जब हमने चाचा का पत्र पढ़ा था, उससे दो दिन पहले ही वह इर्कुत्स्क लौट चुकी थी। पता नहीं यह पूरी तरह सच था या नहीं, लेकिन दलील कायल करनेवाली लगी।

"ठीक है," आदिल ने उदासीन स्वर में कहा। "ख़ैर, यह तुम्हारा निजी मामला है। अच्छा, मैं चलता हूं। सुबह से मैंने कुछ नहीं खाया है।"

उसके जाने के बाद मुझे लगा कि सुबह जो सुखद उत्साह मुझे अनुभव हो रहा था, वह लुप्त हो चुका है। मुझ पर असहजता और अकेलेपन के भाव हावी हो गये, जिन से मैं अरसे से मुक्त रहा था। मैं रेस्तरां में गया, पर आदिल वहां नहीं मिला और फिर मैं अपने कमरे में लौट आया। मैं काफ़ी देर तक खुले हुए पियानो के पास निश्चल बैठा रहा और फिर बालकनी में चला गया। तट पर लोगों की रंग-बिरंगी भीड़ उमड़ी पड़ रही थी। उसे देखते हुए अचानक मुझे लगा कि वे भिन्न-भिन्न व्यक्ति नहीं हैं, बल्कि एक दूसरे से भली-भांति परिचित हैं और सभी आपस में जिंदादिली से बातें कर रहे हैं। केवल मैं उन जैसा नहीं हूं।

जब आदिल आया, तो मैं मेज़ पर बैठा एक और बार पत्र लिखने की कोशिश कर रहा था। उसने बिना कुछ बोले फ़र्श पर बिखरे हुए काग़ज़ के टुकड़े उठाये, उन्हें रद्दी की टोकरी में फेंक आया और फिर आकर मेरे सामने बैठ गया।

"आदरणीय चाचा जी..." आदिल बोला। "नहीं, यह ठीक नहीं लगता..."

मैंने सोचा कि वह मज़ाक़ कर रहा है, पर उस पर नज़र डालते ही मैं समझ गया कि ऐसी बात नहीं है। हालांकि वह मुस्करा रहा है, पर मुझ पर टिकी उसकी आंखों में गम्भीरता झलक रही है।

"लिखो!" वह बोला। "'आदरणीय चाचा और चाची! मैं आप दोनों को बहुत प्यार करता हूं, इसलिए अकसर आप लोगों को याद

करता हूं।' लिख लिया? आगे लिखो: 'मुझे बहुत बुरा लगता है कि हम लोग अभी तक अलग-अलग शहरों में रह रहे हैं और इसी कारण एक दूसरे से बहुत ही कम मिल पाते हैं। यह ठीक नहीं है। सगों को साथ रहना चाहिए। आपसे ज्यादा सगा मेरे लिए कोई और नहीं है। मेरे ख़याल से अब समय आ गया है कि हम बाकू में अपने पुराने फ़्लैट में लौट जायें...'" वह बोल रहा था और मैं लिखता जा रहा था, लेकिन मुझे हर वाक्य बचकाना और भोंडा लग रहा था। आखिर उसने लिखवाना बंद कर दिया और चुप हो गया। मैंने लिखे हुए को दोबारा पढ़ा। लेकिन अजीब बात थी कि मुझे उसे फाड़ फेंकने की इच्छा बिलकुल नहीं हुई। मैंने जब मेज़ के पास जाकर उसकी दराज़ में से एक लिफ़ाफ़ा निकाला, तो वह चुप बैठा मुझे देखता रहा।

"एक मिनट," मैं लिफ़ाफ़ा बंद करने ही जा रहा था कि वह बोल उठा। "तुमने अपने पत्र में मेरी तरफ़ से नमस्ते लिखी या नहीं? क्यों, भूल गये न? अब तो विश्वास हो गया न कि तुम पक्के स्वार्थी हो?"

मैं अच्छी तरह जानता था कि वह मज़ाक़ कर रहा है, पर मुझे उसके चेहरे पर मुस्कान खिलती देखकर बहुत अच्छा लगा।

पाठकों से

रादुगा प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन के बारे में आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये:

रादुगा प्रकाशन,
17, ज़ूबोव्स्की बुल्वार,
मास्को, सोवियत संघ